प्रथमा-साहित्य-दर्पण

अर्थात्

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा
के साहित्य विषय
के प्रश्नोत्तर

(संवत् १९७१—१९८५ वि०)

सम्पादक

पण्डित बाबूराम बिन्थरिया, साहित्य-रत्न
(लेखक—हिन्दी-काव्य में नवरस)

प्रकाशक

साहित्य-मन्दिर, दारागंज, प्रयाग

प्रथम संस्करण | आषाढ़ सं० १९८६ | मूल्य १॥)

दो शब्द

हमने देखा है कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के परीक्षार्थियों को साहित्य विषय की तैयारी करने में प्रायः बड़ी असुविधा होती है। एक तो सभी जगह साहित्य के पंडित मिलते नहीं, दूसरे यदि कहीं मिले भी तो उनके पास जाकर उनसे कुछ सीखना—कुछ जानकारी प्राप्त करना—तो और भी दुस्साध्य है। यदि किसी के पास इतना समय नहीं कि वह साहित्य के विद्यार्थियों को कुछ बताये, तो किसी के समय का इतना अधिक मूल्य होना सम्भव है कि विद्यार्थी उससे यथेष्ट लाभ ही न उठा सके। इसलिए इस बात की बड़ी आवश्यकता थी कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-परीक्षाओं के पुराने प्रश्न-पत्रों में जो साहित्य है, साहित्यके विद्यार्थी कम से कम उससे तो परिचित हो जायँ। इसी अभाव का अनुभव करके हमने इस कार्य को अपने हाथ में लेना उचित समझा। फलतः प्रथमा परीक्षा के प्रायः सभी प्रश्न-पत्रों के उत्तरों की यह पुस्तक आपके सामने है। जिन वर्षों के प्रश्न-पत्र सम्मेलन-कार्यालय में अप्राप्य थे, विवश होकर उन्हें छोड़ ही देना पड़ा। आगे कभी यदि वे मिल गये तो अगले संस्करण में उन्हें भी इसमें सम्मिलित कर दिया जायगा।

परीक्षा-प्रश्न-पत्रों के उत्तरकार साहित्य-रत्न पंडित बाबूरामजी बित्थरिया साहित्य के पंडित हैं। उन्होंने इसको तैयार करने में जैसा श्रम किया है, वह आपके सामने है। हमें आशा है कि सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के विद्यार्थी उनके इस श्रम से यथेष्ट लाभ उठायेंगे।

—प्रकाशक

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-परीक्षाओं
के
प्रश्नपत्र और उनका उत्तर
प्रथमा सं० १९७१-७२
पठित पद्य १
समय ३ घंटे

[परीक्षक—पण्डित शुकदेवविहारी मिश्र, बी० ए०]

१ महर्षि विश्वामित्र जब पृथ्वी का दान लेने गये थे, एवं जब साङ्गता की स्वर्णमुद्रा वसूल करने गये थे, तब प्रतिग्रह प्राप्ति की आशा रहते हुए भी उन्होंने महाराज हरिश्चन्द्र से क्रोध प्रकाश क्यों किया? इससे उनका मुख्य अभिप्राय क्या था और वह अभीष्ट क्रोध-प्रकाश द्वारा क्योंकर सिद्ध हो सकता था? ६

२ निम्नलिखित प्रबन्धों का सरल हिन्दी में अनुवाद कीजियेः—

(अ) अहा! स्थिरता किसी को भी नहीं है। जो सूर्य उदय होते ही पद्मिनीवल्लभ और लौकिक वैदिक दोनों कर्मों का प्रवर्त्तक था, जो गगनांगन का दीपक और काल-सर्प का शिखामणि था, वही इस समय परकटे गिद्ध की भाँति अपना सब तेज गवाँकर देखो समुद्र में गिरा चाहता है।

(इ) सूरज धूम बिना की चिता सोऊ अन्त मैं लै जल माँझ बहाई।
बोलैं घने तरु बैठि बिहंगम रोवत सो मनु लाग लोगाई॥

धूम अँध्यार कपाल निसाकर हाड़ नछत्र लहू सी ललाई।
आनँद हेतु निसाचर के यह भूमि मसान कै राति बनाई॥१०

३ भारतेन्दुजी ने सत्यहरिश्चन्द्र में डरावने और घृणा उत्पन्न करनेवाले वर्णनों की भी विशेषता क्यों रक्खी है? ४

४ नाटक का प्रभाव रोहिताश्व के पुनर्जीवित होने से अच्छा स्थिर रहा, अथवा उसके न जीने और शैव्या तथा हरिश्चन्द्र के भी मर जाने से ठीक पड़ता? इस प्रश्न का सतर्क उत्तर दीजिये। ११

५ गौरि शम्भु तन परिहरै अचल मेरु चल होय।
बोल्यो बोल हमीर को चलन हार नहिं सोय॥

इस दोहे का अर्थ करिये और इसका कारण लिखिये कि कवि ने पार्वती और शम्भु का वियोग असम्भव क्यों माना है? ६

६ संकट सुरेस को यथारथ निरखि देह
दीन्ही है दधीचि परस्वारथ प्रमान कै।
करुना कपोत की कहत सिविराज दये
काटि काटि अंगनि तुला मैं तौल दान कै।
दीन्हों सीस जगत जसीले जगदेव आजु
छत्री मैं हमीर कलि कीरति अमान कै।
प्रकट अकारथ मरन सबही को हमैं
राखिबे सरन परस्वारथ प्रधान कै॥

उपर्युक्त छन्द के प्रथम दो पदों में वर्णित दधीच और शिवि की कथाओं के वर्णन प्रायः दस-दस पंक्तियों द्वारा कीजिये। कवि ने सबके मरण को अकारथ क्यों कहा है? १४

७ निम्नलिखित चरणों का सरल हिन्दी में अनुवाद कीजियेः—

भाग्यो सुलतान जान बचत न जानि बेगि
बलित बितुण्ड पै बिराजि बिलखाय कै।
जैसे लगे जंगल मैं ग्रीषम की आगि चलैं
भागि मृग महिष बराह बिललाय कै।

यहाँ "बिराजि" शब्द का उपयोग उचित है अथवा अनुचित? अपने उत्तर के कारण लिखिये और यह भी अनुमान कीजिये कि इस शब्द का प्रयोग क्यों हुआ? ६

८ कहै बीर चौहान हम्मीर हट्टी
सुनो साँच उज्जीर मल्हन्न येरे।
गढ़ा मण्डला आदि उज्जैन सारी
जिते कोट बंके तिते जानि मेरे॥
रहै साह राजी चहै बम्ब बाजी
कहौं एक ना एक सौ आठ फेरे।
पर्यो मीर पाछे धर्यो दण्ड डोला
दियो जात नाहीं कहौं पास तेरे॥

इस छन्द के तृतीय चरण में कवि ने बहुसंख्यक भाव की पुष्टि में एक सौ आठ की संख्या क्यों लिखी है? ३

९ एक यहै रनथम्भ को खम्भ अहै चहुवान अजों अरने को।
दण्ड भरै न हमीर हठी हर बार जुरै न मुरै मरने को॥

जिस छन्द के उपर्युक्त दो चरण हैं उसका नाम क्या है? उसका लक्षण भी लिखिये। इन पंक्तियों के आदि में कौन गुण प्रयुक्त हुआ है? उसका देवता और फल भी लिखिये। छन्द के गणप्रयोग में कोई दूषण देख पड़ता है? यदि हाँ तो कौन? उसकी दोषशान्ति कैसे हुई है? १६

१० कुँवर और उमराव बने बिगरे कछु नाहीं।
फूँक माहिं वै बनत फूँक ही सों मिटि जाहीं॥
पै दृढ़ कृषक समाज देश को साँचो गौरव।
नाश भये यक बार फेरि उपजन नहिं सम्भव॥
उपर्युक्त पंक्तियों का अर्थ लिखिये और यह बतलाइये कुँवर और उमराव फूँक से क्योंकर बनते और मिटते हैं? ७

११ निम्नलिखित चरणों में से किन-किन में यतिभंग-दूषण है और किस किस स्थान पर?
(क) मेरी लरिकाई की बैठक भूमि सोहावनि।
(ख) काया का हानि को ज्ञान हू होन न पावै।
(ग) मानत हो तर्क में पादरी तिहि चतुराई।
(घ) पास पहाड़ी ऊपर गिरिजाघर मन मोहै। ४

१२ या बिधि दीन दुखीन उबारन को अभिमानी।
त्रुटि हू वाको सबै धर्म की ओर झुकानी॥
उपर्युक्त द्वितीय चरण में कथित त्रुटियों के दो उदाहरण भारतवर्ष से दीजिये। ४

उत्तर

प्रथमा, संवत् १९७१-७२—पठित पद्य १

(१) निस्सन्देह विश्वामित्रजी को हरिश्चन्द्र से प्रतिग्रह प्राप्ति की आशा थी। किन्तु उनका मुख्य उद्देश्य प्रति-ग्रह-प्राप्ति न होकर केवल राजा को सत्य-भ्रष्ट करना ही

था। इस प्रकार क्रोध-प्रकाशन से महर्षि का यही अभिप्राय था कि राजा घबड़ाकर अपने लक्ष्य से हट जाय। और यह इसी प्रकार सिद्ध होना सम्भव था। क्योंकि एक क्रोधी ऋषि के क्रोध और उसके पूर्व प्रभावों का अनुचित ध्यान आते ही, तत्कालीन क्षत्रिय-पुङ्गवों का धैर्य विदा हो जाना एक साधारण सी बात थी। और जब धैर्य ही न रहेगा, तो कोई व्यक्ति भला अपने लक्ष्य पर किस प्रकार स्थिर रह सकता है? बस, इन्हीं बातों को लक्ष्य में रखकर ऋषि ने अकारण क्रोध प्रकाशित किया था।

(२) अ—देखिये, संसार के सभी पदार्थ नश्वर हैं। एक सूर्य्य ही को लीजिये, प्रातः निकलते ही उसे कमलिनी का स्वामी कहलाने का सौभाग्य प्राप्त है। वह लोगों को सांसारिक तथा धर्म्म-कार्यों में प्रवृत्त कराने का दावा भी रखता है। उसे लोग आकाश-मण्डप का दीपक, और काल-निर्माण का मुख्य हेतु समझते हैं। किन्तु वही इस समय (संध्या समय) अस्ताचल की ओर प्रयाण करता है सो ऐसा ज्ञात होता है कि मानों कोई विचारा गिद्ध पर कट जाने के कारण अशक्त होकर समुद्र में गिर रहा है।*

इ - यहाँ भी भारतेन्दुजी सूरज डूबने पर रात्रि होने का रूपक बांधते हैं:—सूर्य निर्धूम चिता है, जो अन्त में (नियमानुसार) जल में प्रवाहित कर दी गई है। घने वृक्षों पर

* सूर्य डूबते समय तेज-हीन हो जाता है और शनैः शनैः आकाश से नीचे की ओर उतरता या गिरता हुआ दिखाई देता है। लेखक ने उसकी इसी प्राकृतिक अवस्था का चित्र खींचा है।

बैठकर जो पक्षी बोल रहे हैं सो मानो (मृतक के कुटुम्बी) स्त्री-पुरुष रुदन कर रहे हैं। अंधकार ही धुआं है। चन्द्रमा कपाल है। तारागण अस्थियाँ हैं और जो सन्धिकालीन अरुणिमा है, वही मानो रक्त है। अतएव, निशाचरों के आनन्द मनाने के लिए यह सन्ध्याकाल मानो पूर्ण-सामिग्री-सहित स्मशान बना हुआ है।

(३) भारतेन्दुजी ने "सत्यहरिश्चन्द्र" नाटक में भयावह और घृणोत्पादक वर्णनों की प्रधानता रक्खी है। इसका कारण यह है कि ऐसी स्थिति का दिग्दर्शन होजाने पर राजा की दृढ़ता, सत्य-प्रेम और लोकप्रियता का अपूर्व चित्र लोगों के सम्मुख खिंच जाता है और उनके हृदयों पर उसका अक्षुण्ण साम्राज्य उपस्थित हो जाता है। इसके साथ ही उनकी पूर्ण सहानुभूति राजा के साथ हो जाती है। जो राजा सहस्रावधि दासदासियों के अपूर्व समारोह में रहता था, आज अपने सत्य को पालन करने के लिए निर्जन स्थल पर अकेला घूम रहा है! जो सदैव मृग-मद और कपूर-चूर के उबटने कराता था, आज वह मुर्दों के जलने की दुर्गन्ध की किञ्चितमात्र भी परवाह नहीं करता! क्या कोई साधारण आदमी ऐसी स्थिति में अपना प्रण पाल सकता था? इन विचार-तरङ्गों से तरङ्गित होकर लोग उसे अनुकरणीय मान-कर अपना पथ-प्रदर्शक समझने लगते हैं। अच्छे नाटकों का यह सर्वोपरि गुण है कि उसके नायक का चरित्राङ्कण इस कौशल से किया जाय कि लोगों के भाव उसके लिए वैसे ही हों जैसे ऊपर वर्णन किये गये हैं। अतएव, भारतेन्दुजी ने भी राजा को सच्चा नायक

सिद्ध करने ही के निमित्त यह सम्पूर्ण सामग्री जुटाई है।

(४) प्रत्येक नाटक में नाटककार किसी न किसी प्रधान उद्देश्य या तथ्य को प्रतिफलित करने का उद्योग करता है। भारतेन्दुजी ने भी इस धर्म-प्रधान नाटक में राजा को सत्य-पालन में दृढ़ सिद्ध किया है और प्राय: सभी स्थलों पर उसे पूर्ण धार्मिक बनाये रखने की चेष्टा की है। यदि ऐसे धार्मिक राजा के धर्म-सम्बन्धी वेदानुकूल कार्य करने पर भी उसका पुत्र जीवित न होता और रानी-सहित वह स्वयम् भी मरजाता तो सर्वसाधारण पर धर्म का कुछ अच्छा प्रभाव न पड़ता, प्रत्युत उससे उल्टी घृणा हो जाती। यदि कोई कहे कि फिर रोहिताश्व को मृतक बनाने ही से क्या लाभ था? तो इसका उत्तर यही है कि पुत्र के मरजाने पर भी वह धर्म में दृढ़ रहा और अपने सत्य से न टला, इससे तो उसकी दृढ़ता और सत्य-प्रियता और भी अधिक बढ़ जाती है। वास्तव में इसी उदाहरण से तो राजा का गौरव प्रमाणित होता है।

(५) चाहे शिव तथा पार्वतीजी का वियोग (जो असम्भव है) सम्भव हो जाय, चाहे अचल पर्वत भी अपना स्वभाव छोड़कर चलायमान होजायँ, किन्तु दृढ़-प्रतिज्ञ महाराणा हम्मीर अपने कहे हुए बचनों को कदापि नहीं टाल सकता।

शम्भु ने सीतारूप धारण कर लेने पर सती का परित्याग किया था, किन्तु उन्होंने पुन: गिरिराजकिशोरी होकर अनुपम तपस्या के द्वारा शिवजी को पाया। कहा जाता है कि उन्हें शिव ने अर्द्धांग में धारण किया

अतएव, उनको सदैव संयोग सुख रहता है। सम्भवतः कवि का लक्ष्य इसी पौराणिक गाथा की ओर है। इसके अतिरिक्त शिवा ने नारद के उकसाने पर शिव से जो मुण्ड-माल धारण करने का कारण पूछा था, उसका उत्तर शिव ने यही दिया था कि यह तुम्हारे विविध जन्मों में धारण किये शरीरों के मुंड हैं, मुझे तुम्हारा वियोग असह्य है अतएव इनको धारणकर संयोग-सुख पाता हूँ। यह सदैव संयोग-सम्बन्धी दूसरी बात हुई। इसी पौराणिक गाथा में आगे चलकर यह भी कहा गया है कि पार्वतीजी भी शिव से मंत्र सीखकर उन्हीं के सदृश अमर हुईं। जब यह बात है तब उनका वियोग कभी होना सम्भव है, ऐसी शङ्का ही नहीं उठती।

(६) दधीच की कथा—एक समय इन्द्रादिक सुरों को वृत्तासुर से बड़ा कष्ट पहुँचा। जब कोई उपाय न सूझा तो सुरेन्द्र ब्रह्माजी के पास दौड़ गया और उनका आदेश ग्रहणकर ब्राह्मण का वेष बना, दधीच के पास गया और भिक्षा में अभीष्ट वस्तु पाने के लिये उन्हें बचनबद्ध किया। जब उन्होंने "तथास्तु" कह दिया तो अपने वास्तविक रूप को प्रकटकर उनसे उनके जंघा की अस्थि माँगी। दधीच ने अपनी जंघा को गौओं से चटवा-चटवाकर अस्थि निकलवाकर शरीर का परित्याग कर दिया, किन्तु बचनों को नहीं टाला। इन्द्र ने उसी हड्डी के द्वारा बज्र बनाकर उक्त असुर को विध्वंसकर आपत्ति से छुटकारा पाया।

शिवि की कथा—एक दिन जब राजा शिवि यज्ञ कर रहे थे, तब उनके दान की परीक्षा के लिये, इन्द्र ने बाज

का रूप धारण किया और तब वह अग्निकपोत का रूप धारणकर राजा की गोद में जा गिरा "और बचाइये, बचाइये" की करुणाजनक ध्वनि करने लगा। उधर बाज-वेष-सज्जित इन्द्र भी पीछे दौड़ता हुआ राजा के पास पहुँचा और बोला--"महाराज! मेरा भोजन आपके पास है। मैं क्षुधा से इतना व्याकुल हूँ कि मेरे प्राण जा रहे हैं, भोजन देकर मेरी प्राण-रक्षाकर संसार में यश पाइये।"

राजा ने कहा— 'शरणागत का पालन करना मेरा धर्म है, इसलिए इसे तो न दूँगा। और जो चाहो ले लो।" इस पर उसने राजा के शरीर से उतना ही मांस पाने की अभिलाषा प्रकट की जितना कि तोल में कपोत था। राजा ने सहर्ष इसे स्वीकार किया और तराजू में कपोत को रखकर, अपने शरीर में से मांस काटकाटकर उसके बराबर करने लगा। परन्तु जब सारे शरीर का मांस चढ़ जाने पर भी वह उसके बराबर न हुआ तब राजा ने अपना शिर काटने को खड्ग उठाया। इन्द्र ने हाथ पकड़ लिया और उसे बर दिया तथा उसका शरीर भी अच्छा कर दिया।

सबके मरण को अकारथ कहने में कवि का भाव यह है कि पशुओं का अस्थि-चर्म तो मरने के पीछे भी काम देता है; परन्तु मनुष्य का नहीं। अतएव, पशु आदि के मुकाविले में भी मनुष्य का विशेष महत्व नहीं रह जाता। यदि मनुष्य अपने जीवन में ही --जिसमें उसे परोपकार करने का पूर्ण अवसर प्राप्त है--परोपकार नहीं कर पाता तो निस्सन्देह उसकी मृत्यु व्यर्थ

हीं है। मृत्यु के पश्चात् भी जिन लोगों की कीर्ति-पताका फहराती रहती है, उन्हीं का मरण सार्थक है। और कीर्ति भी बिना परोपकार के हो, यह असंभव है। अतएव, बिना परोपकार किये शरीर का त्याग देना अकार्थ तो है ही।

(७) सुलतान अलाउद्दीन ने जब अपने प्राणों की रक्षा होते न देखी तो वह विह्वल होकर एक बलवान हाथी पर चढ़कर तुरन्त ही युद्धस्थल से इस प्रकार भाग निकला, जिस प्रकार ग्रीष्मकाल में दावाग्नि को देखकर, मृग, भैंसे, और शूकर आदि वन्य पशु दु:खित होकर जंगल छोड़कर भाग जाते हैं। "विराजि" शब्द बहुधा स्थिरता पूर्ण सुख से बैठने के अर्थ में प्रयुक्त होता है, यथा—गद्दी पर विराजना, मन्दिर में विराजना, आदि। किन्तु यहाँ युद्ध की घबराहट में वैसी स्थिरता और सुख का स्वप्न में भी पता नहीं है। उसका तो नितान्त अभाव है। अतएव इस शब्द का प्रयोग कुछ उत्तम नहीं कहा जा सकता। कवि ने केवल इसी विचार से कि उसका अर्थ "बैठना' होता है, उसका प्रयोग कर डाला है।

(८) जपने की माला में १०८ मनके होते हैं। जापक की गिनती इससे अधिक नहीं होती। वह एक बार १०८ की संख्या पूरी होने पर उसे उसी प्रकार जपने लगता है और वह कार्य जब तक चाहे, करता रह सकता है। वह कभी पूरा नहीं होता। अतएव यहाँ बहुसंख्यक भाव में एक सौ आठ फेरे कहकर यह प्रकट किया गया है कि जब तक कहलवाते रहेंगे—मंत्र की भाँति, इसी कथित वाक्य की पुनरावृति करता रहूँगा, दूसरी बात कदापि न कहूँगा।

(९) यह मत्तगयन्द सवैया है। इसे मालती तथा इन्दव भी कहते हैं। लक्षण:—

इसमें सात भगण और अन्त में दो गुरु होते हैं। (SII SII SII SII SII SII|SII SS)। इन पंक्तियों के आदि में 'भगण' का प्रयोग हुआ है। उसका देवता चन्द्रमा है और फल यश है। छन्द के गणप्रयोग में केवल एक स्थल पर (पहले पद में "एक यहै रन थम्भ को" यहाँ थंभक होता है जो अशुद्ध है—निरर्थक है) दोष है। सवैया में लघु को गुरु और गुरु लघु पढ़ने का नियम है, अतएव इस दोष की शान्ति हो जाती है।

(१०) कुँवरों और धनाढ्यों के बनने-बिगड़ने से देश पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता; क्योंकि उनकी गणना पहले तो वैसे ही कम है, फिर जो कुछ है भी उनमें से अधिकांश को खाने, पीने और मौज उड़ाने ही की चिन्ता रहती है, परोपकारादि की नहीं। अतएव उनके बनने तथा बिगड़ने से देश की एक परमिति जन-संख्या ही का लाभ या हानि है। वे एक साधारण से परिवर्तन से ही बन या बिगड़ जाते हैं। किन्तु देश के कृषकों पर अमीर गरीब सभी की रोजी का दारमदार है, और इसलिए कृषक लोग ही समाज के सच्चे गौरव हैं। उन्हीं पर समाज की अमीरी और गरीबी अवलम्बित है। यदि दुर्भाग्यवश वे एकबार नष्ट हो गये तो फिर दूसरी बार उनका उत्पन्न होना नितान्त असम्भव है। क्योंकि इतना बड़ा समाज नष्ट होकर, पुनः वैसाही बन जाय, यह असम्भव है।

कुँवर और उमराव के फूँक से बनने-बिगड़ने का भाव यह है कि यदि कृषिकारों से उन्हें साधारण सी सहायता

(लगान का मुनाफ़ा तथा सूद आदि) प्राप्त होजाती है तो वे झट चमक जाते हैं और इसमें किसी भी प्रकार की कमी पड़ने पर वे झट मुरझा जाते हैं।

(११) क चरण में 'की' बारहवीं मात्रा पर यति रक्खी है, जो इस छन्द के रोला होने के कारण नियमानुसार ग्यारहवीं मात्रा पर रहनी चाहिये थी। यदि 'लरिकाई' की 'ई' को ह्रस्व करके यतिभंगदूषण ठीक भी कर लिया जाय तो फिर अगली तेरह मात्राओं का रचना क्रम ठीक नहीं रहता। अर्थात् ३+२+४+४ या ३+२+३+३ +२" यह क्रम नहीं रहता वह ३+३+३+४ या ४+३ +४+२ हो जाता है, जो अशुद्ध है। और घ चरण में भी यतिभंगदूषण है, क्योंकि "ऊपर" के 'प' अक्षर पर यति पड़ती है। अर्थात् एक ही शब्द के दो अक्षर ग्यारह मात्राओं की ओर चले जाते हैं और एक तेरह मात्राओं की ओर चला आता है।

(१२) इस छन्द में कवि ने उपदेशक की दान-प्रवृत्ति और धर्मज्ञता का वर्णन करते हुए यह लिखा है कि ऐसे अवसर पर वह देश, काल तथा पात्र का भी विचार नहीं किया करता था; प्रत्युत वह शरणागत एवम् अतिथि को दुःखी देखकर तुरन्त व्याकुल हो उठता था और शीघ्रातिशीघ्र उसका दुःख दूर करने की चेष्टा करता था। यह वास्तव में त्रुटि है। ऐसा आदमी पाखण्डियों के चक्कर में भी आ सकता है। भारतवर्ष में भी ऐसी अनेक त्रुटियाँ हुई हैं। प्राचीन युगों की बात जाने दीजिये। आधुनिक युग की ही ओर ध्यान दीजिये। —

(१) यदि पृथ्वीराज चौहान ने शहाबुद्दीन

मुहम्मद गोरी को युद्ध में पराजित करके गिरफ्तार कर लेने पर भी उसकी विनय और पाखण्डपूरित स्तुति की ओर ध्यान न दिया होता और उसे मारकर भारत का मार्ग निष्कण्टक कर लिया होता तो आज भारत का इतिहास कुछ और ही होता।

(२) इसी प्रकार यदि वीर क्षत्री पृथ्वीराज की सती स्त्री ने लम्पट एवम् कामुक अकबर के गिड़गिड़ाने और अनुनय-विनय करने पर दया का भाव न दिखाया होता और उसे मार देती तो अनेक यवन सजग होकर उपदेश ग्रहण करते और बहुतेरी बहिनों के सतीत्व की रक्षा होती।

पठित पद्य २

समय २॥ घंटा

[परीक्षक— पण्डित गङ्गाप्रसाद अग्निहोत्री।]

विशेष सूचना—(क) और (ख) दोनों में परीक्षार्थी को एक ही भाग का उत्तर देना होगा। दोनों मिलकर जो उत्तर देगा, उसे दोनों में उस भाग के अङ्क मिलेंगे जिसमें उसने कम अङ्क पाये हों। तीनों में (ग) भाग करना सबके लिए आवश्यक है।

(क) रामचरितमानस

१ इन पद्यों के सरल भावार्थ गद्य में लिखिये—

(अ) केकयसुता सुमित्रा दोऊ। सुन्दर सुत जन्मत भइँ ओऊ॥
सो सुख सम्पति समय समाजा। कहि न सकहिं सारद अहिराजा॥
अवधपुरी सोहइ यहि भाँती। प्रभुहि मिलन आई जनु राती॥
देखि भानु जनु मन सकुचानी। तदपि बनी संध्या अनुमानी॥
अगरधूम बहु जनु अँधियारी। उड़इ अबीर मनहुँ अरुनारी॥
मन्दिर-मनि-समूह जनु तारा। नृप-गृह-कलस सो इन्दु उदारा॥
भवन-वेद-धुनि अतिमृदुबानी। जनु खगमुख रसमय रससानी॥
कौतुक देखि पतङ्ग भुलाना। मासदिवस तेइ जात न जाना॥२०

(इ) उदित उदय गिरि मञ्च पर रघुबर बाल पतङ्ग।
बिकसे सन्त सरोज सब हरषे लोचन भृङ्ग॥ ८

(उ) राम साधु तुम साधु सुजाना।
रामभातु तुम भलि पहिचाना॥
जस कोसला मोर भलताका।
तसफलदेउ उन्हें करिसाका॥ ३

(ऋ) लता भवन तें प्रगट भे तेहि अवसर दोउ भाइ॥
निकसे जनु युग बिमल विधु जलद पटल बिलगाइ॥ ८

(लृ) लषन उतर आहुति सरिस भृगुपति कोप कृसानु।
बढ़त देखि जल सम बचन बोले रघुकुल भानु॥ ६

(ए) नाथ कृपा मूरति अनुकूला।
बोलत बचन झरत जनु फूला॥
जो पै कृपा जरैं मुनि गाता।
क्रोध भये तनु राखु बिधाता॥ ७

२ ऊपर के पद्यों में जो शब्दालंकार हों उनका नामोल्लेख कीजिए। ८

३ ऊपर के पद्यों में जो अर्थालंकार हों उनके सकारण नाम लिखिए। २०

(ख) बिनय-पत्रिका

१ नीचे के पदों का भावार्थ सरल हिन्दी में लिखिये—

(अ) जन्म गयो बादिहिं बर बीति।
परमारथ पाले न परो कछु अनुदिन अधिक अनीति।
खेलत खात लरिकपन गो चलि यौवन युवतिन लिय जीति॥
रोग वियोग सोक स्रम संकुल बड़ी वयस वृथाहि गई बीति।
राग रोग ईर्षा बिमोह बस रुची न साधु समीति॥
कहे न सुने गुनगन रघुपति के भई न रामपद-प्रीति।
हृदय दहत पछिताय अनल अब सुनत दुसह भवभीति॥
तुलसी प्रभुते होय सो कीजिय समुझि बिरद की रीति। २०

(इ) ऐसेहि जन्म समूह सिराने।
प्राननाथ रघुनाथ से प्रभु तजि सेवत चरन बिराने।
जे जड़ जीव कुटिल कायर खल केवल कलिमल साने॥
सूखत बदन प्रसंसत तिन कहँ हरिते अधिक करि माने।
सुख हित कोटि उपाय निरन्तर करत न पांय पिराने॥
सदा मलीन पन्थ के जल ज्यों कबहुँ न हृदय थिराने।
यह दीनता दूर करिबे को अमित यतन उर आने॥
तुलसी चितचिन्ता न मिटै बिनु चिन्तामणि पहिचाने। २०

(उ) कलिकाल अपर उपाय ते अपाय भये जैसे तम नासिबे को चित्र के तरनि। ४

(ऋ) तोहिं माँगि मांगनों न मांगनो कहायो,
सुनि स्वभाव सील सुजस जाचक जन आयो,
पाहन पसु बिटप बिहग अपने कर लीन्हें,
महाराज दसरथ के रंक राव कीन्हें । १०

२ इन पदों में जो अलंकार हों उनका सकारण नाम लिखिये । १६

३ (ऋ) में अन्तिम दो पदों में, पाहन, पसु, बिटप, बिहग, कौन हैं तथा किस रंक के 'राव' किये जाने की चर्चा है ? ८

(ग) शिवाबावनी

(अ) इस पद्य का हिन्दी में सरलार्थ लिखिये—

जिन फन फुतकार उड़त पहार भार
कूरम कठिन जनु कमल बिदलिगो ।
विष जाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन
झारन चकारि मद दिग्गज उगलिगो ॥
कीन्हो जेहि पान पय पान सो जहान कुल
कोलहू उछलि जल सिन्धु खल भलिगो ।
खग्ग खगराज महाराज सिवराजजू को
अखिल भुजङ्ग मुगल दल निगलिगो ॥ ८

(इ) उक्त पद्य में जो अलङ्कार हो उसका नाम कारणसहित लिखिये । ७

सूचना—सुन्दर और सुवाच्य लिपिके लिए ५ अङ्क दिये जायँगे ।

थीं उसी समय राम-लक्ष्मण दोनों भाई लता-भवन से निकले। सो ऐसा ज्ञात हुआ मानों बादलों के पर्दे को हटाकर दो निर्मल चन्द्रमा निकल आये हैं।

लृ—(लक्ष्मण-परशुराम-संवाद के समय) परशुरामजी का क्रोध अग्नि-सदृश था, और लक्ष्मणजी के कठोर उत्तर आहुति (शाकल्य) के समान थे। जब रामचन्द्रजी ने यह देखा कि सब सामग्री बराबर पाते जाने पर यह अग्नि कभी शान्त न होगी तो उन्होंने जल के समान उस क्रोधाग्नि को शान्त करने के अभिप्राय से शीतल वचन कहे।

(ए) परशुरामजी लक्ष्मणजी सेकहते हैं—"हे नाथ! आपकी मूर्ति उस कृपा के सर्वथैव अनुकूल है, जो आप मेरी धृष्टता पर भी मेरे साथ कर रहे हैं। अहा! आपके बोलने पर जो बचन निकलते हैं सो ऐसे ज्ञात होते हैं मानो पुष्पवर्षा हो रही है! परन्तु एक बात अभीतक मेरी समझ में नहीं आई। आशा है आप समझाने की कृपा करेंगे। वह यह है कि जब आपके कृपा करने पर भी आपका शरीर जल रहा है तो भला जब क्रोध किया था, तब वह जलने से कैसे बचा? वास्तव में विधाता ने ही रक्षा की!

२) **शब्दालंकार**—अ खंड के प्रथम व द्वितीय चरण में सुन्दर और सुत आदि शब्दों में "स" की कई बार आवृत्ति होने से और छठवें पद के मणि, मन्दिर और समूह में 'म' की आवृत्ति होने के कारण वृत्त्यनुप्रास अलङ्कार है।

क्योंकि वृत्ति के अनुसार एकही वर्ण का प्रयोग बारबार हुआ है।

इ खंड में सन्त और सरोज में 'स' की आवृत्ति कई बार हुई है, अतएव वृत्यनुप्रास अलङ्कार है। और उदित उदय में "उ" तथा "द" दो अक्षरों की आवृत्ति एक ही बार होने से छेकानुप्रास है।

उ खंड में 'साधु' शब्द के शब्दार्थ के एक होने पर भी तात्पर्यमात्र का अन्तर है, अतएव लाटानुप्रास अलङ्कार है।

ऋ खंड में 'विमल' और 'विधु' में तथा 'जलद-पटल-विलगाय' में वृत्यनुप्रास और लृ खंड में कोप और कृसानु में भी वृत्यनुप्रास ही है।

(३) **अर्थालङ्कार**—(अ) खंड की पहली चौपाई में अतिशयोक्ति अलङ्कार है; क्योंकि यहाँ लोक-मर्यादा का उल्लंघन करके अलौकिक उक्ति शेष और शारदा का न कह सकना कथन किया गया है। दूसरी चौपाई से अन्ततक की चौपाइयों में अवध, अगर और अबार आदि प्रस्तुतों की रात्रि, धूम तथा अरुणिमादि अप्रस्तुतों के रूप में संभावना की गई है और 'जनु' और 'मनहु' आदि उत्प्रेक्षा-वाचक शब्दों का भी प्रयोग हुआ है, अतएव यहाँ वाच्योत्प्रेक्षालङ्कार है। इसके सिवा सबसे अन्तिम चरण में लोक-मर्यादा का उल्लंघन करके सूर्य को एक मास तक ठहराने की अलौकिक उक्तिमें अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

इ खंड में "रूपक" अलङ्कार है। यहाँ मंच, रघुबर, सन्त और लोचन उपमेयों तथा गिरि, बालपतंग, सरोज और भङ्ग उपमानों में अभेद कथन होने से अभेद रूपक

अलङ्कार है। यहाँ वर्ण्य तथा अवर्ण्य का धर्म समान है अतएव समअभेदरूपक है।

उ खंड में व्याज-स्तुति अलङ्कार है, क्योंकि साधु और सुजान शब्द देखने में तो स्तुतिवाची हैं; परन्तु वास्तव में उनका अर्थ विपरीत अर्थात् निन्दात्मक है।

ऋ खंड में उत्प्रेक्षालंकार ही है; क्योंकि यहाँ 'लताभवन' और 'दोनों भाइयों' में जलद-पटल तथा विमल-बिधु की उत्प्रेक्षा की गई है और उसका वाचक 'जनु' शब्द भी प्रस्तुत है, अतएव वाच्योत्प्रेक्षा है। इसके सिवा जलद पटल आदि एक वस्तु की लता-भवन आदि दूसरी वस्तु में संभावना की गई है, अतएव वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार भी है।

लृ इस खंड में उपमालंकार है—लखन उतर उपमेय; आहुति उपमान; सरिस वाचक है और उपमेय तथा उपमान दोनों के धर्म (शीतलता) का यहाँ लोप है, अतएव धर्मलुप्तोपमा अलङ्कार हुआ। इसी प्रकार इस चौपाई के अगले भागों में भी यही अलङ्कार है।

ए खंड में उत्प्रेक्षा तथा यमक अलंकार है। वचनों में फूलों की संभावना से उत्प्रेक्षा और स्तुति के शब्दों में निन्दा का भाव होने के कारण व्याजस्तुति अलङ्कार है।

(ग) शिवाबावनी।

(अ) जिस मुग़ल सेना-रूपी महासर्प के फन की फुसकार से बड़े-बड़े पहाड़ उड़जाते थे, जिसके भार से पृथ्वी को धारण करनेवाला कठोर कच्छप भी कमल के सदृश तितर-बितर होजाता था, जिसकी घोर विषरूपी अग्नि की ज्वालमाला से दिग्गज भी चिग्घाड़ मारकर मद

उगल देते थे अर्थात् मदविहीन होजाते थे, जिसने समस्त संसार को दूध के समान पी डाला था, जिसके प्रभाव से प्रभावित होकर पातालवासी बाराह के उछल पड़ने स समुद्र का पानी खौलने लगता था; उसी मुग़ल-दल रुपी भयंकर सर्प को महाराज शिवाजी का खड्गरूपी गरुड़ सहजही में निगल गया। अर्थात शिवाजी की तलवार के घाट सारी मुग़ल-सेना उतार दी गई।

(इ) फन, फुत्कार, कुरम, कठिन, कमल, पान पय और खग्ग खगराज आदि शब्दों में फ, क, प, तथा ख की एक या कई बार आवृत्ति होने के कारण अनुप्रास नामक शब्दालंकार है और रूपक नामक अर्थालंकार भी है। क्योंकि महाराज शिवाजी के खड्ग को खग्गराज और मुग़ल-सेना को भयंकर सर्प माना है और इन उपमेय तथा उपमानों का अभेद कथन हुआ है, अतएव अभेद रूपक है। पर यह अभेद बिना न्यूनाधिकता के है, अतएव समअभेद-रूपक अलङ्कार हुआ।

पठित गद्य

समय ३ घन्टे

[परीक्षक—पं० मधुमंगल मिश्र, बी० ए०]

१ पहले ४ भागों (क ख ग घ) अथवा पिछले ५ भागों (ङ च छ ज झ) का आशय बोलचाल के शब्दों में स्पष्ट करके लिखिये।

(क) सरस्वती भी धन्य है , जो इनके मुखकमल के सम्पर्क का सुख अनुभव करती हुई, ऐसे महात्मा के प्रः न्न गंभीर मानस में राजहंसी सी वास करती है । ४

(ख) बाहर तो तूमतड़ाग और लिफाफे से रहते थे; पर भीतर मियाँ के सिवाय तीन सनहकी के और कुछ न था । ३

(ग) पञ्चानन में कसौटी के समय चालचलन की शिष्टता भी चन्दू ही के टक्कर की थी । इसी से दोनों की पटती भी थी । ४

(घ) कहीं उस आलवाल के चारों ओर कटीले पौधे न उग आये हों ? जब तक उन्हें उखाड़ न फेकें तब लों चतुर माली की सराहना ही क्या ? ५

(ङ) कलकत्ते में बङ्गभाषा के आजकल जो नामी पत्र कहलाते हैं वे उस समय भविष्य के गर्भ में निहित थे । २

(च) सब से अधिक सामयिक बातों का समावेश और उन पर आलोचना है । चाहे राय कुछ ही हो, पर उसमें वह मसाला तो होना चाहिये जो एक दैनिकपत्र को चाहिये । ४

(छ) ब्राह्मण लोग हिन्दू जाति के अगुए हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं कि बहुत से ब्राह्मणों ने पढ़ना-लिखना छोड़ दिया है । परन्तु यह समय की गति है । उसका प्रभुत्व ज्यों का त्यों बना है । ३

(ज) खूब फक्कड़बाज़ी की नौबत आई थी । उर्दू के तूतिये-हिन्द और अवधपञ्च में जैसी नोकझोंक हुई थी उसी का नमूना इन दोनों की छेड़छाड़ में था । ४

(झ) अकेली गङ्गा हैं । लम्बी चौड़ी वासनाओं का निवास उस स्थान में नहीं । आकाश पाताल को एक करनेवाले विचारों का वहाँ प्रवेश नहीं होता । ३

२ नीचे लिखे शब्दों का उपयोग अपने बनाये वाक्यों में करिए:—

जँगरैतिन टोह; तरल; अठखेली चाल; लटके; नितान्त; अद्भुत; संवाददाता; चिट्ठा; तड़ितसमाचार। ५

३ नीचे लिखे शब्द किस आशय को प्रकाशित करते हैं:— आलोचना; समालोचना; प्रत्यालोचना; पण्डिताइन; पण्डिता; सठिया जाना; गदहपचीसी; घुणाक्षरन्याय। ४

४ इन कहावतों का आशय समझाइए: —

आठ बार नौ त्यौहार; काला अक्षर भैंस बराबर; हाथी का खाया कैथ; रुपयों का ठीकरी करना; उलटे छुरा मूँडना; रेउड़ी के लिये मसजिद ढहाना। ६

५. अनुप्रास किसे कहते हैं? यदि वह गद्य में आता हो तो उसके दो तीन उदाहरण कण्ठ हों तो, या बना के, दीजिए। ६

६. (क) पहले प्रश्न के (घ) भाग में आशय को सीधे सीधे न कहके व्यञ्जना से प्रकाश किया है। उस वाक्य में उपमान, उपमेय, साधारण धर्म और वाचक शब्द सब खोल खोलकर अलग-अलग लिखिए। यदि लुप्तोपमा हो तो लुप्त अङ्गों को कोष्ठक में लिखिए। ८

(ख) उत्प्रेक्षालङ्कार किसे कहते हैं? उदाहरण देकर समझाइए। ४

७. (क) इन शब्दों के समास बताइए और लक्षण लिखिये:— सप्ताह; मुखकमल; यथाशक्ति; निरक्षर भट्टाचार्य; संवाददाता। १०

(ख) इन तद्धित वा कृदन्त शब्दों के प्रकार बताओ:—पढ़ना लिखना; फक्कड़बाजी; नोकझोंक; कतरनी; सनहकी; दयालु; सरहना; पातञ्जल; दौर, पढ़ी लिखी। ५

८. (क) हिन्दी में कर्त्ता का चिन्ह 'ने' कहाँ कहाँ नहीं आता ? ५

(ख) क्या विशेषणों का रूप विशेष्य के अनुसार बदलता है ? उदाहरण देके अपने उत्तर की पुष्टि कीजिये। ५

९ (क) जिन ७ शब्दों के नीचे रेखा खींची है उनकी व्याख्या कीजिये। ७

(ख) विसर्ग के स्थान में श, ष वा स आदेश किन-किन दशाओं में होता है ? ३

१०. नीचे लिखे वाक्यों में अशुद्धियाँ हों तो सुधारिए:—

पण्डितमानी लोग अपना भूल स्वीकार नहीं करते।

पण्डितजी आसन में बैठे हैं।

पण्डित ने लाठी को सीधी किया।

पण्डित कछुआ का बच्चा प्यार करता है।

पण्डित ! घास, पेड़, बूटी, लता, वल्ली बनस्पति कहाती हैं।

पण्डित मनमोहन मालवीयजी की कृपा उस सम्बन्ध का कारण हुई थी।

सूचना—सुन्दर अक्षर और शुद्ध लिखने के लिए १० अङ्क रक्खे गये हैं।

उत्तर

पठित गद्य

(१ क)—ऐसे महान् महात्मा के कमल-रूपी मुख के स्पर्श करने एवम् उसके प्रसन्नतायुक्त गम्भीरमान-सरोवर में निवास करने के सम्बन्ध से सरस्वती भी धन्य हो गई

अर्थात् जिन लोगों का सम्बन्ध सरस्वती से हो जाता है, वे वास्तव में धन्य समझे जाते हैं; किन्तु यहाँ इसके विरुद्ध सरस्वतीही को इनके सम्बन्ध का गौरव प्राप्त हुआ है। तात्पर्य्य यह कि अभूतपूर्व विद्वान् हैं।

ख—वैसे तो मियाँ बड़ी शान-शौक़त और ठाठ-बाट से रहते थे किन्तु घर में केवल तीन सनहकी थीं; अर्थात् खाने-पकाने के बर्तनों तक का अभाव था।

ग—जाँच करने पर पंचानन में भी चन्द्रही की सी शिष्टता विद्यमान थी। यही कारण था कि स्वभाव-साम्य से दोनों की आपस में बनती भी अच्छी तरह थी। आपस में ख़ूब मेल था।

घ—कहीं उस थाँभले के पास (हृदय में) काँटेदार पौदे (दुःख) न उग आये हों। जब तक उनको दूर न करो, तब तक तुम चतुर माली नहीं कहे जा सकते. अर्थात् तुम्हारी चतुरता इसी में है कि हमारे हृदय के कष्ट निवारण कर दो।

(२) १. कोई कोई बड़ी जँगरैतिन टोह कर रही थी कि फ़ुरसत के समय कौन सा कार्य्य करें।

२. तरल तरङ्गों से तरङ्गित तरङ्गिणी समुद्र के समीप, सुख के उत्साह में, उमंगें भरती चली जा रही थी।

३. तुम्हारी अठखेली चाल ने सैकड़ों नागरिकों के मनों को भी मत्त बना दिया है।

४. यह तो यारों के लटके हैं। ज़रा देखते चलिये!

५. मूर्खों को कविता समझाना नितान्त असंभव कार्य है।

६. लेखक ने अपने प्रमाण की पुष्टि में कई धर्मग्रन्थों के वचनों को अविकल रूप से उद्धृत किया।

७. "सैनिक" के संवाददाता ने पुलिस की अच्छी ख़बर ली।

८. मुनीम से कहो कि इस साल का चिट्ठा बाँधे।

९. कुछ दिनों में बाबुओं के दुराचार की चर्चा तड़ित-समाचार की भाँति सारे रंगपुर में फैल गई।

(३) आलोचना—किसी वस्तु के गुण-दोषों पर विचार करना।

प्रत्यालोचना—किसी आलोचना पर पुनर्विचार करना।

समालोचना—आदि से अन्त तक सम्पूर्ण आलोचनीय विषयों की आलोचना करना।

पंडिताइन—हिन्दी में अकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दों के आगे 'आइन' आदेश करने से स्त्रीलिङ्ग हो जाता है। ऐसी अवस्था में अकारान्त का लोप होजाता है। इसी नियम से यह शब्द पंडित का स्त्रीलिङ्ग है।

पंडिता—यह भी पंडित का स्त्रीलिङ्ग है, किन्तु यह संस्कृत व्याकरण के नियमानुसार है।

सठियाजाना—महाविरा है। इसका आशय बुद्धि भ्रष्ट हो जाने से है।

गदहपचीसी—यह भी महाविरा है। इसका आशय चढ़ती उमर जवानी को जोश और ऊँच नीच का ज्ञान न होने से है।

घुणाक्षरन्याय—दैवात् किसी कार्य का हो जाना। बिना प्रयास किसी कार्य में सफलता मिलजाना।

(४) १. नित नयी आवश्यकता का प्रस्तुत होना। यथा; बाबुओं के यहाँ नित आठ बार नौ त्यौहार लगे ही रहते थे।

२. बिलकुल अनपढ़। जो एक अक्षर भी न जाने; जैसे उनके लिये काला अक्षर भैंस बराबर था।

३. खोखला। भीतर ही भीतर उजड़ा हुआ या ख़ाली जैसे जाती हुई सम्पत्ति का हाल हाथी के खाये कैथे की भाँति है।*

४. अधिक व्यय कर देना। अंग्रेज़ी पढ़ाने में लोग रुपयों को ठीकरी कर देते हैं।

५. ठगना। अन्याय से धोखा देना। वाह उस्ताद! उल्टे छुरे से मूँड़ना तुम्हीं जानते हो!

६. मामूली बात के लिए आफ़त मचा देना। ये लोग साधारण नहीं, रेवड़ी के लिये मस्जिद ढहानेवाले हैं।

५) अनुप्रास—जहाँ स्वर की विषमता रहने पर भी केवल वर्णों की समानता हो उसे अनुप्रास अलङ्कार कहते हैं। यथा:—

(१) पावन पवन के संयोग से कुछ शान्ति प्राप्त हुई।

(२) कमल-कानन की कमनीय छटा को निरखकर मधुप-मंडली मनोहर गुंजार करने लगी।

(३) मोतियों की मंजु मनोहर माला को धारण करने

* हाथी समूचा कैथा निगल जाता है। पेट में ही उसका गूदा हज़म होजाता है। लीद में फिर वह जैसा का तैसा निकल आता है।

उत्तर

पठित पद्य २

(क) रामचरितमानस

(१) अ—जब कौशल्या राम को उत्पन्न कर चुकीं तब कैकयी और सुमित्रा ने भी सुन्दर पुत्र प्रसव किये। उस समय की शोभा का वर्णन वाणी की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती और सहस्रमुखधारी शेषनाग भी नहीं कर सकते। मुझ जैसे साधारण कवि की क्या सामर्थ्य है। फिर भी यथाशक्ति वर्णन करने की चेष्टा करता हूँ। उस समय अयोध्याजी इस प्रकार सुशोभित हो रही थीं, जिस प्रकार रात्रि का, अपने स्वामी चन्द्रमा से मिलने के लिए, आगमन हुआ हो और फिर उसके स्थान पर सूर्य (अन्य नायक) को देखकर संकुचित होकर उसने संध्या के रूप में अपना रङ्ग परिवर्तित कर लिया हो।

आगे इसी सन्ध्या का रूपक बाँधते हैं। अगर का धुआँ है, वही मानों अन्धकार है। अबीर उड़ रहा है वही मानों संध्याकालीन अरुणिमा है, मन्दिरों में जड़ा हुआ मणिसमूह है वही मानों तारकमण्डली है, राजप्रासाद के चमकते हुए स्वर्णकलश हैं वही मानों चन्द्रमा है और भवन में जो मनोहर वेदध्वनि हो रही है वही मानों संध्या के समय बसेरा लेनेवाले पक्षि-समूह की मधुर एवम् रसमयी वाणी है। अर्थात्, उस समय की प्रायः समस्त आवश्यक सामग्री

उपस्थित है। इस कौतुक को देखकर सूर्य्य भी चक्कर में आ गये और चलना भूलकर एक मास तक खड़े ही रह गये। अर्थात् एक मास का दिवस हुआ।

इ—जिस समय उदयाचल रूपी मंच पर, प्रातःकाल के नवीन निकले हुए सूर्य, श्रीरामचन्द्रजी का उदय हुआ; अर्थात् वे मंच पर विराजमान हुए, उस समय सन्त रूपी कमल विकसित हो गये। अर्थात् उनके कमलानन पर प्रसन्नता की आभा का प्रादुर्भाव हो गया और उनके नेत्र-रूपी भ्रमर श्रीरामचन्द्रजी के कमलानन को देखकर और उसे अपना अभीष्ट समझकर प्रसन्न हुए।

उ—राजा दशरथ के मुख से "रामचन्द्र साधु हैं" ऐसा सुनकर केकयी कहती हैं—"हाँ, समझ लिया, सच कहते हो—राम वास्तव में साधु हैं और आप उनसे भी बढ़-चढ़े साधु हैं। तभी तो आपने रामचन्द्र की माता की प्रकृति को भली भाँति समझ लिया है। किन्तु स्मरण रखिये (स्पष्ट कहे देती हूँ) कि कौशल्या ने जैसी भलाई (बुराई) मेरे साथ की है, उसका बदला मैं भी उसे डंके की चोट देकर ही मानूँगी। तात्पर्य्य यह कि जिस प्रकार कौशल्या ने आपको धोखा देकर अपने जाल में फँसाकर अपने पुत्र को सिंहासनारूढ़ करना चाहा है, उसी प्रकार मैं भी उसके पुत्र को खुल्लमखुल्ला बन में भेजकर अपने पुत्र को राजा बनवाऊँगी।

ऋ—जब सीताजी अपने नेत्र बन्द करके, उनमें समानी राममूर्ति की छटा देखकर, आनन्दानुभव कर रही

वाली मनोरमा मालती को निहारकर किसका चित्त प्रमुदित न हो उठेगा !

(६) यहाँ हृदय उपमेय है जो इससे पूर्व पंचानन के कथन से स्पष्ट है। आलबाल उपमान है।

(क) समान वाचक और सुन्दर साधारण धर्म है। आपत्ति उपमेय; कटीले पोधे उपमान; समान वाचक; और उग आना, साधारण धर्म है। पंचानन उपमेय; चतुर माली उपमान; सदृश वाचक और उखाड़ फेंकना साधारण धर्म है।

(ख) प्रस्तुत की अप्रस्तुत रूप में सम्भावना की जाय उसे "उत्प्रेक्षा" अलङ्कार कहते हैं। यथा :—

सोहत ओढ़ै पीट पट, श्याम सलोने गात।
मनो नीलमणि शैलपर, आतप परयो प्रभात॥

यहाँ पीताम्बरधारी श्यामतन (प्रस्तुत) की प्रातः कालीन सूर्य-प्रभा के शोभित नीलमणि के पर्वत (अप्रस्तुत) के रूप में सम्भावना की गई है।

(७) क—सप्ताह—सप्त + अहन्। इसमें द्विगु समास है; क्योंकि पहले भाग में सप्त संख्या है और दूसरा भाग अहन् (दिन) विशेष्य है।

मुखकमल—मुख ही है कमल। इसमें मुख विशेष्य और कमल विशेषण के संयोग से कर्मधारय समास है।

यथाशक्ति—में पहला पद यथा अव्यय है, अतएव अव्ययी भाव समास हुआ।

निरक्षर भट्टाचार्य—निरक्षर है सोई भट्टाचार्य। यहाँ भी कर्मधारय समास है।

संवाददाता—संवाद का दाता (संवाद देनेवाला) षष्ठी-तत्पुरुष समास है; क्योंकि यहाँ षष्ठी विभक्ति 'का' का लोप है।

(ख) पढ़ना-लिखना- —भाववाचक कृदन्त। फक्कड़बाज़ी—भाववाचक तद्धित

नोक-झोंक—भाववाचक कृदन्त। करतनी—करण-वाचक कृदन्त।

सहनकी—न्यूनतावाचक तद्धित। दयालु—गुण-वाचक तद्धित।

सराहना—भाववाचक कृदन्त। पातञ्जलि—शेषिक तद्धित। दौर—भाववाचक कृदन्त। पढ़ी-लिखी—गुणवाचक कृदन्त।

(८) क—१. कर्तृप्रधान क्रियाओं के कर्त्ता में 'ने' चिन्ह नहीं होता; यथा सोहन पुस्तक पढ़ता है।

२. अकर्मक क्रियाओं के कर्त्ता में 'ने' नहीं आता। यथा—मोहन दौड़ा, राम आया।

३. 'लाना' 'भूलना' और 'बोलना' से बनी हुई क्रियाओं और जो संयुक्त क्रियाएँ अन्त में 'जाना' 'चुकना'

'लगना' 'सकना' के रूपों से मिलकर बनी हों उनके कर्त्ता में 'ने' चिन्ह नहीं आता। जैसे:—राम लाया, वह भूला है, तू बोला था, मैं लाई गई, वह खा चुका था, मोहन खाने लगा तथा सोहन उठ सका।

४. बकना क्रिया में प्रायः 'ने' नहीं आता। यथा—वह बका।

(ख) विशेषणों का रूप कहीं तो विशेष्य के अनुसार बदलता है और कहीं नहीं भी बदलता। यथा—काला घोड़ा भागा, काली घोड़ी भागी, काला घोड़ा आया, काले घोड़े आये। यहाँ विशेषणों का रूप विशेष्य के अनुसार बदला है।

जहाँ विशेषण तत्सम हो वहाँ उसका रूप विशेष्य के अनुसार नहीं बदलता। यथा—सुन्दर लड़का आया, सुन्दर लड़की बैठी आदि।

(६) क—वे वह (अन्य पुरुष सर्वनाम) का बहुवचन है जो यहाँ नामी पत्रों के बदले में आया है।

यह संकेतवाचक सर्वनाम है, जो समय की गति की ओर संकेत करता है।

गति है—चाल है। इसका लक्ष्यार्थ प्रभाव है।

ज्यों का त्यों—जैसा पहले था, ठीक वैसा ही। उसमें तनिक भी अन्तर नहीं।

हैं—यहाँ गंगा के एक वचन संज्ञा होने के कारण "है" का प्रयोग समुचित था, किन्तु आदर के भाव में बहुवचन की भाँति प्रयुक्त हुआ है।

निवास यहाँ 'वास' के साथ 'नि' उपसर्ग का संयोग है, इसका अर्थ विश्राम या ठहराव है।

एक करनेवाले -परस्पर दो वस्तुओं को मिला देनेवाले—दो वस्तुओं में भेद न रखनेवाले।

(ख) यदि विसर्ग के पश्चात् च, छ, ट, ठ, या त, थ, हों तो वह क्रम से श्, ष्, स्, होजाते हैं। जैसे हरिः+चन्द्र= हरिश्चन्द्र। धावितः छाग=धावितश्छाग। भीतः+ टलति=भीतष्टलति। स्थिरः+ठक्कुरः=स्थिरष्ठक्कुर। उन्नतः+तरु=उन्नस्तरुः। क्षिप्तः+थुत्कारः=क्षिप्रस्थुत्कारः।

(१०) १. मानी पण्डित अपनी भूल स्वीकार नहीं करते।

२. पण्डितजी आसन पर बैठे हैं

३. पण्डित ने लाठी सीधी की।

४. पण्डित कछुए के बच्चे को प्यार करता है।

५. पण्डित—घास, पेड़, बूटी, लता और बल्ली बनस्पतियाँ कहाती हैं।

६. उस सम्बन्ध में पण्डित मदनमोहनजी मालवीय ही की कृपा कारण हुई थी।

अपठित गद्य और पद्य

समय २॥ घन्टा

[परीक्षक—बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन एम० ए०, एल-एल० बी०]

(क) मेरे हृदय-गगन में अन्धकार छा लिया। मेरे मनरूपी *नन्दन कानन का *पारिजात पुष्प मालती थी। किन्तु दैत्यविशेष ने उसे अपहरण किया।

(ख) सन्ध्या हो गयी। कोकिल बोल उठा। पर उसको भी चुप हो जाना पड़ा। एक सुन्दर कोमल कंठ से निकली हुई रसीली तान ने उसे भी चुप कर दिया। मनोहर स्वर-लहरी उस सरोवरतीर से उठकर तट के सब वृक्षों को गुंजरित करने लगी। मधुर *मलयानिल-ताड़ित जल-लहरी उस स्वरके ताल पर नाचने लगी। हरएक पत्ते ताल देने लगे। अद्भुत आनन्द का समावेश था। शान्ति का * नैसर्गिक राज्य उस छोटी रमणीय भूमि में मानों जमकर बैठ गया था।

(ग) १—हिन्दू जाति एवं हिन्दुस्तान की महानता का प्राण भारतवासियों का आधार-सूत्र हिन्दी भाषा ही है।

२—यह चिट्ठी लिंकन की महनीयता का अच्छा परिचय देती है।

३—वह घटना जितनी कारुणिक है उतनी ही महत्वपूर्ण भी है। इसी से उसके महत्व की महिमा बहुत अधिक है।

४—पद्यकाव्य की ओर कवियों की रुचि तथा उनकी शक्ति की प्रवृत्ति ऐसी हो गयी है कि गद्य-काव्य की महत्ता का समझना उनके लिए *दुरूह हो गया है।

(घ) कह्यो है पचायो अन्न पंडितपुत्र पतिव्रता स्त्री सुसेवित राजा विचारि करि कहिबो इतने बिगार कबहूं न उपजै। तृषावन्त असन्तोषी क्रोधी सदा सन्देही जो और के भाग की आश करै अति दयावन्त ये छहौं सदा दुःखी रहैं।

(क) (ख) और (ग) में जिन शब्दों के नीचे रेखा खिंची हुई है उनके मुहाविरे और प्रयोग पर अपने विचार प्रकट कीजिये। ३

२. जिन शब्दों के पूर्व यह * चिन्ह लगा है उनमें प्रत्येक की व्याख्या कीजिए। ५

३ (ग) में 'महानता, 'महनीयता, 'महत्व' और 'महत्ता' इन पाँचों की अलग अलग व्याख्या कीजिये और साथ ही इनके रूपों और दिये हुए वाक्यों में इनके प्रयोगों पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

४ ऊपर दिये हुए (क) से (ङ) तक के वाक्यों में जिन जिन अलंकारों का प्रयोग हुआ है उनके नाम लिखिए और अनलंकृत साधारण भाषा में उन्हीं वाक्यों को लिखकर उनका आशय प्रकट कीजिए।

पद्य

(क) पत्रों पुष्पों रहित बिटपी विश्व होवे न कोई,
कैसी ही हो सरस-सरिता, वारिशून्या न होवे,
ऊधो, सीपी सदृश न कभी भाग फूटे किसी का,
मोती ऐसा रतन अपना आह! कोई न खोवे।

(ख) सतत शब्दित गेह समस्त में,
विजनता परिवर्द्धित थी हुई,
कुछ विनिद्रित हो जिनमें कहीं,
झनकता इक झींगुर भी न था।

वदन से तज के मिस धूम के,
शयनसूचक श्वास-समूह को,
झलमलाहट-हीन-शिखा लिये,
परम निद्रित सा गृहदीप था।

(ग) रतन अनेक शैल उपजावत,
नहिं छबि तासु तुषार घटावत।
थोरे दोष कोटि गुन माहीं,
शशि महँ अङ्क सरिस दबि जाहीं।
धातुविचित्र शिखर सोइ धारत,
जो लहि तन अप्सरा सँवारत।
परत जासु मेघन महँ जोती,
साँझ अकाल मनहुँ नित होती।

१. ऊपर की कविता में प्रत्येक का भावार्थ सरल भाषा में लिखिए। १६

२. जितने अलंकार इन पद्यों में आये हों उनके नाम और लक्षण लिखिए। ६

३. खड़ी बोली और पड़ी बोली दोनों की कविताओं के विषय में अपनी युक्तिपूर्ण सम्मति लिखिये, परन्तु लेख बीस पंक्ति से अधिक न हो। १२

(क) जगदीश, प्रत्युत्तर, गौरीश, मनोरथ, वक्षस्थल, इनकी सन्धि बताइये और नियम लिखिए। ५

(ख) धर्मात्मा, प्रजापति, गौरीशंकर, विद्यावारिधि—इनका समास लिखिये। ५

(ग) राम ने सीता को ग्रहण किया। लक्ष्मण ने राम की सेवा की। विभीषण का भाई बड़ा दुष्ट था। राजा भूखोंको अन्न देता है। लड़का गाड़ीसे गिर पड़ा।

इन वाक्यों में रेखाङ्कित पदों में कौन कारक है ? लक्षण-सहित लिखिये । १२

(घ) खाना, पीना, सोना, पढ़ना—धातु के परोक्षभूत, वर्त्तमान और सामान्यभविष्यत् काल के मध्यमपुरुष के रूप लिखिए । १२

गद्य-लेख-रचना

समय ३ घंटे

[परीक्षक—पं० रघुवरप्रसाद द्विवेदी, बी० ए०]

१-निम्नलिखित चार विषयों में से किसी एक पर गद्य लेख और चाहो तो पद्य लेख लिखिए:— १०

(क) रामायण में आचार या व्यावहारिक नीति ।

(ख) मितव्यायता वा किफ़ायत ।

(ग) हिन्दुओं के तेवहार ।

(घ) प्रातःकाल की शोभा ।

उत्तर

अपठित गद्य और पद्य

(१) छालिया का अर्थ यहाँ फैल चुका है । यथा, अन्धकार छालिया—अँधेरा फैलचुका—अँधेरे ने घेर लिया । इस शब्द का प्रयोग बहुधा भय, शोक तथा लज्जा आदि शब्दों के साथ में होता है । यहाँ इसके स्थान पर अन्धकार छा गया, का प्रयोग होना उत्तम होता ।

जमकर बैठ गया था—दृढ़ता से स्थिर हो गया, अटल होगया। लोकोक्ति है।

आधार सूत्र—स्थिर रखनेवाला, आधार के साथ स्तम्भ मिलकर भी यही अर्थ देता है। इसका आशय है—स्थिर रखने का मुख्य कारण।

महनीयता का अच्छा परिचय देती है—उसके बड़प्पन को भली भाँति सिद्ध करती है। इससे उसकी महत्ता सिद्ध होजाती है।

महनीयता का प्रयोग संस्कृतव्याकरण से चिन्त्य है।

जितनी कारुणिक है—जितनी करुणाजनक है, जितनी दुखित करनेवाली है।

(२) नन्दनकानन—इन्द्र की वाटिका, इसकी सैर बैकुंठ में जानेवाले ही कर सकते हैं।

पारिजात-पुष्प—इन्द्र की वाटिका के एक वृक्ष का पुष्प। पुराणों में इस वृक्ष के विषय में लिखा है कि उसकी बिभिन्न डालियों में बिभिन्न प्रकार के पुष्प होते हैं।

मलयानिल—सुगन्धितवायु, वसन्तकालीन वायु, त्रिविध समीर में से एक समीर, मलयागिरि की ओर से आनेवाली वायु।

नैसर्गिक—प्राकृतिक, स्वाभाविक तथा क़ुदरती।

दुरूह—कठिन, मुश्किल। जिसका समझना और करना कठिन हो।

(३) महानता—यह शब्द प्रभाव या गौरव का द्योतक है। यथा तुम्हारी महानता इसी में है कि अपने बड़ों का कहना

मानो। वह अपनी महत्ता धीरे-धीरे जमा रहा है। दिये हुए वाक्य में यह शब्द बड़प्पन अथवा मान्यता के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

महनीयता— का प्रयोग चिन्त्य है; किन्तु यहाँ बड़ाई के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

महत्व—बड़प्पन, उत्तमता अथवा महत्व का भाव। यहाँ मूल्य के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। महत्व और महिमा प्रायः एक ही भाव के द्योतक शब्द हैं। अतएव इनका साथ-साथ प्रयोग होना चिन्त्य है।

महत्ता—यह शक्ति अथवा प्रभाव के अर्थ में आता है। यहाँ मूल्य अथवा शक्ति के अर्थ में है।

(४)—क खण्ड में समअभेदरूपक अलंकार है। इसे अनलंकृत भाषा में इस प्रकार लिखेंगे—"मेरे मन को भानेवाली मालती को दैत्य-विशेष हर ले गया।" इसका अर्थ यही है कि मेरी प्रेमिका को दैत्य उड़ा ले गया। इसी अवतरण में पारिजात-पुष्प में अनुप्रास है, उसे यदि पारिजात फूल लिखदें तो अलंकार न रहेगा।

(ख) इस अवतरण में "एक सुन्दर कोमलकंठ से निकली हुई रसीली तानने उसे भी चुप कर दिया।" इस वाक्य में द्वितीय प्रतीप और 'मनोहर ······ बैठ गया' वाक्य में उत्प्रेक्षालंकार है। इसे अनलंकृत भाषा में इस प्रकार लिखेंगे—(१) "एक कंठ की मधुर ध्वनि सुनाई दी। कोकिल का बोल अब सुनाई नहीं देता था। पुनश्च (२) संध्या समय कोकिल बोलती थी, इतने ही में एक मधुर ध्वनि सुनाई दी। अब न जाने क्यों कोकिल का बोल सुनाई नहीं देता था! उस उठी हुई ध्वनि से जो

सरोवर के तीर से आई थी, सब वृक्षों में गुंजार हो उठा;....और उस स्थान पर सचमुच शान्ति का नैसर्गिक राज्य हो गया।

(ग) अवतरण के प्रथम भाग में समअभेदरूपक अलङ्कार है, क्योंकि हिन्दी भाषा को महानता का प्राण माना है, अर्थात् हिन्दी भाषा, उपमेय; और महानता का प्राण. उपमान में निषेध-रहित अभेद कथन है। उसमें किसी प्रकार की न्यूनाधिकता नहीं है।

(घ) यहाँ यदि 'पचायो अन्न' आदि सब प्रस्तुत या सब अप्रस्तुत हों तो उन सबका एक धर्म "बिगार न उपजना" कथन करने के कारण "तुल्य योग्यता" अलङ्कार होगा और यदि इनमें कुछ उपमेय अथवा कुछ उपमान हों तो 'दीपक' अलंकार होगा।

इस पद के इससे अगले वाक्यवाले अलंकार के सम्बन्ध में भी यही बात है।

पद्य।

(१)—क श्रीयशोदाजी उद्धव से कहती हैं - "हे उद्धव! ईश्वर करे, संसार का कोई भी वृक्ष पुष्प-पत्र-रहित होकर निष्प्रभ कदापि न हो, जिस प्रकार कृष्ण के वियोग से हम हैं। इसी प्रकार जल-विहीन होकर कोई भी नदी अपनी शोभा का परित्याग न करे और न दुर्भागिनी सीपी के सदृश (जिसमें मुक्ता उत्पन्न होकर उसे शीघ्र ही छोड़कर कान्तिहीन कर देता है) किसी का भाग्य ही फूटे, जिससे उसे अपने मोती जैसे अनुपम रत्न से हाथ धोना पड़े।

यहाँ कृष्ण के वियोग में उनकी माता खेद प्रकट कर रही हैं।

(ख) जो घर-समूह सदैव चहल-पहल से भरे-पूरे रहते थे, उनमें आज नीरवता का ऐसा अटल साम्राज्य उपस्थित हो गया था कि कोई झींगुर तक न झनकता था—चारों ओर सन्नाटा ही सन्नाटा छा रहा था। कहाँ तक कहें, घर में जलनेवाला दीपक तक आज अपनी प्रकाश-हीनता की सूचना दे रहा था। उसकी शिखा से जो धुआँ निकल रहा था सो इस बात को प्रमाणित कर रहा था कि वह निद्रा की अवस्था में मानो निश्वास छोड़ रहा था।

(ग) जिस प्रकार अनेक रत्नों को उत्पन्न करनेवाले पहाड़ की शोभा को, उसके ऊपर पड़ा हुआ तुषार न्यून नहीं कर सकता, उसी प्रकार अगणित गुणों में दो एक अवगुण भी—चन्द्रमा के कलङ्क के सदृश लुप्त हो जाते हैं। वही पहाड़, अपने शिखर पर अद्‌भुत धातुओं (सोना चाँदी आदि) को धारण करता है, जिनके द्वारा अप्सरायें अपने शरीरों को विभूषित करती हैं; परन्तु मेघमाला में उन्हीं की ज्योति पड़ने से नित्य-प्रति असामयिक सन्ध्या का सा दृश्य उपस्थित हो जाता है।

(२) क खंड में पूर्णोपमा अलङ्कार है। यहाँ भाग्य उपमेय, सीपी उपमान; सदृश वाचक तथा फूटे, साधारण धर्म है।

(ख) खंड में पर्याय अलङ्कार है। क्योंकि यहाँ एक ही आधार 'गेह समस्त में' पूर्वकालीन शब्द 'मयता' और वर्तमान 'विजनता' रूप दो आधेय कथन किये गये हैं।

(ग) खंड में प्रधान अलङ्कार उत्प्रेक्षा है। क्योंकि यहाँ धातुमय शिखरों की ज्योति में अकाल साँझ होने की

संभावना की गई है ; और इससे ऊपर के आधे छन्द के पूर्वांश में साधारण बात कहकर उत्तरांश में उदाहरण प्रस्तुत किया गया है । अतएव यहाँ "उदाहरण" अलङ्कार है ।

(३) वर्तमान युग गद्य का युग है। जब किसी देश में प्रवृत्ति-मार्ग का अत्यधिक अनुगमन होता है, तब वहाँ गद्य का ही बल रहता है। अँगरेज़ी भाषा का गद्य हिन्दी के गद्य से प्राचीन है; इसका कारण यह है कि वहाँ के लोग प्रायः निवृत्तिमार्ग की ओर विशेष न झुककर प्रवृत्ति-मार्ग की ओर ही विशेष झुके रहे। आज भारत को भी अपने पेट के धन्धे की अधिक चिन्ता है। अतएव यहाँ भी गद्य से पद्य दब गया है। पद्य का बाहुल्य ब्रजभाषा ही में है। उसके शब्द, क्रियाएँ और महाविरे सर्वथा कविता के अनुकूल हैं। उसमें मिठास भी बहुत है और शब्दों को छन्दों में प्रयोगात्मक बनाने के लिए गुंजायश भी अधिक है। यह सब कुछ होते हुए भी उस ओर जनता का विशेष ध्यान नहीं है। इसका कारण ऊपर दिखाया ही जा चुका है। फिर भी सुकवियों की रचनाओं को सुनने के लिए, बहुधा, सहृदय-समाज अब भी विह्वल हो उठता है। इसका कारण केवल यही है कि अपने दिन भर के कामों से फ़ुरसत पाकर लोगों का ध्यान दिल बहलाने और आनन्द का उपभोग करने की ओर आकर्षित होता है; और इस कार्य की सिद्धि काव्य से ही होना अधिक संभव है। इसीलिए काव्य की ओर लोगों का ध्यान जाता है। गद्य-

* इन अलङ्कारों के लक्षण अन्यत्र अङ्कित हैं।

काव्य से पद्य-काव्य में कई गुणों को विशेष रूप से पाकर पद्य ही की ओर वे दत्त-चित्त होते हैं। परन्तु, अब ब्रजभाषा का काव्य इतना दूर पड़ गया है कि सर्व-साधारण को उसका समझना दुस्तर हो गया है। भारत में छै छै मील पर भाषाओं का बदलना, इसमें और भी सहायक है। ऐसी अवस्था में लोगों ने काव्य के अनेक गुणों से विभूषित होने पर भी ब्रजभाषा को छोड़कर एक राष्ट्रीय और सर्वदेशीय साहित्यक भाषा—जिसमें अब प्रान्तीयता की गंध नहीं कही जा सकती—की शरण ली है। इसी भाषा को खड़ी बोली का नाम दिया गया है। लोगों ने विचारा कि जिस हिन्दी भाषा को सब जगह सभ्य समाज बोलता है, और जिसमें आजकल गद्य लिखा जाता है, वही पद्य की भाषा भी हो। अतएव खड़ी बोली में भी कविता होने लगी। कुछ लोगों का विचार है कि जो मिठास और जो आनन्द ब्रजभाषा में है वह इसमें नहीं है। किन्तु, हमारी समझ में कविता के उत्तम होने के लिये, केवल सहृदय कवियों ही की आवश्यकता है न कि किसी विशेष भाषा की। यदि भाव अच्छे होंगे और उनको अदा करने का ढङ्ग अच्छा होगा तो भाषा में मिठास, लोच तथा अन्य समस्त सौन्दर्य स्वयं ही उत्पन्न हो जायँगे। "खड़ीबोली में कविता अच्छी हो ही नहीं सकती अथवा अच्छी है ही नहीं"—जिनका ऐसा विचार है, उनसे हम सहमत नहीं हैं। यदि यही बात है तो उर्दू में, जो खड़ीबोली ही का रूपान्तरमात्र है, मिठास और हृदय-ग्राहकता क्यों है? उसमें यह गुण न तो

अरबी और फ़ारसी के शब्दों के बदौलत है और न अन्य किसी कारण से। केवल सुकवियों की सतर्कता से काम लेने और भाषा-सौन्दर्य एवम् अर्थ-गाम्भीर्य की ओर दत्त-चित्त रहने ही के कारण है। यह बात अभी खड़ी बोली को नसीब नहीं हुई। यही कारण है कि वह न अभी उर्दू का मुक़ाबिला कर सकती है और न ब्रजभाषा ही का। अतः खड़ीबोली के कवियों को इस विषय में बड़े चातुर्य से काम लेने की आवश्यकता है।

(क) जगत् + ईश = जगदीश (व्यंजन-सन्धि) जब किसी शब्द के अन्त में त् हो और उसके पीछे कोई स्वर हो तो 'त्' के बदले 'द' होजाता है।

प्रति + उत्तर = प्रत्युत्तर (स्वरसन्धि) यदि इ या ई के बाद इ या ई के अतिरिक्त कोई अन्य स्वर हो तो इ या ई के स्थान पर य हो जाता है।

गौरी + ईश = गौरीश (स्वरसन्धि) इ या ई के पश्चात् ई रहे तो दोनों मिलकर ई हो जाते हैं।

मनः + रथ = मनोरथ (विसर्ग-सन्धि) यदि विसर्ग के पहले अ हो और बाद को किसी वर्ग का तीसरा, चौथा या पाँचवाँ अक्षर या य, र, ल, व, ह हो तो विसर्ग ओ हो जाता है।

वक्षः + थल = वक्षस्थल (विसर्ग-सन्धि) यदि विसर्ग के बाद त या थ हो तो वह स हो जाता है।

(ख) धर्मात्मा (धर्म ही है आत्मा जिसका सो है धर्मात्मा) बहुव्रीहि समास।

प्रजापति (प्रजा के पति) षष्ठी तत्पुरुष समास।

गौरीशङ्कर (गौरी और शङ्कर) द्वन्द्व समास।

विद्यावारिधि (विद्या का वारिधि) षष्ठीतत्पुरुष समास ।

(ग) सीता को—इसमें कर्मकारक है । लक्षण—कर्त्ता का काम "कर्म" कहाता है, अर्थात् जिसमें कार्य का फल रहे और व्यापार न रहे, वहाँ कर्मकारक होता है।

राम की—इसमें सम्बन्ध कारक है। संज्ञा की उस अवस्था को जिसका किसी दूसरे पद अथवा पदार्थ से लगाव, स्वत्व अथवा सम्बन्ध आदि पाया जाय उसे "सम्बन्ध कारक" कहते हैं ।

विभीषण का—इसमें भी सम्बन्ध कारक है ।

भूखों को—इसमें सम्प्रदान कारक है । जिसके लिए कार्य होता है उसके चिन्ह (को के लिए) को सम्प्रदान कारक कहते हैं ।

गाड़ी से—इसमें अपादान कारक है । जिससे कोई वस्तु उत्पन्न वा पृथक् होती है, वह अपादान कारक होता है ।

(घ) अत्यत्र नक़शे में देखिये ।

प्रश्न-पत्र सं० १९७३

साहित्य १

[परीक्षक—पं० मन्नन द्विवेदी गजपुरी, बी० ए०]

समय ३ घंटे

१) रामायण के पात्रों में जिसको आप सर्वोत्तम समझते हों, उसका वर्णन कीजिये और कारण दिखाइये कि क्यों आप उसको सबसे उत्तम समझते हैं । १५

(२) निम्नलिखित पदों में अलङ्कार बतलाइये—

इसके अनन्तर अङ्क में रक्खे हुए सुस्नेह से,
शोभित हुई इस भाँति वह निर्जीव पति के देह से;
मानों निदाघारम्भ में सन्तप्त आतप-जाल से
छादित हुई विपिनस्थली नव पतित किंशुक-शाल से । १५

(३) मुद्राराक्षस-रचयिता विशाखदत्त अथवा उसके अनुवादक भारतेन्दु–हरिश्चन्द्र के विषय में जो कुछ आप जानते हैं, लिखें । १५

(४) जेहि कर जेहि पर सत्य सनेहू ।
सो तेहि मिलत न कछु सन्देहू ।

इस चौपाई का भाव लिखिये और बतलाइये कि इसको किसने और कहाँ कहा था । ऊपर की चौपाई के भावों की सत्यता के विषय में आपको जितने उदाहरण मालूम हों, लिखें । १५

(५) निम्नलिखित कविता में क्या-क्या साहित्य-दूषण हैं—

(क)— कर वन्दना गुरु की मुदित
यह पार्थ से लड़ने चला,
विख्यात विन्ध्याचल यथा
आकाश से भिड़ने चला ।

(ख)—अर्जुन बिना सब पाण्डवों के
वध न करने लिए ।
करुणार्द्र होकर कर्ण ने थे
वचन कुन्ती को दिये । १०

(६) निम्नलिखित पद्य कौन सा छन्द है, उसका लक्षण क्या है, और पद्य में आपको यदि कोई दोष देख पड़े तो बतलाइये—

(क)---पर, अर्जुनाधिक पाण्डवों का
वध न करने के लिये,
करुणार्द्र होकर कर्ण ने
थे बचन कुन्ती को दिये।
(ख)—वाचक ! विलोको तो ज़रा,
है दृश्य क्या मार्मिक अहो !
देखा कहीं अन्यत्र भी क्या
शील यों धार्मिक कहो। १०

(७) निम्नलिखित पदों में से किन्हीं तीन का अर्थ लिखिये।—

(क)—और देव सों काम नहिं यम को करो प्रणाम।
जो दूजन के भक्त को प्राण हरत परिणाम॥
यदपि उदित कुमुदिन सहित पाय चाँदनी चन्द।
तदपि न तुम बिन लसत है, नृपशशि जगदानन्द॥२०

(ख)—जो केवल पितु आयसु ताता।
तौ जनि जाउ जानि बड़ि माता॥
जो पितु मात कहेउ बन जाना।
तौ कानन शत अवध समाना॥

(ग)—आकाश में चलते हुए यों छवि मुझे दिखला रही,
मानों जगत को गोद लेकर मोद देती है मही।
उन्नत हिमाचल से धवल यह सुरसरी यों टूटती,
मानों पयोधर से मही के दुग्ध-धारा छूटती।

(घ)—ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहनवारी
ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहाती हैं।
कन्दमूल भोग करैं कन्दमूल भोग करैं
तीन बेर खातीं सो तो तीन बैर खाती हैं।

भूखन शिथिल अङ्ग भूखन शिथिल अङ्ग
बिजन डुलाती ते व बिजन डुलाती हैं।
भूषन भनत शिवराज बीर तेरे त्रास
नगन जड़ातीं ते व नगन जड़ाती हैं।

उत्तर

साहित्य १

(१) रामायण के पात्रों के चरित्राङ्कण में महात्मा तुलसीदास जी ने श्रीरामचन्द्रजी में ईश्वरत्व स्थापित करके, उसका पूर्ण निर्वाह करते हुए भी भरत के चरित्र को अत्यन्त विशुद्ध सिद्ध किया है। अतएव बरबस कहना पड़ता है कि रामायण के पात्रों में भरत का ही पद सर्वोच्च है। यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि रामायण में भरत ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन पर किसी को भी किसी प्रकार का सन्देह नहीं हुआ। यदि गुह तथा लक्ष्मणजी को थोड़ी सी शंका हुई भी, तो वह बालू की दीवार की भाँति तुरन्त ही मिट गई। यद्यपि गोस्वामीजी ने सीता के पतिप्रेम और लक्ष्मणजी के भातृस्नेह को परमोज्वल दिखाया है, उसमें किसी भी प्रकार की कोर-कसर शेष नहीं रक्खी। फिर भी भरत के विषय में वे स्पष्ट शब्दों में लिखते हैं—अगम सनेह भरत रघुबर को।
जहँ न जाय मन बिधि हरिहर को ॥

(क)—पर, अर्जुनाधिक पाण्डवों का
वध न करने के लिये,
करुणार्द्र होकर कर्ण ने
थे बचन कुन्ती को दिये।
(ख)—वाचक! विलोको तो ज़रा,
है दृश्य क्या मार्मिक अहो!
देखा कहीं अन्यत्र भी क्या
शील यों धार्मिक कहो। १०

(७) निम्नलिखित पदों में से किन्हीं तीन का अर्थ लिखिये।—

(क)—और देव सों काम नहिं यम को करो प्रणाम।
जो दूजन के भक्त को प्राण हरत परिणाम॥
यदपि उदित कुमुदिन सहित पाय चाँदनी चन्द।
तदपि न तुम बिन लसत है, नृपशशि जगदानन्द॥२०

(ख)—जो केवल पितु आयसु ताता।
तौ जनि जाउ जानि बड़ि माता॥
जो पितु मात कहेउ बन जाना।
तौ कानन शत अवध समाना॥

(ग)—आकाश में चलते हुए यों छवि मुझे दिखला रही,
मानों जगत को गोद लेकर मोद देती है मही।
उन्नत हिमाचल से धवल यह सुरसरी यों टूटती,
मानों पयोधर से मही के दुग्ध-धारा छूटती।

(घ)—ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहनवारी
ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहाती हैं।
कन्दमूल भोग करैं कन्दमूल भोग करैं
तीन बेर खातीं सो तो तीन बैर खाती हैं।

भूखन शिथिल अङ्ग भूखन शिथिल अङ्ग
बिजन डुलाती ते व बिजन डुलाती हैं।
भूषन भनत शिवराज बीर तेरे त्रास
नगन जड़ातीं ते व नगन जड़ाती हैं।

उत्तर

साहित्य १

(१) रामायण के पात्रों के चरित्राङ्कण में महात्मा तुलसीदास जी ने श्रीरामचन्द्रजी में ईश्वरत्व स्थापित करके, उसका पूर्ण निर्वाह करते हुए भी भरत के चरित्र को अत्यन्त विशुद्ध सिद्ध किया है। अतएव बरबस कहना पड़ता है कि रामायण के पात्रों में भरत का ही पद सर्वोच्च है। यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि रामायण में भरत ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन पर किसी को भी किसी प्रकार का सन्देह नहीं हुआ। यदि गुह तथा लक्ष्मणजी को थोड़ी सी शंका हुई भी, तो वह बालू की दीवार की भाँति तुरन्त ही मिट गई। यद्यपि गोस्वामीजी ने सीता के पतिप्रेम और लक्ष्मणजी के भ्रातृस्नेह को परमोज्वल दिखाया है, उसमें किसी भी प्रकार की कोर-कसर शेष नहीं रक्खी। फिर भी भरत के विषय में वे स्पष्ट शब्दों में लिखते हैं—अगम सनेह भरत रघुबर को।
जहँ न जाय मन विधि हरिहर को॥

जो न होत जग जनम भरत को।
अचर सचर चर अचर करत को॥

इसी प्रकार रामचन्द्रजी का त्याग आदर्श त्याग है सही; किन्तु भरतजी का त्याग उससे कहीं बढ़ गया है। जो वस्तु अपनी ही है, उसे त्याग देना उतना बड़ा त्याग नहीं है, जितना बिना हक़ और बिना प्रयास के मिली हुई वस्तु का त्याग है। इस पर भी ऐसी सूरत में, जब माता-पिता ने उसके उपभोग की आज्ञा दे दी हो, तब तो उस त्याग की महत्ता और भी बढ़ जाती है। वह परिपक्क-बुद्धि एवम् बड़ों की आज्ञा में औचित्य तथा अनौचित्य का ध्यान रखते थे। लोभादि व्यसनों से वह बिलकुल मुक्त और हृदय के बिलकुल स्वच्छ थे। यही कारण है कि राम ने उनकी प्रशंसा स्वयं अपने मुखारविन्द से की है:—

"सुनहु लछमण भरत सरीखा।
विधि प्रपंच में सुना न दीखा।

भरतजी के त्याग का जीता जागता उदाहरण देखिये, और साथ ही भातृस्नेह की छटा भी निरखिये। वे कहते हैं:—

"सोक-समाज राज केहि लेखे।
लखन-राम-सिय-पद बिनु देखे।

समालोचकों ने सीता-त्याग आदि दो-एक बातों पर रामचन्द्रजी की तीव्र आलोचना की है; किन्तु भरत ने उन समालोचकों को तादृश कार्य के लिए कोई भी अवसर नहीं दिया। वह बल में, बुद्धि में, न्याय में और सज्जनोचित व्यवहार में क्या, प्रायः सभी बातों में

बहुत बढ़े-चढ़े थे। उन्होंने लक्ष्मणजी के भाग्य की सदैव सराहना की, उन पर कभी शंका नहीं की। बाण-विद्या तथा योग-साधन में भी वह अपना मुख्य स्थान रखते थे। वशिष्टजी जैसे बुद्धिमान और प्रकाण्ड पंडित को तर्क द्वारा चुपकर देना भरत जैसे चतुर व्यक्ति ही का कार्य था। उनकी जितेन्द्रियता पर मुनियों तक को ईर्षा हुई है। जनकजी जैसे विदेह तक उन पर मोहित हो गये हैं। भला, ऐसे महात्मा का चरित्र सर्वोच्च क्यों न कहा जाय।

(२) इस पद्य में प्रधान अर्थालंकार "उत्प्रेक्षा" है; क्योंकि यहाँ प्रस्तुत, उत्तरा में अप्रस्तुत, वनस्थली का आहार्य-आरोप हुआ है। यहाँ उपमेय और उपमान में भेद का ज्ञान रहते हुए भी आहार्य आरोप हुआ है। अर्थात् कवि ने उत्तरा (उपमेय) और विपनस्थली (उपमान) के भेद को स्पष्ट समझते हुए भी उत्तरा को विपनस्थली कल्पित किया है। "मानो" उत्प्रेक्षा-वाचक शब्द होने के कारण वाच्योत्प्रेक्षा है। यहाँ उत्तरा उत्प्रेक्षा का विषय या आश्रय है, क्योंकि उसी की उत्प्रेक्षा की गई है और वह कथित है। अतएव उक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा है।

(३) भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र इतिहास-प्रसिद्ध सेठ अमीचन्द के वंशज बाबू गोपालदास "गिरिधारन" अग्रवाल वैश्य के पुत्र थे। उनका जन्म संवत् १९०७ में हुआ। इनकी छोटी अवस्था ही में माता-पिता का स्वर्गवास हो जाने के कारण वह बाल्यकाल से ही स्वतन्त्र हो गये, अतएव उनकी शिक्षा यथोचित रीति से न हो सकी। वह बड़े

चंचल प्रकृति के थे। उनका मन पढ़ने-लिखने में नहीं लगता था। फिर भी तीव्रबुद्धि एवम् प्रखर स्मरणशक्ति होने के कारण अपना पाठ झट याद कर लेते थे। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में उन्होंने सकुटुम्ब जगदीश-यात्रा की और उसी समय उनसे पढ़ना-लिखना बिलकुल छूट गया। इतने पर भी विद्याव्यसनी होने के कारण उन्होंने स्वाध्याय और अभ्यास से इतना ज्ञान प्राप्त कर लिया था जो उनकी उद्देश्य-सिद्धि के लिये पर्य्याप्त था। देशाटन से इन्हें बहुत लाभ हुआ उसी के फल-स्वरूप वह सार्वजनिक कार्यों और साहित्य-सेवा में निमग्न हुए। यात्रा से लौटने पर उन्होंने "विद्यासुन्दर" नामक एक बँगला नाटक का अनुवाद किया। तब से अपने अन्त समय तक, केवल १७–१८ वर्ष के अल्पकाल में, इन्होंने देश-हित के अनेक कार्य किये। ये परम देशभक्त, सहृदय, दयालु, दूरदर्शी, दरयादिल, सदैव प्रसन्न रहनेवाले एक स्वाभिमानी व्यक्ति थे। रुपयों को पानी की तरह बहाते थे। इन्होंने चौखम्भा स्कूल, कविता-वर्द्धिनी सभा, पेनीरीडिङ्ग क्लब और तदीयसमाज की स्थापना की। इन्हें सदैव देशहित की चिन्ता रहती थी। मज़ाक-पसन्द आदमी थे। कविवचनसुधा, हरिश्चद्र-मेगज़ीन (हरिश्चन्द्र-चन्द्रिका) बालबोधिनी-पत्रिका यह तीन पत्र भी निकाले थे। यह स्वयम् एक अच्छे कवि थे, कविता की ओर अपनी बाल्यावस्था ही से इनकी रुचि थी। सबसे पहली कविता इन्होंने पाँच वर्ष की अवस्था में की। ये कवियों के कल्पवृक्ष और हिन्दी के जनक थे। इन्होंने आत्मगौरव की दृष्टि से

आनरेरी मैजिस्ट्रेटी तक पर लात मार दी। इन्होंने नाटक, आख्यान, काव्य, स्तोत्र, परिहास और इतिहास आदि अनेक विषयों पर लिखा है। यह बड़े रसिक और प्रेमी कवि थे। इनके करुणा एवम् हास्य के वर्णन बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। हिन्दी के सबसे प्रथम वास्तविक नाटककार आप ही हैं। आप की गद्य-लेखन-शैली बड़ी उत्तम है। कविता में प्राय: ब्रजभाषा और गद्य में खड़ीबोली लिखते थे। इन्होंने बहुत से प्राचीन ग्रंथों का उद्धार किया और नवीन ग्रन्थ लिखकर हिन्दी का भंडार भरा। जनता की ओर से इन्हें भारतेन्दु की उपाधि मिली थी जो सर्वथा उचित थी। इनकी नाटक-लेखन-शैली योरोप एवम् भारत की नाटक-प्रणाली की मध्यवर्तिनी है। योरोप के नाटककार वियोगान्त (Tragedy) नाटकों को महत्व देते हैं और भारतीय संयोगान्त (Comedy) नाटकों को पसन्द करते हैं। इन्होंने इन दोनों प्रकार के नाटकों का समानरुपेण समादर किया और स्टेज सम्बन्धी अनेक बातें पाश्चात्य ढँग पर ही ठीक की हैं। वर्तमान गद्यलेखक प्राय: अब तक इन्हीं की शैली का अनुगमन कर रहे हैं। भारतेन्दुजी ३५ वर्षकी अल्पायु में ही इस धराधाम को छोड़कर सन् १८८५ ई० (सं० १९४२ वि०) में गोलोकवासी हुए और इतने ही दिनों में हिन्दी के भंडार को इतना वैभवशाली बना गये, जितना कई अच्छे ग्रन्थकार और लेखक मिलकर भी न बना सके थे।

(४) जिसका जिस पर सत्य स्नेह होता है—निष्कपट प्रीति होती है—निस्सन्देह वह उसको मिलता है।"

जब रामचन्द्रजी महाराज धनुष चढ़ाने के लिए मंच पर पहुँचते हैं, तब उनकी प्रीति को अपने हृदय में गुप्त रखनेवाली मैथिली लज्जा से नम्रमुखी होकर देवों को मना रही हैं। उनका मन स्थिर नहीं था। उसी समय भगवान् से अपने मनोरथ की सफलता की प्रार्थना करते हुए इन वचनों द्वारा शान्ति ग्रहण करती हैं।

इस चौपाई की सत्यता के ऐसे अनेक उदाहरण रामायण में उपलब्ध हैं--

१. पार्वतीजी ने सत्य स्नेह के कारण शिव को पाया।
२. दशरथ और कौशल्या ने अपने पूर्व जन्म के प्रेम के कारण राम को पुत्र-रूप में पाया।
३. भागीरथ की अचला प्रीति के कारण उन्हें गगा प्राप्त हुई।
४. शबरी प्रेम-पूर्वक राम को पाने की उत्कट इच्छा रखती थी, अतएव वे उसे मिले।
५. सीताजी ने राम को भी पाया, आदि।

५—१. पहले छन्द में आदि में "कर वं" (।।ऽ) सगण का प्रयोग हुआ है, जो नियमानुसार अशुभ है। द्विगुण विचार से भी इस दोष का परिहार नहीं होता; क्योंकि सगण का अरिसंज्ञा है और इसके आगे प्रयुक्त होने वाला 'दनागु' (।ऽ।)—जगण की संज्ञा उदासीन है। अरि+उदासीन का फल "शंका" है जो अशुभ है।

(२) "लड़ने चला" व "भिड़ने चला" यह तुकान्त भी उत्तम नहीं है।

(३) इसी छन्द के दूसरे चरण में यतिभंग दूषण भी है, अर्थात् यति "आकाश" के 'आ' अक्षर पर पड़ती है जो नियम-विरुद्ध है।

दूसरे छन्द में —"बध न करने के लिए" इस पद का प्रयोग किया गया है, इसका अर्थ है ' न मारने के लिये ।" यदि किसी कारण से पढ़नेवाला उसे ' बधन करने के लिये" पढ़कर अर्थ करे तो भाव बिलकुल पलट जाता है। ऐसे सन्देहात्मक प्रयोग काव्य में सर्वथा अनुचित हैं।

(६) इस पद्य में हरिगीतिका छन्द है। इसमें १६ व १२ मात्राओं की यति से २८ मात्राएं होती हैं और इसकी पांचवीं, बारहवीं, उन्नीसवीं तथा छब्बीसवीं मात्रायें सदैव लघु रहती हैं। (क) छन्द में भी "बधन" का प्रयोग उपर्युक्त पाँचवें प्रश्न के छन्द में प्रयुक्त इसी शब्द-प्रयोग के समान चिन्त्य है। (ख) छन्द में 'अहो' शब्द अनावश्यक है, जो केवल पाद-पूर्ति के लिए प्रयुक्त किया गया है।

(७) ख—वन-गमन के समय कौशल्या अपने पुत्र राम से कहती हैं—"हे पुत्र ! यदि तुमको पिता ने बन जाने की आज्ञा दी है तो (मुझ) माता को बड़ा मानकर मेरी आज्ञा का पालन करो और वन को न जाओ। यदि पिता व माता (केकई) दोनों ही की आज्ञा है तो (बिना संकोच के तुरन्त ही चले जाओ) तुम्हारे लिये बन ही सौ अयोध्याओं के सदृश है। वहाँ पर यहाँ से सौगुना आनन्द पाओगे।

(ग) "शिवजी से अस्त्र-ग्रहण करने के लिए, आकाश-मार्ग में जानेवाले अर्जुन प्रकृति की छटा देखकर कल्पना करते हैं—मुझे इस समय (आकाश में चलते हुए) प्रकृतिका सौन्दर्य ऐसा जान पड़ता है जैसे पृथ्वी संसार को गोदमें

लेकर दुलार कर रही है। ऊँचे हिमालय से जो सुरसरि की सफ़ेद धारा छूट रही है सो अपने पुत्र संसार की भूमि के स्तनों से, प्रेम में निमग्न होने के कारण, मानो दुग्ध-धारा प्रवाहित हो रही है।"

(घ)—भूषण कवि कहते हैं कि हे वीर शिवाजी! आप के भय से मुग़लानियों की अजीब दुर्दशा हो रही है। जो कभी बड़े बड़े घरों में परदे के अन्दर रहती थी वही आज भयंकर पर्वतों में छिपती फिरती हैं! जो बढ़िया मिष्टान्न खाया करती थी वही आज जड़ी-बूटियों से दिन काट रही हैं! जो दिन में तीन-तीन दफ़े खाती थीं वही बेचारी आज केवल तीन-तीन बेर खाकर गुज़ारा कर रही हैं! सुकुमारता के कारण जो भूषणों के भार को भी नहीं सँभाल सकती थीं वह आज क्षुधा से प्राण दे रही हैं, जिन पर सदैव पंखे ढुरा करते थे वे अब निर्जन वन में 'घोर शीत तापादि सहन करती हुई' निराधार घूम रही हैं और जो सदैव रत्न-जटित आभूषणों से सुसज्जित रहती थीं वे बिना वस्त्रों के ही, नङ्गी, जाड़े के मारे थरथरातीं इतस्ततः मारी मारी फिर रही हैं।

साहित्य २

[परीक्षक—पं० शुकदेवबिहारी मिश्र बी० ए०]

समय ३ घंटे

(१) प्यारे न्यारे चन्द हौ मृगान रथ में नहे।
केहरी समान कटि है।
उपर्युक्त दोनों वाक्यों में प्रधान अर्थालङ्कार कौन हैं सो समझाकर लिखिये। १०

(२) खञ्जरीट नहिं लखि परत कछु दिन साँची बात।
बाल दगन सम होन को मनौं करन तप जात॥
खञ्जरीट नहिं लखि परत कछु दिन साँची बात।
बाल दगन सम होनको करन कठिन तप जात॥

उपर्युक्त दोहे में जो थोड़ा सा अन्तर दो बार लिखने से किया गया है उससे उसके अर्थालङ्कार में क्या अन्तर पड़ता है? समझाकर लिखिए। १०

(३) चन्द्रमा सोलहों कलाओं से पूर्ण अपनी प्रेयसी निशा की मुख-छबि पर निहाल है। उसकी सब ओर छिटकी हुई चाँदनी सम विषम भूभाग को एक आकार दरसाती हुई चक्रवर्ती राजा की आज्ञा समान सर्वत्र व्याप रही है, मानो वितान रूप नीले आकाश के शामियाने के नीचे सुफ़ेद फ़र्श बिछा दिया गया हो।
उपर्युक्त वाक्यों का अर्थ सरल भाषा में लिखिये और यह भी बतलाइए कि निशा को चन्द्रमा की प्रेयसी क्यों माना गया है? १५

(४) भारतमित्र पत्र का इतिहास संक्षेप से लिखिये। १५

(५) बिहारबन्धु का इतिहास संक्षेप रूप से लिखिये। १०

(६) निम्नलिखित वाक्यों का अर्थ सरल हिन्दी में लिखिये:—

(क) ऐसा कौन आर्यसन्तान होगा, जिसका चित्र श्रीत्रिवेणीजी के निरीक्षण से उल्लसित न होजाय? यहाँ त्रिपथगामिनी उन भागीरथी गङ्गा का सूर्यनन्दिनी से सङ्गम हुआ है जिनकी शरण में लाखों ऋषि मुनि अनादि काल से रहते आये हैं, और जिनके उत्तम जल से दैहिक, मानसिक और भौतिक ताप दूर होते हैं। १०

(ख) नहीं साहब, विधवा-विवाह की क्या, मैं तो सधवा विवाह को भी बुरा नहीं मानता। भला आप सुधारक लोगों के सामने किसी का मजाल है कि ज़बान हिला सके। ५

(ग) भारतवर्ष में हिन्दू और मुसलमान दो बड़ी जातियां हैं। दोनों के शिक्षित लोगों के विचारों में हम एक विचित्र भेद देखते हैं। शिक्षित हिन्दू अपनी जाति, धर्म और समाज की जहां तक बने, निन्दा करते हैं; समाज के गुणों को छिपाते हैं और दोषों को बढ़ा बढ़ाकर दिखाते हैं। उधर शिक्षित मुसल- मानों का ठीक इसके विरुद्ध आचरण है। ५

(८) चन्दा की कथा संक्षेप से लिखिए और उसके पात्रों में से रामू और चन्दा के गुण-दोष कहिए। १०

(९) नीचे लिखे हुए महाविरों की व्याख्या कीजिये। जहां कहीं अलङ्कार दिखलाते बने, स्पष्ट दिखाइये। १०

१—आंख का पानी ढरक जाना।
२—शरम हया को पी बैठना।
३—पैरा बह गया।
४—मिट्टी छूते सोना होता था।
५—ग्रन्थ-चुम्बकों को मुंह खोलने को हिम्मत नहीं पड़ती थी।
६—इनके कहने को ज़रा भी किसीने छूखा कि तिवरो बदल जाती थी।
७—नौ नक़द, न तेरह उधार।
८—कोयले के व्यवहार में हाथ-पैर काले।

उत्तर

साहित्य २

(१) क—यहां "न्यून अभेदरूपक" अलङ्कार है, क्योंकि प्यारे उपमेय में, प्रसिद्ध उपमान "चन्द्र" का अभेद आरोप हो जाने के पीछे उपमान की स्वाभाविक अवस्था से "रथ में मृग नहे न होना" यह न्यूनताकथन की गई है।

ख—यहाँ "धर्मउपमानलुप्तोपमा" अलङ्कार है। कटि, उपमेय है और 'समान' वाचक शब्द है; किन्तु साधारण धर्म "पतली" और उपमान 'केहरी की कटि' का लोप है; क्योंकि केवल केहरी 'कटि का' उपमान नहीं हो सकात

प्रत्युत उसकी कटि उपमान है। अतएव धर्म-उपमान लुप्तोपमा अलङ्कार हुआ। इसके सिवा यहाँ पर "समान" शब्द वाचक का प्रयोग हुआ है, अतएव आर्थी-उपमा अलङ्कार है।

(२) वस्तुतः इस प्रकार के अन्तर डालने से उसके प्रधान अर्थालङ्कार "उत्प्रेक्षा" में कोई अन्तर नहीं पड़ता। हाँ इतना अन्तर अवश्य है कि पहले दोहे में "मानो" उत्प्रेक्षा वाचक शब्द के कथन से "वाच्योत्प्रेक्षा" (उत्प्रेक्षा का एक भेद) है और दूसरे दोहे में उत्प्रेक्षा-वाचक शब्द के बिना ही उत्प्रेक्षा है, अतएव "गम्योत्प्रेक्षा" या "प्रतीय-मान" उत्प्रेक्षा का दूसरा भेद हो गया।

(३) पूर्णिमा का चन्द्रमा अपनी चन्द्रिका छिटकाकर अपनी प्यारी नायिका रात्रि के संयोग-सुख के कारण प्रसन्नता-प्रकाशन कर रहा है। इस चन्द्रिका के अलौकिक सौन्दर्य का वर्णन कहां तक किया जाय। इस चाँदनी के प्रभाव से ऊंचे-नीचे स्थलों में कुछ अन्तर नहीं जान पड़ता और प्रायः चक्रवर्ती राजा की आज्ञा के समान सभी जगह उसकी पहुँच है। अहा! चांदनी क्या है मानो नीलवर्ण आकाश-मण्डल के नीचे झकाझक-सफ़ेद फ़र्श बिछा दिया गया है।

प्रायः सभी कवियों ने शुक्ल पक्ष का रात्रियों की —और उनमें भी पूर्णिमा की रात्रि की ही—सराहना की है। ऐसा क्यों? इसीलिये न कि चन्द्रमा को पाकर उसकी शोभा उसी प्रकार द्विगुणित हो जाती है जिस प्रकार किसी अर्द्धांगिनी का सौन्दर्य्य एवम् यौवन अपने पति के सम्पर्क से वृद्धि पाता है। उधर दिन में चन्द्र महाराज

भी तन छीन और मन मलीन होकर निष्प्रभ हो जाते हैं और रात्रि में उनका रोम रोम हर्षित होकर हृदय शीतल हो जाता है। अतएव, इन दोनों के ऐसे अपूर्व संयोग से आनन्दित होकर कवियों ने उन्हें पत्नी-पति के संयोग में ही देखना पसन्द किया है।

भारतमित्र

सन् १८७७ में हिन्दी में यथार्थ रूप से कोई पत्र निकलता न देखकर भारतवर्ष की राजधानी कलकत्ता नगर से पं० दुर्गाप्रसाद मिश्र, पं० छोटूलाल मिश्र, पं० सदानंद मिश्र तथा बाबू जगन्नाथ खन्ना के उद्योग से "भारत मित्र" कमेटी बनी और उसके द्वारा "भारतमित्र" पत्र निकला। उसने अपना कर्तव्य पूरा-पूरा सम्पादन किया। जब तक यह पत्र पं० छोटूलाल मिश्र के हाथ में था तब तक बहुत ही उत्तमता से चला। इसमें कभी-कभी भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र जी भी लिखा करते थे। जब से उक्त पंडितजी ने हाथ खींचा, तब से कई सम्पादक आये और उसके कई रंग बदले। इसके सम्पादकों में पं० हरिमुकन्दजी शास्त्री ने भी इसे बहुत योग्यता से चलाया। फिर सन् (१८९३-९४) से यह पत्र बाबू जगन्नाथदास अग्रवाल के प्रबन्ध में आया और बहुत बड़े डील-डौल के स्पष्ट सुन्दर कागज पर छपने लगा। लेख भी सुन्दर होते थे। पंडित अम्बिकाप्रसादजी बाजपेयी तथा पं० लक्ष्मीनारायण गर्दजी ने अपने सम्पादन कौशल से इसे प्रतिष्ठित किया। अब यह पत्र एक लिमिटेड कम्पनी के हाथ में है।

विहार-वन्धु

(५) सन् १८७२ में विहार प्रान्त से पंडित केशवराम भट्ट तथा पंडित साधोराम भट्टके उद्योग से उस प्रान्त में पहला साप्ताहिकपत्र "बिहार-वन्धु" निकला। इस पत्र की लेखनशैली बहुत सुन्दर और प्रौढ़ थी। परन्तु भाषा खिचड़ी उस पर उर्दू विशेष रूपसे अधिकार किये हुए थी। अब यह पत्र अत्यन्त हीनावस्था में मासिक होकर नाम निवाहे जाती है।

(६) क प्रायः सभी आर्य, श्री त्रिवेणीजी के दर्शन कर अपना चित्त प्रसन्न करते हैं। यह वह पवित्र स्थान है, जहां श्रीगंगाजी एवम् यमुनाजी का पारस्परिक मिलाप होता है। इनके आश्रय में सनातन से हो अनेक ऋषि-मुनि रहते आये हैं और उनके पवित्र जलसे त्रैयताप निवारण होते हैं।

ख—आप जैसे सुधारकों के सम्मुख भला कोई क्या कर सकता है! आप विधवा-विवाह के सम्बन्ध में ही कह रहे किन्तु मैं तो पति रहते हुए भी दूसरा विवाह कर लेने वाली कुलाङ्गनाओं को भी बुरा नहीं कहता मेरी दृष्टि में उनका यह कार्य भी समुचित ही है।

भारत की दोनों प्रधान जातियां—हिन्दू और मुसलमानों—के पढ़े लिखे लोगों के विचारों में आकाश-पाताल का अन्तर है।

ग—पठित हिन्दू-जन समुदाय को कभी अपनी जाति, धर्म तथा समाज की प्रशंसा करते नहीं देखा। वे तो सदैव अपने

वन्धुओं के अवगुणों के प्रकाशन और गुणों को गुप्त रखने ही में अपना गौरव समझते हैं। किन्तु तालीमयाफ़्ता मुसलमान ठीक इसके विरुद्ध कार्यकर अपनी जाति को बढ़ाने ही की चेष्टा करते देखे जाते हैं।

(६) १—शर्म हया का बाक़ी न रहना, निर्लज्ज होजाना। खुल्लम खुल्ला दुराचार करनेवाले तथा समझाने पर भी न माननेवालों के लिए बोला जाता है।

२—शरम हया को पी बैठने का अर्थ है उससे भी बढ़कर वेशर्मी। यह भी प्राय: सं० १ की ही भांति प्रयुक्त होता है।

३—पैरा बह गया। पांव उखड़ गये, भाग गया। यथा, अच्छा हुआ बाबुओं के यहाँ से चन्दू जैसे खूसट का पैरा वह गया। पैरा और बह गया, इन दोनों शब्दों में यहाँ श्लेष है, इसी से पहले का अर्थ पैरा उखड़ना है और दूसरे का बह जाना।

४—हर कार्य में लाभ होना। इसमें अतिशयोक्ति है; क्योंकि किसी के मिट्टी छूने से सोना बनता नहीं देखा गया।

५—कोरे रट्टू उसका मुक़ाबिला नहीं कर सकते थे।

६—यदि उनकी बात में कोई ज़रा सा दख़ल देता तो वे उससे तुरन्त ही नाराज़ हो जाते थे।

७—नौ नक़द अच्छे, तेरह उधार नहीं। यह मुहाविरा विशेष तया ऐसे अवसरों पर बोला जाता है जब कोई संदेह से

नोट—इस प्रश्न-पत्र में प्रश्नों की क्रम-संख्या में भूल हुई है, इसमें कोई सातवां प्रश्न नहीं है। आठवें प्रश्न में 'चन्दा' मामक पुस्तक का उल्लेख हैं। यह पुस्तक आजकल अप्राप्य है।

भरे हुए अधिक लाभ के भरोसे पर अपने सौदा को न रोककर थोड़े, तुरन्त ही मिलनेवाले, लाभ पर सन्तोष कर लेता है।

८—बुरे कार्य का फल भी बुरा ही होता है।

साहित्य ३

(परीक्षक—पं० रामचन्द्र शुक्ल)

समय ३ घंटे

(१) किसी ग्राम के दृश्य का ऐसा वर्णन, जिसमें जीवों के भिन्न भिन्न व्यापार भी आ जायँ।

(२) सुशीलता किसे कहते हैं और उसके व्यवहार में किस प्रकार सुगमता होती है।

(३) शिक्षित और अशिक्षितों के जीवन में अन्तर।

ऊपर के लिखे विषयों में किसी एक पर निबन्ध लिखिये।

निबन्ध १०० पंक्तियों से कम में न हो।

१. अङ्क शुद्धता और स्वच्छता के होंगे।

प्रश्नपत्र सं० १९७४

साहित्य १

[परीक्षक—प्रो० लाला भगवानदीन]

समय ३ घंटे

१. अयोध्याकाण्ड के आधार पर इन्द्रादि देवताओं के स्वभाव और आचरण-वर्णन कीजिये और अपने कथन के प्रमाण में कुछ वाक्य भी उद्धृत कीजिये। १५

२. नीचे लिखे हुए पद्यों में से किन्हीं चार के अर्थ लिखिये और यह बतलाइये कि वे किस प्रसङ्ग में आये हैं। २०

(क) सभा सकुचबस भरत निहारी।
रामबन्धु धरि धीरज भारी॥
कुसमय देखि सनेह सँभारा।
बढ़त विंध्य जिमि घटज निवारा॥
शोक कनक लोचन मति छोनी।
हरी बिमिल गुन गन जग जोनी॥
भरत बिवेक बराह बिसाला।
अनायास उधरी तेहि काला॥

(ख) बारिधि के कुंभभव घन बन दावानल,
तरुन तिमिर हू के किरन समाज हौ।
कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल,
कैटभ के कालिका बिहंगम के बाज हौ।
भूषन भनत जग जालिम के सचीपति,
पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हौ।

रावन के राम कार्तवीज के परसुराम,
दिल्लीपति दिग्गज के सेर सिवराज हौ ॥

(ग) चपला की चमक चहूंधा सो लगाई चिता,
चिनगी चिलक पटबीजना चलायो है।
हेती बगमाल स्याम बादर सु भूमि कारी,
बीरबधू लह बुंद भुव लपटायो है।
हरीचंद नीर धार आंसू सी परत जहां,
दादुर को सोर रोर दुखिन मचायो है।
दाहन बियोग दुखियान को मरेहू यह,
देखो पापी पावस मसान बनि आयो है।

(घ) शर-रूप रसना को पसारे रिपु-रुधिर पीती हुई।
उत्कृष्ट भीषण शब्द करती जान मनचीती हुई।
अर्जुन कराग्रोत्साहिता प्रत्यक्ष कृत्यामूर्ति सी।
करने लगी गाण्डीव-मौर्वी प्रलय काण्ड-स्फूर्ति सी ॥

(ङ) पराधीन ह्वै कौन चहै जीबो जग माहीं।
को पहरै दासत्व शृङ्खला-पग को माहीं।
इक दिन की दासता अहै शत कोटि नरक सम।
पल भर को स्वाधीनपनो स्वर्गहु ते उत्तम।

३. सत्य-हरिश्चन्द्र-नाटक का जो दृश्य आप को सब से अच्छा जँचा हो उसका वर्णन लिखिये।

४ नीचे लिखे वाक्यों के अलंकारों के नाम बतलाइये और प्रत्येक की परिभाषा लिखिये:— १५

(क) नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं।
(ख) केरा के से पात बिहराने फन सेस के।
(ग) रघुनंद आनंदकंद कौशलचंद दशरथ नंदनं।

(घ) लसत मंजु मुनि मंडली मध्य सीय रघुचंद।
ज्ञानसभा जनु तनु धरे भक्ति सच्चिदानंद।

(ङ) जगत को जैतवार जीत्यो अवरंगजेब,
न्यारी रीति भूतल निहारी सिवराज की।

५ दोहा, हरिगीतिका, घनाक्षरी, रोला और छप्पय के लक्षण लिखकर उदाहरण में ऐसे छंद लिखिये जो इस प्रश्नपत्र के न हों। १५

६. निम्नलिखित शब्दों के अर्थ लिखिए—
कपालक्रिया, शिष्टाचार, ब्रह्मदंड, अंतःपुर, मुस्तैदी, अग्निसमाज, शर्वरीनाथ, अनट, संजोउ, सीकर, लिप्सा, कलरव, धनंजय, व्याज, उल्का, वृकोदर। ८

७. नीचे लिखे हुए मुहाविरों के अर्थ लिखिये और अपने बनाये हुए वाक्यों में उनका शुद्ध प्रयाग दिखलाइए—
हाथ डालना, आँख चोराना, मुँह लगाना, वित्त से बाहर, खबर लेना, गोता खाना, खेत रहना, बकुला मारे पखना हाथ। १२

८. नाटक, अंक, गर्भांक, नेपथ्य—इन शब्दों की परिभाषा इस प्रकार लिखिए जिससे इनका ठीक तात्पर्य समझ में आजाय। ८

उत्तर

सं० १९७४ साहित्य १

(१) सुर-समाज बड़ा ही स्वार्थी है, वह अपनी स्वार्थ-सिद्धि के सम्मुख दूसरे की हानि-लाभ का ध्यान नहीं रखता।

यदि किसी की अपूर्व हानि होने पर भी उनका लाभ होता हो तो वे उसके करने में कदापि नहीं चूकता।

"ऊँच निवास नीच करतूती।
देखि न सकहिं पराइ विभूती॥"

ज़रा सा सन्देह होने या कष्ट की आशङ्का होने पर तुरन्त ही उनके हाथ-पैर फूल जाते हैं और ज़रा से ही आनन्द की संभावना होने पर तुरन्त ही बधाई और पुष्प-वर्षा की नौबत आ जाती है। वह पात्र-कुपात्र और अच्छे-बुरे की परख नहीं कर सकते और प्रत्येक को लक्ष्य भ्रष्ट करने की चेष्टा करते हैं। वह बड़े धूर्त और कपटी हैं। भरत जैसे सज्जन के साथ भी वे न चूके और गुरु से उनकी मति फेरकर आयोध्या लौटा देने की प्रार्थना की। तब बृहस्पति को विवश होकर कहना पड़ा—

"मायापति सेवक सन माया।
करै तो उलटि परै सुर राया॥"

"बचन सुनत सुरगुरु मुसकाने।
सहस नयन बिनु लोचन जाने॥

सरस्वती से भी जब उन्होंने इसी प्रकार की इच्छा प्रकट की तब इस स्वार्थान्ध और निर्लज्ज समुदाय कोउसने भी करारी डाँट बताई और कहा—

"मोसन कहहु भरत मति फेरू,
लोचन सहस न सूझ सुमेरू॥"

इतने पर भी न माने और उच्चाटन-मंत्र सिद्धकर अयोध्यावासी एवम् राम से भेंट को आनेवालों पर माया फैलाई; किन्तु भरत और जनक को छोड़कर अन्य लोगों ही पर इसका प्रभाव हुआ।

इनका स्वभाव निम्नलिखित चौपाइयों में भली भाँति स्पष्ट है।

"कपट कुचाल सींव सुरराजू।
पर अकाज प्रिय आपन काजू॥"
"काक समान पाक रिपु रीती।
छली मलीन कतहुँन प्रतीती॥

कहाँ तक लिखें, केकयी को अपयश की पिटारी बनाकर राजा दशरथके प्राण-हंता यही लोग बने।

(२) क—जब भरतजी ने सभा को संकोचवश देखा, तो, राम के बन्धु तो थे ही, उन्होंने तुरन्त ही धीरज धारण किया और कुसमय का विचार करके स्नेह को इस प्रकार सँभाला जिस प्रकार बढ़ते हुए विन्ध्याचल को महात्मा अगस्त्य ने उबारा था। शोक-रूपी हिरण्याक्ष ने विमल गुणों से युक्त बुद्धिरूपी पृथ्वी को हरलिया। उसी समय ब्रह्मारूपी भरत से विवेकरूपी विशाल बाराह ने प्रकट होकर शोकरूपी हिरण्याक्ष से बिना प्रयास के ही बुद्धिरूपी पृथ्वी को उबार लिया। भाव यह है कि भरतजी ने कठिन संकोच के समय धीरज धारण किया और बढ़े हुए शोक को दूर करके विवेक-द्वारा बुद्धि को स्थिर रक्खा।

(ख)—जिस प्रकार समुद्र के लिए अगस्त्य, दावानल शान्त करने के लिये बादल, घोर अन्धकार का विनाश करने के लिए सूर्य की किरणें, केश के लिए कृष्ण, कामधेनु के लिए कटीला मार्ग, कैटभ (दैत्य विशेष) के लिए काली देवी, पक्षियों के लिए बाज, संसार को कष्ट देनेवाले

वृत्रासुरके लिये इन्द्र, सर्पों के लिये गरुड़, रावण से लिये राम और कार्तवीर्य अर्जुन के लिये परशुराम काल-रूप हैं उसी प्रकार, हे शिवाजी महाराज ! आप औरङ्गजेब रूपी हाथी को विनाश करने के लिए सिंह के समान हैं।

(ग)– चारों ओर दिखाई देनेवाली चपला की चमक है सोई मानों चिताएं जल रही हैं ! चिताओं से जो चिनगारियाँ उड़ा करती हैं, उनका रूप जुगनुओं ने धारण कर लिया है। जली अस्थियों का सादृश्य वक-पंक्तियाँ कर रही हैं। काले मेघ हैं वही मानों मुर्दों के दाह-संस्कार करने के जले हुए काले स्थल हैं, वीर बहूटियाँ हैं वही मानों रक्त की बूँदे हैं जो पृथ्वी पर चिपट गई हैं। जल की धार ने आँसुओं का रूप धारण कर लिया है। दादुरों की ध्वनि है, वही दुखिया लोगों तथा मृतकों के कुटुम्बियों के रुदन के शब्द हैं। इस प्रकार, पूर्ण सामग्री सहित दुखिया लोगों को वियोग से संतप्त करने के लिये मानो पावस ने आज स्मशान का रूप धारण किया है।

(घ)—अर्जुन के हाथ के अग्रभाग को उत्साहित करने वाली, कृत्या की प्रत्यक्ष मूर्ति के समान, गाँडीव (धनुष) की प्रत्यंचा, अपनी बाण-रूपी जिह्वा को पसार कर शत्रुओं का लोहू पीती हुई, अपने अभीष्ट को सिद्ध हुआ समझ, बड़ा भयंकर शब्द करके प्रलय कैसा काँड उपस्थित करने लगी।

(३)—सत्यहरिश्चन्द्र नाटक का सबसे उत्तम और प्रभाव-शाली वर्णन वह है, जब स्मशान में राजा की अन्तिम परीक्षा हुई है।

रोहिताश्व का शव स्मशान में दाह के लिये आगया है। रानी शैव्या का विलाप श्रवणकर पत्थर का भी कलेजा दहल गया है। उधर राजा अपने स्वामी के कार्य को बड़ी सतर्कता से सम्पादन कर रहे हैं; साथ ही एकान्त के विस्मय को मिटाने और दिल बहलाने को, विविध कल्पनाओं के द्वारा संसार की निस्सारता पर विचार कर रहे हैं और अपने पास आई हुई अष्ट सिद्धियों के प्रलोभन को तुच्छ समझकर उन्हें बिना संकोच के ही त्याग चुके हैं। उसी समय उन पर नई आपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा, घोर बज्राघात हुआ और शोक का समुद्र उमड़ पड़ा--एक निस्सहाया विवश बाला का हृदय-वेधक तथा करुणोत्पादक शब्द सुनाई दिया। राजा चौंक पड़ा और खेद प्रकट करता हुआ अपने स्वामी का कर वसूल करने पहुँचा; पर रानी को पहचानकर और निज पुत्र-वियोग से दग्ध होकर उसकी ऐसी दशा हो गई कि काटो तो बदन में लोहू नहीं। किन्तु यह सब होने पर भी वह वीर निज कर्त्तव्य-पथ से तिल भर भी विचलित न हुआ और सब नाता छोड़कर कर माँगने लगा। उसने रानी की लाचारी और अनुनय-विनय पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया और तुरन्त आधा कफ़न ले लिया। भगवान् का आसन हिला और वे सच्चे भक्त की सहायता के लिये गरुड़ और लक्ष्मी को छोड़कर नंगे ही पैर दौड़ पड़े। दर्शन देकर उन्हें कृतार्थ किया। इन्द्र जैसे स्वार्थी और कुटिल व्यक्ति के होश फ़ाख्ता हो गये, पाषाण हृदय विश्वामित्र पानी पानी हो गये! षड़यन्त्र का भंडा फूट गया। अपराधी लोगों ने

करबद्ध होकर प्रार्थना की और पुत्र रोहिताश्व जीवित हुआ। आकाश से पुष्प-वर्षा होने लगी और सारा कंटक कट गया; साथ ही प्रजा-सहित राजा को वह धाम प्राप्त हुआ, जहाँ से लौटकर फिर जीवन-मरण का दुःख नहीं भोगना पड़ता।

(४) क—इस वाक्य में यमक अलङ्कार है। जहाँ निरर्थक अथवा भिन्न-भिन्न अर्थवाले सार्थक स्वर-व्यंजनों का समूह पुनः उसी क्रम से दिखाई दे वहाँ "यमक" अलङ्कार होता है। जैसे यहाँ नासपाती व बनासपाती में "नासपाती" पद का यमक है।

(ख) यहाँ पूर्णोपमा-अलंकार है। जहाँ उपमेय, उपमान वाचक और साधारण धर्म, तथा उपमा के ये चारों अङ्ग शब्दों द्वारा कथन किये गये हों वहाँ पूर्णोपमा-अलंकार होता है। यहाँ शेष के फन, उपमेय; केरा के पात, उपमान; कैसे, वाचक और बिहराने, साधारण धर्म है।

(ग) यहाँ अनुप्रास अलंकार है। जहाँ स्वर की विषमता रहने पर भी केवल वर्णों की समानता होती है, वहाँ अनुप्रास होता है। जैसे यहाँ 'अन्द' की समानता है।

(घ) यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है। जहाँ प्रस्तुत की अप्रस्तुत में सम्भावना की जाती है, वहाँ यह अलंकार होता है। यहाँ मुनि-मण्डली प्रस्तुत को ज्ञान-सभा अप्रस्तुत में और सीय-रघुचंद में सच्चिदानंद की भक्ति को सम्भावना की गई है।

(ङ) यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार है; क्योंकि शिव-राज की रीति का वर्णन बहुत बढ़ाकर किया गया

है। 'न्यारी' शब्द का प्रयोग करके भूतल की रीति में भेद बताया गया है, अतएव भेदकातिशयोक्ति अलंकार है।

(५) दोहा—यह मात्रिक अर्द्धसम छन्द है। इसके विषम पदों में तेरह और सम पदों में ग्यारह मात्राएँ होती हैं। आदि में जगण का निषेध है और अन्त में गुरु लघु का नियम है। यथा :—

धूरि उड़ावत सीस पै, कहु रहीम केहि काज?
जेहि रज मुनि-पत्नी तरी, सोइ ढूँढ़त गजराज॥

हरिगीतिका—यह मात्रिक छन्द है। इसमें १६ व १२ मात्राओं की यति से २८ मात्राएँ होती हैं और पाँचवीं, बारहवीं, उन्नीसवीं तथा छब्बीसवीं मात्राएँ सदैव लघु रहती हैं और अन्त में लघु-गुरु का नियम है। यथा :—

निश्चेष्ट होकर बैठ रहना, यह महा दुष्कर्म है;
न्यायार्थ अपने बन्धु को भी, दंड देना धर्म है।
इस तत्व पर ही कौरवों से, पाण्डवों का रण हुआ;
जो भव्य भारतवर्ष के, कल्पान्त का कारण हुआ॥*

घनाक्षरी—इसके प्रत्येक पद में १६ व १५ वर्णों की यति से ३१ वर्ण होते हैं और अन्त में एक गुरु अवश्य रहता है। शेष के लिये कोई नियम नहीं है। इसका दूसरा नाम मनहरण भी है। यथा :—

सुनिये विटप प्रभु पुहुप तिहारे हम,
राखिहौ हमैं तौ शोभा रावरी बढ़ाइहैं।

---

*इस छन्द के अन्तिम चरण में यति-भंग दूषण आ पड़ा है; क्योंकि यति कल्पान्त के 'क' अक्षर पर पड़ती है।

तजिहौं हरषि कै तो बिलगि न मानैं कछू,
जहाँ जहाँ जैहैं तहाँ दूनो जस गाइहैं।
सुरू नचढ़ेंगे, नर सिरन मढ़ेंगे तऊ,
सुकवि "अनीस" हाट-बाटन बिकाइहैं।
देस में रहेंगे, परदेस में रहेंगे, काऊ
भेस में रहेंगे तऊ रावरे कहाइहैं॥

रोला—इसके प्रत्येक पद में ग्यारह और तेरह मात्राओं की यति से चौबीस मात्राएँ होती हैं। किसी-किसी आचार्य के मत में इसके अन्त में दो गुरु अवश्य होने चाहिये, किन्तु यह सर्व-सम्मत नहीं है। उदाहरण :—

नव उज्ज्वल जल-धार, हार हीरक सी सोहति।
बिच-बिच छहरत बूँद, मध्य मुक्ता मनि पोहति॥
लोह लहर लहि पवन, एक पै इक इमि आवत।
जिमि नर-गन मन बिबिध, मनोरथ करत मिटावत॥

छप्पय—इस छन्द के आदि में रोला के चार पद और इसके पश्चात् उल्लाला नामक छन्द के दो पद होते हैं। उल्लाला में कहीं छब्बीस और कहीं अट्ठाईस मात्राएँ होती हैं। उदाहरण :—

कूजत कहुँ कलहंस, कहूँ मज्जत पारावत।
कहूँ करंडव उड़त, कहूँ जल-कुक्कुट धावत॥
चक्रवाक कहुँ बसत, कहूँ बक ध्यान लगावत।
सुक पिक जल कहुँ पियत, कहूँ भ्रमरावलि गावत॥
कहुं तट पर नाचत मोर बहु,
रोर बिबिध पच्छी करत।
जल पान न्हान करि सुख भरे,
तट सोभा सब जिय धरत॥

(६) शब्दार्थ :—

क्रिया-कपाल—मृतक के दाह के पश्चात् घृत-पात्र को बाँस में बाँधकर उसके सिर में मार देने की क्रिया।

शिष्टाचार—शिष्टजनोचित आचार, आदरणीय और महज्जनों कैसे कार्य।

ब्रह्मदंड—ब्राह्मण ब्रह्मचारी का धारण करने का दंड, तीन फल का केतु, ब्राह्मण का शाप।

अंतःपुर—रनवास, राजमहल, प्रासाद। मुस्तैदी—तैयार। अग्निसमाज—अग्निसमूह। शर्वरीनाथ-रात्रि का स्वामी, चन्द्रमा। अनट—अत्याचार, अन्याय, अनीति। संजोउ—संयोग। सीकर—जल का कण। लिप्सा—पाने की इच्छा। कलरव—सुन्दर शब्द। धनंजय—अर्जुन। व्याज—मिस, बहाना। उल्का—पुच्छल तारा, दुमदार सितारा। वृकोदर—भीमसेन

(७) १. हाथ डालना—भाग लेना प्रारम्भकरना—बिना विचारे किसी काम में हाथ डालना मूर्खता है।

२. आँखचुराना—बचने की चेष्टा करना—समय पर आँख चुराना ही आजकल भलमनसाही है।

३. मुँह लगाना—किसी को बढ़ा देना, आई-गई करना—नौकर को मुँह लगाना अच्छा नहीं।

४. बित्त से बाहर—सामर्थ्य से अधिक—बित्त से बाहर कार्य करने में पीछे हँसी होती है।

५. ख़बर लेना—दंड देना—अधिक मुँह चलानेवालों की ख़बर डंडे से लीजाती है।

६, ग़ोता खाना—धोखे में आजाना—कभी-कभी बड़े-बड़े चालाक तक ग़ोता खा जाते हैं।

७. खेत रहना—मारा जाना—महाभारत में न जाने कैसे कैसे वीर पराक्रमी और साहसी योद्धा खेत रहे।

८. बकुला मारे पखना हाथ—अधिक परिश्रम में थोड़ा लाभ। इस मुक़द्दमे में डिग्री तो होगई किन्तु "बकुला मारे पखना हाथ" मिला। कोरा नाम ही नाम, बचा कुछ भी नहीं।

(८) नाटक—यह शब्द नट् धातु से बना है जिसका अर्थ नाचना है। काव्य के सर्वगुण-संयुक्त खेल को "नाटक" कहते हैं। इसका नायक कोई महाराज, ईश्वरांश वा प्रत्यक्ष परमेश्वर होता है। रस शृंगार व वीर। अङ्क पाँच के ऊपर और दस के भीतर होते हैं। आख्यान मनोहर तथा उज्ज्वल होना चाहिये।

अङ्क—नाटक के एक-एक विभाग को एक-एक अङ्क कहते हैं। अङ्क में वर्णित नायक-नायिकादि पात्र का चरित्र और आचार-व्यवहारादि दिखलाया जाता है। इसमें अधिक पद्य का समावेश दूषित है।

गर्भाङ्क व विष्कम्भक—नाटकीय वस्तुरचना में जो अंश नीरस और आडम्बर पूरित हों उनका संक्षेप में पात्र-विशेष के मुख से कहलवादेना जिससे प्रकृत-वस्तु के सौन्दर्य्य में अन्तर न आवे।

नैपथ्य—आकाश-वाणी आदि जो प्रत्यक्ष रूप में नहीं सुनाई जातीं, उनका प्रकाशन गुप्त स्थान से कराना।

साहित्य २

(परीक्षक—पं० कृष्णशंकर तिवारी, बी० ए०)

समय ३ घण्टे

(१) चंदू को सौ अजान के बीच एक सुजान कहा गया है। बतलाइए कि इस सुजान के व्यवहार का प्रभाव किन किन पर कैसा पड़ा है। साथ ही यह भी संक्षेप से लिखिये कि इस उपन्यास के कौन कौन से पात्र चंदू के सहकारी और सहायक थे और इन्होंने क्या-क्या कार्य किये ? १५

(२) नीचे लिखे वाक्यों का आशय सरल भाषा में समझाइये—

(क) असती जारिणी के कटाक्ष के समान सौदामिनी अभ्र पटल में चमक-चमककर छिपती हुई मानों इस बात को प्रकट करती है कि चरित्र में दाग़ लग जाना ऐसी ही बुरी बात है कि मुँह छिपाना पड़ता है। ५

ख दिन में सूर्य का, रात में चन्द्रमा का दर्शन किसी किसी दिन घड़ी दो घड़ी के लिए वैसे ही घुणाक्षर-न्याय सा हो जाता है कि जैसे अन्यायी राजा के राज्य में न्याय और इन्स.फ़ कभी-कभी बिना जाने अकस्मात हो जाता है। ५

(ग) यह कल का पुतला जो अपने उस खिलाड़ी की सुध रक्खे तो खटाई में क्यों पड़े और कड़वा कसैला क्यों हो। ३

(घ) यदि जप, तप, संयम, व्रत कर ध्यावेगा तो इससे मुँह-माँगा फल पावेगा। ५

(३) क--धर्म-प्रवृत्ति, बुद्धि-प्रवृत्ति और आनुषंगिक-प्रवृत्ति किस को कहते हैं। ७

(ख)--मनको स्वच्छन्द बना देने से किस प्रकार की हानि सम्भव है और यदि किसी विषय में चिरकाल से संलग्न होने के कारण मन उकता जाय तो उस को पुनः उसी विषय में किस प्रकार संलग्न कर सकते हैं। ८

(४) शकुन्तला—(व्याजस्तति की भाँति) हाँ सत्य है, तुम राजा लोग ही तो सब बात के प्रमाण होते हो और तुम ही यथार्थ धर्म और लोक-रीति जानते हो, स्त्री दुखिया कैसी ही लाजवती और सुलक्षणी हो, तो भी धर्म नहीं जानती है, न सच बोलना जानती है। अच्छी घड़ी में मनभावते को ढूंढ़ने आई और अच्छे मुहूर्त में पुरुवंशी राजा से व्याह हुआ। तेरे मीठे बचनों ने मेरे विश्वास को जीत लिया था; परन्तु हृदय में छिपा हुआ वह अस्त्र निकला जिससे मेरे कलेजे को घाव लगा।

(क)—व्याजस्तुति किसे कहते हैं?

(ख)—"अच्छी घड़ी में मनभावते को ढूंढ़ने आई और अच्छे मुहूर्त्त में पुरुवंशी राजा से व्याह हुआ" इस वाक्य में कौन सा अलङ्कार है। उस अलङ्कार का लक्षण भी लिखिए। ४

(ग)—व्याजस्तुति, यथार्थ, सुलक्षणी, पुरुवंशी, धर्म-प्रवृत्ति, प्रबल, बुद्धिप्रवृत्ति, निरर्थक, इन पदों में जो समास हैं उनके नाम लिखिये। ४

(घ)--जिन शब्दों के नीचे रेखा खिंची है उनके कारक बताइये। ४

(ङ)—वाक्य, वाच्य, भूतकाल, सर्वनाम और अव्यय के लक्षण और भेद लिखिये। ५

(५) निम्नलिखित वाक्यों का स्पष्ट अर्थ लिखियेः—

(क)—ये लोग रेउड़ी के लिए मसजिद ढहानेवाले हैं।
सेतमेत की टांय-टांय कर रा है, प
खल उघरें तत्काल।
बात की करामात,
आज चकोर को दिन में चकाचौंधी कैसी?
पूत सपूते तो धन क्या, पूत कपूते तो धन क्या ॥६॥ ६

(ख)—अरुणोदय की तरुणाई से पूर्व दिशा मानो टेसू के रंग का वस्त्र पहने हुए दिननाथ सूर्य की अगवानी के लिये उद्यत सी हो अपनी सौत पश्चिम दिशा को ईर्षा से कलुषित कर रही है।

यहाँ पर पश्चिम दिशा को सौत क्यों कहा और ईर्षा से उसे कलुषित करने से क्या तात्पर्य है? ४

(ग)—कवन धर्म आचार, जग जीवन मम बंधु प्रिय।
करि जस लह्यो अपार, जो न दियेजलजात धुज।
यह किसने किसके प्रति कहा है और इस वाक्य से वक्ता का क्या आशय है? ३

(घ)—नीचे लिखे शब्दों का उपयोग अपने बनाये वाक्यों में कीजिएः—मष्ट मारे, रामरमौअल, तरहदारी, प्रतिनायक स्थानभ्रष्ट, धारापात, दुहाई, छेड़छाड़। ४

(६) समाचार-पत्रों से भाषा की उन्नति किस प्रकार हो सकती है? ६

(७) क—निम्नलिखित गद्य का सारांश अपनी भाषा में लिखिए—

प्रकृति का सदा से यह नियम चला आया है कि किसी देश की भाषा सदा एक रूप में नहीं रहती। प्रत्येक देश की भाषा के सम्बन्ध में इस नियम का उदाहरण मिल सकता है। बहुधा देखा जाता है कि देश के अभ्युत्थान के साथ-साथ भाषा भी उन्नति के शिखर पर चढ़ती जाती है; पीछे देश के अधःपतन होने पर जब उसकी पहली उन्नति के कोई चिन्ह नहीं रह जाते, तब केवल भाषा ही वहाँ की प्राचीन उन्नति की पूरी साखी भरती है। ६

(१) "उन्नति के" इस शब्द का कारक बताइये। किस शब्द से इसका सम्बन्ध है? २

(२) वाक्य में "भरती है" का कर्ता और कर्म बताइये। १

उत्तर

साहित्य २

(१) चन्दू वास्तव में सौ अजान के बीच एक सुजान था। सब से पूर्व इसका प्रभाव सेठ हीराचंद पर पड़ा, जिन्होंने इसकी विद्वत्ता और सहन-शीलतादि गुणों पर मोहित होकर अपने पौत्रों—ऋद्धिनाथ तथा निधि—का शिक्षक नियत किया। यही नहीं, प्रत्युत उसका प्रभाव अपने गुरु-शिरोमणि मिश्र तक पर पड़ा था। क्योंकि 'यह उनके शिष्यों में सबसे तीक्ष्ण बुद्धि और वाक्पटु तथा मिश्र जी में पूर्ण पांडित्य होते हुए भी, उनमें शास्त्रार्थ की शक्ति न थी। अतएव, इस विषय में अच्छी शक्ति रखने के

कारण पंडितजी प्रत्येक स्थान पर, जहाँ स्वयं जाते उसे अवश्य लेजाते थे। इन्होंने उसे अपना पट्टशिष्य बना लिया था। सेठजी के दोनों पौत्रों ने कुसङ्ग में पड़कर अपना सर्वस्व नष्ट करदिया था; किन्तु इसीकी बदौलत उनकी गई प्रतिष्ठा पुनः स्थापित हुई और इन्होंने अपना हितैषी समझकर चन्दू को ही अपना मुख्तार बनाया। चन्दू का प्रभाव नन्दू, बसन्ता तथा धनदासादि सेठ के पौत्रों को कुमार्ग में लेजानेवालों पर यह पड़ा कि उनको अपनी अनधिकारचेष्टा के लिये कठिन दंड भोगना पड़ा और बाबुओं को जाल में फँसाकर भी वे उनका कुछ बिगाड़ न सके।

सेठानी रमा भी इसके गुणों पर मुग्ध होकर सदैव सहायता पाकर कृतकार्य होती रही और दोनों बाबुओं का सुधार करा के ही मानी। चन्दू का मुख्य सहायक पंचानन था, जिसके द्वारा उसने एक मुक़द्दमे में फँसे हुए बाबुओं को मुक्त कराया। दूसरा सहायक वही रमा थी।

(२) क—कुलटा स्त्री के कटाक्ष के समान, बिजली अपनी चमक दिखाकर और बादलों में छिपकर यह बतला रही थी कि आचरण-भ्रष्ट होना ऐसा बुरा होता है कि अन्त में मुँह दिखाना भी कठिन हो जाता है।

(ख) जिस प्रकार, न्याय से विमुख राजाओं के यहाँ भी कभी, दैव-संयोग से ही, न्याय हो जाता है, उसी प्रकार कभी-कभी थोड़े समय के लिये सूर्य एवम् चन्द्रमा का प्रकाश हो जाया करता है।

(ग)—यदि, मनुष्य अपने शरीर के साथ खिलवाड़ करने वाले (परमात्मा) को न भूले तो भला फिर उस पर संकट ही क्यों पड़े।

(घ)—यदि (इस मणि को) नियमानुसार पूजा-प्रतिष्ठा के द्वारा सेवेगा तो निस्सन्देह यह तुझे इच्छानुसार फल देगी।

(३) क—१. परोपकार की इच्छा, भक्ति और न्यायपरता 'धर्म-प्रवृत्ति' में गिनी जाती हैं।

२. दृष्टान्त और अनुमानादि के द्वारा, उचित-अनुचित कामों की विवेचना, पदार्थ-ज्ञान और विचार-शक्ति का नाम 'बुद्धि-प्रवृत्ति' है।

३. विना बिचारे अनेक बार के देखने-सुनने आदि से जिस काम में मन की प्रवृत्ति हो, उसे आनुषंगिक (साथ होने वाली—गौण) प्रवृत्ति कहते हैं।

(ख)—यदि मन स्वच्छन्द बना दिया जाय तो बहुधा कुत्सित मार्ग में ही धावन करेगा। यदि रोका न जाय तो कुछ काल में आलस्य और अकृत्य का व्यसन उत्पन्न करके जीवन को व्यर्थ और अनर्थ-पूर्ण कर देगा।

यदि मन एक काम से थकित होकर उकता जाय तो उसको बहलाने और थकान दूर करने के लिए सत्सङ्ग या सद्ग्रन्थों तथा काव्यादि के पठन-पाठन में लगाया जाय। इसका फल उत्तम होता है। इससे हृदय की संतुष्टि और विचार की पुष्टि होती है। प्रकृति के किसी अङ्ग की वर्तमान दशा देखकर उसके पूर्वापर कार्य कारणादि की आलोचना करना भी लाभकारी है। इस प्रकार, इन्हीं

कार्यों के उलट-फेर करने से स्वभावत: आनन्द की उपलब्धि होगी।

(४)क—आदि में निन्दा या स्तुति प्रतीत हो, पर वास्तव में उसके विपरीति तात्पर्य हो उसे "व्याज-स्तुति" कहते हैं।

(ख)—इस पद में व्याज-स्तुति ही है; क्योंकि अच्छी घड़ी, अच्छा महूर्त तथा मनभावते शब्द देखने में स्तुति वाची हैं; परन्तु वह वास्तव में निन्दा के भाव में कहे गये हैं।

(ग)—व्याज-स्तुति—व्याज से स्तुति। यहाँ तृतीया तत्पुरुष समास है।

यथार्थ—यथा+अर्थ । यहाँ अव्ययीभाव समास है।

सुलक्षणी– सु+लक्षणी। कर्मधारय समास है।
पुरुवंशी – पुरुवंश का, षष्ठीतत्पुरुष।
धर्म—प्रवृत्ति-धर्म में हैं प्रवृत्ति जिसकी सो है धर्म-प्रवृत्ति। बहुब्रीह समास।
प्रबल – प्र+ बल = अव्ययी भाव समास।

बुद्धि-प्रवृत्ति—बुद्धि में है प्रवृत्ति जिसकी सो है बुद्धि प्रवृत्ति। बहुब्रीह समास।
निरर्थक – निः + अर्थक, अव्ययीभाव समास।

(घ)—सब—सम्बन्ध कारक। यथार्थ—कर्म कारक। कैसी कर्त्ताकारक। सच—कर्म कारक। अच्छी—अधिकरण कारक। राजा—करणकारक। मीठे—कर्त्ताकारक। कलेजा—कर्मकारक।

(ङ)—वाक्य—जिस पद-समूह के योग से कोई पूरा भाव प्रकाशित हो जाय, उसे वाक्य कहते हैं।

इसके तीन भेद हैं—

(१) सरल वाक्य, (२) जटिल व मिश्रित वाक्य और (३) यौगिक वाक्य।

वाच्य—क्रिया के जिस रूप से यह ज्ञात होता है कि उसमें कर्त्ता की स्वतन्त्र विवक्षा है वा कर्म की, उसे क्रिया का वाच्य कहते हैं। उसके तीन भेद हैं—(१) कर्तृवाच्य, (२) कर्म-वाच्य और (३) भाववाच्य।

भूतकाल—जो काल व्यतीत हो चुका हो, उसे भूतकाल कहते हैं। उसके आठ भेद हैं—(१) सामान्य भूत, (२) अपूर्णभूत, (३) सन्दिग्ध भूत, (४) पूर्णभूत, (५) हेतुहेतु-मद्भूत, (६) तत्कालिक भूत, (७) सम्भाव्य अपूर्णभूत और (८) सम्भाव्य पूर्णभूत।

सर्वनाम—संज्ञा के बदले में आनेवाले पदों को सर्वनाम कहते हैं। उसके कई भेद हैं, जैसे; पुरूषवाचक, सम्बन्धवाचक, प्रश्नवाचक, निश्चयवाचक, अनिश्चयवाचक और आदर-सूचक तथा निजत्व-सूचक।

अव्यय—जिस शब्द में बचन-भेद से वा प्रत्यय जुड़ने पर भी किसी प्रकार का विकार नहीं होता, वह अव्यय कहाता है। जैसे, ऊपर, नीचे, जब, कब आदि। उसके पाँच भेद हैं—(१) क्रिया-विशेषण, (२) सम्बन्ध-सूचक,

(३) उभयान्वयी, (४) विस्मयादि बोधक और (५) अधिकरण-बोधक।

(५) क—१-यह लोग थोड़ी सी बात पर ही आफ़त मचा देने वाले हैं।

२. व्यर्थ की बकवाद करता है।

३. दुष्ट मनुष्य तुरन्त ही जँच जाते हैं।

४. जिसकी बात बनी है उसे किसी बात की कमी नहीं।

५. यहाँ 'चकोर' चन्द के लिये कहा गया है। इसका भाव है—"कहिये चन्दजी महाराज आज किस कशम-कश में घूम रहे हो।

६. यदि पुत्र अच्छा है तो धन जोड़ना व्यर्थ है। स्वयम्, बहुत कमा डालेगा, और यदि पुत्र कपूत है तो भी द्रव्य एकत्रित करना ठीक नहीं; क्योंकि वह कम्बख्त सभी द्रव्य को बरबाद कर देगा।

(ख) चूँकि सूर्य नित्य पूर्व दिशा ही से निकलते हैं और पश्चिम दिशा में डूबते हैं। दोनों ही दिशाएँ, उनसे सुशोभित होती हैं, अतएव उनको सूर्य की पत्नियाँ कल्पित किया है। एक ही पति की दो पत्नियों में परस्पर सौत का नाता होता है और एक दूसरी के साथ ईर्षा रखती है। एक के यहाँ पति जाता है तो दूसरी जलती है। यही भाव, यहाँ प्रदर्शित किया गया है। सूर्य अब पूर्व दिशा में आ गये, अतएव उनकी दूसरी प्रेयसी पश्चिम दिशा ईर्षा करती है।

(ग) ये वाक्य (कीर्तिकेतु नाटक में) "मकरध्वज" ने "प्रेमभावन" से कहे हैं। जब मकरध्वज ने अपने प्रेमोद्गारों का संकेत किया, उस समय "प्रेमभावन" ने

नवपुर के राजकुमार "जगजीवन" के धर्माचार का उदाहरण देकर उसे उसका अनुकरण करने का आदेश दिया है। उसी समय क्रोधकर मकरध्वज ने प्रेमभावन से कहा है कि "भला ऐसा कौन धर्माचार है जिसमें जगजीवन मुझसे बढ़ा-चढ़ा है?" यही उक्त दोहे का आशय है।

(घ)—१—इस तरह मष्ट मारे कब तक बैठे रहोगे? उठो कुछ कार्य करो।

२. आपस का लेन-देन एक दिन रामरमौअल में भी फ़र्क डलवा देता है।

३. क्या तरहदारी के यही मानी हैं कि अपने पास आनेवाले से बोलो भी नहीं।

४ "सौ अजान और एक सुजान" नामक नाटक में "चन्दू" का प्रतिनायक नन्दू है।

५. शनिश्चर की दिशा जिस पर आती है, उसे स्थान भ्रष्ट करके छोड़ती है।

६. पहाड़ की चट्टान घोर धारापात के कारण बराबर फटती जाती है।

७. उसने सत्य की दुहाई देकर मिथ्याचार फैलाया है।

८. हिन्दू मुसलमानों में पुनः छेड़ छाड़ शुरू हो गई।

(६) समाचार-पत्रों के द्वारा देश के भिन्न-भिन्न भावों के अधिवासियों के विचार, उनकी सामाजिक और राजनैतिक स्थिति तथा साम्पत्तिक अवस्था की व्यवस्था प्रशस्त एवम् साहित्यक भाषा में अङ्कित हुआ करती है। अतएव उसे अधिक से अधिक पठित-समाज पढ़ा करता है। इस प्रकार दिनोंदिन समाज की भाषा परिमार्जित होती

जाती है। यदि भाषा-सम्बन्धी किन्हीं शब्दों, उनके भावों अथवा महाविरों के विषय में विवाद होता है तो भी बहुमत द्वारा निश्चित होकर एक ऋजु मार्ग खुल जाता है। भारतेन्दुजी से पूर्व प्रत्येक प्रान्त में प्रान्तीय भाषाओं ही का साम्राज्य था। यदि कोई विद्वान् किसी ग्रंथ का टीका लिखने बैठता था तो वह प्राय: अपनी ही प्रान्तीय भाषा में लिखता था, जिसको उसी के प्रान्त के लोग बहुधा समझ सकते थे। किन्तु जब से भारतेन्दुजी ने समाचार-पत्रों द्वारा देशवासियों की उन्नति का विचार किया तब से अब तक क्रमशः भाषा की उन्नति होती गई और अब यहाँ का गद्य-भाग बहुत ही प्रौढ़ हो गया है। सरस्वती आदि पत्रिकाओं ने तो भाषा के प्राञ्जल बनाने और उसे उन्नति-पथ पर अग्रसर करने में आशातीत सफलता प्राप्त की है। सच तो यह है कि भाषा को उन्नत बनाने के लिये समाचार-पत्र ही मुख्य हैं। इस विषय में ग्रंथ और व्याख्यानादि भी उतना कार्य नहीं कर सकते जितना कार्य समाचार-पत्र कर सकते हैं।

(७) क—"प्रत्येक देश की भाषा में समय-समय पर परिवर्तन होता रहता है, यह एक निश्चित और स्वयंसिद्ध नियम है। यदि काई खोज करे तो पद-पद पर इसके प्रत्यक्ष प्रमाण उपलब्ध हो सकते हैं। देशोन्नति के साथ भाषा की उन्नति भी कन्धे से कन्धा मिलाकर उसके साथ ही साथ अनुगमन करती है। देश की पूर्व उन्नति के दिग्दर्शन के लिये जब कोई भी साधन शेष नहीं रहता, तब केवल भाषा ही इस भेद का उद्घाटन करने में पूर्ण सहायक होती है।

(१) "उन्नति के" सम्बन्ध कारक है। उसका सम्बन्ध भाषा से है।
(२) "भरती है" का कर्त्ता "भाषा" और कर्म "साखी" है।

साहित्य ३

समय ३ घण्टे

[परीक्षक—पं० रामचन्द्र शुक्ल]

नीचे लिखे विषयों में से किसी एक विषय पर विस्तृत प्रबन्ध लिखिए जो कम से कम १०० पंक्तियोंका हो।

१. भारतवर्ष में धन का दुरुपयोग

२. किसी बन की शोभा

३. हिन्दू या मुसलमान कुटुम्ब में स्त्रियों की वर्तमान अवस्था और उसके कारण।

४. सदाचार क्या है और मनुष्य को सदाचारी होने की क्या आवश्यकता है?

प्रश्न-पत्र सं० १९७५

साहित्य १

[परीक्षक—पं० रामनरेश त्रिपाठी]

समय ३ घंटे

१. नीचे लिखे पद्यों का अर्थ लिखिये।

(क) जिस राज्य के हित शत्रुओं से युद्ध है यह हो रहा।
उस राज्य को अब इस भुवन में कौन भोगेगा अहा !॥

इस पद्य में ऐसा कौन शब्द है जिससे शिथिलता प्रकट होती है।

(ख) इसके अनन्तर मुदित माधव कम्बुरव करने लगे।
प्रण के विषय में पांडवों का सोच सा हरने लगे॥
प्रिय पाञ्चजन्य करस्थ हो मुखलग्न यों शोभित हुआ।
कलहंस मानो कंजवन में आ गया लोभित हुआ॥
इस पद्य में कौन अलंकार है? "कंज" के साथ "वन" शब्द देने का क्या अभिप्राय है?

(ग) जिस ओर सेना थी गजों की पर्वतों के सम अड़ी।
उस ओर ही रथ ले गये हरि शीघ्रता करके बड़ी॥
तब पार्थ बाणों से मतंगज यों पतन पाने लगे।
घन रविकरों से छिन्न मानो भूमि पर आने लगे॥
इसमें कौन-कौन से अलंकार हैं? लक्षण-सहित लिखिये?

(घ) नास्तिक मनुज भी विपद में करते विनय भगवान से।
देते दुहाई धर्म की त्यों आज तुम भी ज्ञान से॥
लज्जा नहीं आती तुम्हें उपदेश देते धर्म का।
आती हँसी तुम पापियों से नाम सुन सत्कर्म का॥
यह किसने किससे कहा? इसके पहले की कथा संक्षेप से लिखिये। यह कौन छन्द है? लक्षण-सहित बतलाइए।

(२) महाराणा प्रताप को प्राण-त्याग के समय किस बात का अधिक कष्ट था और वह कैसे दूर हुआ?

(३) नीचे लिखी चौपाइयों का अर्थ लिखिये—

कपट कुचाल सींव सुरराजू,
पर अकाज प्रिय आपन काजू॥
काक समान पाकरिपु रीती,
छली मलीन कबहुँ न प्रतीती।

राग रोष इरिषा मद मोहू,
जनि सपनेहुँ इनके बस होहू ॥
सकल प्रकार बिकार बिहाई,
मन क्रम बचन करेहु सेवकाई ।
तुम्ह कहँ बन सब भाँति सुपासू,
सँग पितु मातु राम सिय जासू ॥
जेहि न राम बन लहहिं कलेसू,
सुत सोइ करेहु इहइ उपदेसू ।

अंतवाली चार चौपाइयाँ किसने, किससे, किस अवसर पर कहीं हैं ?

(४) नीचे लिखी चौपाइयों में कौन-कौन से अलंकार हैं--

व्याकुल राउ सिथिल सब गाता,
करिनि कलपतरु मनहुँ निपाता ।
दुइ कि होइ इक समय भुआला,
हँसब ठठाइ फुलाउब गाला ।
चारु चरन नख लेखति धरनी,
नूपुर मुखर मधुर कबि बरनी ।
मनहुँ प्रेमबस बिनती करहीं,
हमहिं सीय पद जनि परिहरहीं ॥

(५) अयोध्या-काण्ड में भरत का चरित्र जितना वर्णित है लिखिये और यह भी लिखिये कि भरत में कौन कौन से सद्‌गुण थे, प्रत्येक का उदाहरण दीजिए।

(६) नीचे लिखे छंद का अर्थ लिखिये ।

कूरम कमल कमधुज है कदम फूल
गौर है गुलाब राना केतकी बिराज है ।

पाँड़री पँवार जूही सोहत है चंदावत
सरस बुंदेला सो चमेली साजबाज है।
भूषन भनत मुचकुन्द बड़गूजर है
बघेले बसंत सब कुसुम समाज है।
लेइ रस एतेन को बैठि न सकत अहै
अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है॥

इसमें कौन सा अलंकार है? "चंपा सिवराज है" कहकर कवि ने क्या विशेषता प्रकट की? "राना केतकी बिराज है" में क्या कवि का कोई विशेष आँतरिक भाव झलकता है? और वह क्या है? ऊपर के छंद का नाम और लक्षण लिखिये।

(७) सर्वसाधारण लोग गद्य से पद्य को अधिक पसंद क्यों करते हैं?

(८) पद्य-रचना के लिए खड़ी बोली से ब्रजभाषा में कौन-कौन सी विशेषताएँ हैं?

(९) दोहा, चौपाई, कवित्त, छप्पय, सवैया के लक्षण लिखिए और ऐसे उदाहरण देकर, जो इस प्रश्नपत्र में न आए है, स्पष्ट कीजिए।

उत्तर

साहित्य १

(१) क—इस पद्य की दूसरी पंक्ति में प्रयोग किये गये "राज्य" शब्द ने कुछ शैथिल्य उत्पन्न कर दिया है। "जिस राज्य के हित शत्रुओं से यह युद्ध होरहा है, अहा ! अब उसको इस भुवन में कौन भोगेगा ?" जब कवि का भाव इतने ही से पूर्ण होसकता है तो फिर 'उस' शब्द के साथ दुबारा 'राज्य' शब्द का प्रयोग करने की क्या आवश्यकता थी ? वास्तव में पद्य में यही गुण होता है कि थोड़े शब्दों में भाव अधिक आजाय, न कि एक भाव के कई शब्द एकत्रित करके उसे व्यर्थ का विस्तार दिया जाय। किन्तु उक्त पद्य में प्रायः इस बात पर ध्यान नहीं दिया गया है।

अर्थ—जिस राज्य की प्राप्ति के लिये यह इतना बड़ा युद्ध छिड़ चुका है, अब प्रिय पुत्र अभिमन्युकी मृत्यु के पश्चात त्रैलोक्य में भी कोई उसका उपभोग करनेवाला दिखाई नहीं देता। ऐसी अवस्था में अब युद्ध करना ही व्यर्थ है।

(ख) इस पद्य में "पाञ्चजन्य" और "कर" उपमेयों में कलहंस और कंज-बन की सम्भावना की गई है, अतएव "उत्प्रेक्षा" अलङ्कार है और "मानों" उत्प्रेक्षा-वाचक शब्द का प्रयोग होने से "वाच्योत्प्रेक्षा" है। एक वस्तु कलहंस की उत्प्रेक्षा दूसरी वस्तु "पाञ्चजन्य" आदि में की गई है। अतएव वस्तूत्प्रेक्षा है। "कंज" के साथ "बन"

शब्द का प्रयोग इसलिये किया गया है कि उपमेय, उँगलियाँ हैं-, जो कई हैं—एक ही नहीं है, और कमल भी एक नहीं, बल्कि उनका वन है। अतएव कविने कंज के साथ वन का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त "बन" शब्द यहाँ श्लिष्ट भी है, क्योंके इसका दूसरा अर्थ जल भी है, जल और कमल का साहचर्य्य होने के कारण भी यह प्रयोग उत्तम हुआ है।

अर्थ—इसके पश्चात् महाराज कृष्ण भी प्रसन्नता पूर्वक शंखध्वनि करके पाण्डवों का प्रण-विषयक सोच दूर करने लगे। उस समय उनका प्यारा "पाञ्चजन्य" मुट्ठी में दबकर तथा मुँह में लगकर इस प्रकार सुशोभित होरहा था, जिस प्रकार सुन्दर हंस कमल-बन में सुशोभित होरहा हो।

(ग) श्रीकृष्ण भगवान बड़े वेग के साथ, रथ को उसी ओर बढ़ा लेगये, जिस ओर पर्वताकार हाथियों की सेना डटी हुई थी। उस समय अर्जुन के बाणों की मार से मस्त हाथी इस प्रकार गिरने लगे जिस प्रकार सूर्य की किरणों से बिधकर पृथ्वी पर बादल आ जाते हैं।

यहाँ पहले चरण में पूर्णोपमा अलङ्कार है। गजों की सेना, उपमेय; पर्वत उपमान;सम, वाचक ; और अड़ी, साधारण धर्म है। यहाँ "सम" उपमा-वाचक शब्द का प्रयोग हुआ है, अतएव आर्थीउपमा है और उत्तरार्द्ध में मत्तगजों में बादलों की सम्भावना की गई है, मानो उत्प्रेक्षा-वाचक शब्द भी है। अतएव वाच्योत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

(घ)—जो लोग ईश्वर की आस्ता ही को स्वीकार नहीं करते वह भी आपत्ति पड़ने पर राम राम की रट लगाते हैं। इसी प्रकार, आज तुम भी ज्ञानी बनकर धर्म की दुहाई दे रहे हो। तुम्हें धर्म-सम्बन्धी उपदेश देते हुए लज्जा भी नहीं आती। सच कहता हूँ, तुम पापियों के मुख से सत्कार्य का नाम सुनकर मुझे हँसी आती है।

जिस समय भूरिश्रवा और सात्यकि में घमासान युद्ध हो रहा था, उस समय समस्त सेना लड़ना छोड़ कर उसी युद्ध के देखने में निरत हो रही थी। दोनों वीरों के रथाश्व हत हो चुके थे और दोनों ही घावों से व्यथित थे। इतने पर भी दोनों बाहु-युद्ध में सन्नद्ध हो रहे थे। जब सात्यकि श्रोणित से सनकर श्रमित हो गया और भूरिश्रवा ने खड्ग से उसका शीश काटना चाहा, उसी समय धनंजय ने विशिख द्वारा उसका कर काट दिया। वृषसेन, कर्ण तथा कृपादि धनञ्जय के इस कार्य को धर्मयुद्ध के विरुद्ध बताकर उनकी निन्दा करने लगे। तब अर्जुन ने अभिमन्यु-बध के समय के अधर्म-युद्ध की ओर संकेत करके ये वाक्य कहे और इस कार्य को निजजनों का त्राण बताकर न्यायोचित बतलाया यह छन्द 'हरिगीतिका' है। इसका लक्षण पूर्व ही लिख चुके हैं।

(२) महाराणा प्रताप और उनके साथियों ने 'पिछोला' झील के किनारे पर कई झोपड़े डाल रक्खे थे, जिनमें वे अपने 'विख' के दिन व्यतीत कर रहे थे। उनमें वे अँधेरे तथा मेंह में सिर छिपाकर बैठ जाते थे। एक दिन की बात है कि

उनके राजकुमार को झोपड़े से निकलते हुए, इस बात का ध्यान न रहा कि यह झोंपड़ा नीचा है। अतएव, उनके साफ़े में एक बाँस अटक गया। वे उसको खींचते हुए चले गये। महाराणा को अपने पुत्र के इस कार्य में अकर्मण्यता, आलस्य एवम् आरामतलबी के लक्षण दिखाई देने लगे और इस प्रकार उन्होंने समझा कि अब हमारे उद्देश्य की पूर्ति हमारी भावी सन्तति न कर सकेगी। यही घटना थी जो उन्हें मरण-समय दुःख दे रही थी। जब सरदारों ने (मरते समय) उनसे पूछा कि, महाराज! क्या कारण है कि आपका प्राणान्त नहीं होता? तब महाराणा ने इसी घटना को अपने कष्ट का कारण बताया था। पर जब सरदारों ने विश्वास दिलाया कि हम सब राजकुमार को सदैव आपके उद्देश्य की सफलता की ओर ही लगाये रक्खेंगे कभी अकर्मण्य और आरामतलब न होने देंगे, तभी राणा के प्राण निकल गये।

(३) बस, इन्द्र पर संसार की कुचालों का सीमान्त हो जाता है। वह परले सिरे का कपटी और कुकर्मी है। उसे सदैव अपनी स्वार्थ-सिद्धि और दूसरे के अकाज ही की चिन्ता रहती है। वह काक के समान अत्यन्त कपटी, मलीन तथा विश्वास-रहित है।

हे पुत्र! राग, रोष, ईर्ष्या, मद और मोह, इन दुष्ट विकारों के वश में तुम कभी न होना और सदैव मनसा, बाचा, कर्मणा से राम की सेवा करना। विश्वास रक्खो, तुमको वन में किसी भी प्रकार का कष्ट न होगा। सभी सुविधा रहेगी, क्योंकि तुम्हारे

साथ पिता-माता के समक्ष राम-जानकी मौजूद ही हैं। मैं तुम्हें भी समझाये देती हूँ। तुम सदैव, इस प्रकार की चेष्टा करना, जिससे वन में उन्हें किसी भी प्रकार का कष्ट न हो।

अन्तवाली चारों चौपाइयाँ वन-गमन के समय लक्ष्मणजी से उनकी माता सुमित्राजी ने कही हैं।

(४) १. यहाँ राजा दशरथ में कल्पतरु की सम्भावना की गई है। 'मानो' उत्प्रेक्षा-वाचक शब्द भी प्रयोग में आया है। अतएव वाच्योत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

२. प्रसिद्ध लोकोक्ति का प्रयोग होने के कारण, यहाँ लोकोक्ति अलङ्कार है।

३. इसमें अनुप्रास और उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

(५) भरत के चरित्र पर प्रकाश डालते हुए उनके सद्गुणों का वर्णन पहले किया जा चुका है।

(६) कविवर 'भूषण' कहते हैं—"कछवाहवंशीय जयपुराधीश कमल है। कबन्धज (जोधपुर के राजा) कदम्ब के पुष्प हैं, गौर क्षत्रिय गुलाब हैं, उदयपुर नरेश महाराणा) कटीली केतकी हैं। प्रमरवंशीय क्षत्रिय पाँडुरी हैं, चन्द्रावत राजपूत जूही हैं, राज सी ठाठवाले बुंदेला चमेली हैं, गूजर मुचकन्द हैं और बघेले लोग वसन्त ऋतु में विविध प्रकार के खिलनेवाले, अन्य प्रकार के सब फूलों के समान हैं। औरङ्ज़ेब रूपी भ्रमर, इन सब पुष्पों का पराग लेकर शिवाजी-रूपी चम्पा के पुष्प पर बैठ भी नहीं सकता है।

जैसे चम्पा के पास भ्रमर नहीं जा सकता और अन्य पुष्पों का रस स्वतंत्रता से चख सकता है, इसी

तरह अन्य राजाओं को तो उसने अपने वश में कर लिया है, किन्तु वह (औरङ्गज़ेब) शिवाजी की तरफ़ आँख उठाकर देख भी नहीं सकता। इसी प्रकार से राना को केतकी मानने में भी यही विशेषता है कि जिस प्रकार केतकी का रस तो भ्रमर ले लेता है किन्तु तीक्ष्ण कण्टकों की मुसीबत सहन करने के पश्चात्। इसी प्रकार औरङ्गज़ेब ने राना को जीता तो है, किन्तु कठिनाई से जीता है।

यहाँ "समअभेदरूपक अलङ्कार" है; क्योंकि यहाँ शिवाजी, उपमेय और चम्पा, उपमान की पूरी पूरी एक-रुपता दिखाई गई है। अर्थात्, चम्पा में तीक्ष्ण सुगन्ध तथा शिवाजी में प्रचंड-प्रताप की स्थिति होने से दोनों में पूर्ण साम्य है। यह मनहरण छन्द है। इसका लक्षण पहले लिख चुके हैं।

(७) प्रायः लोग गद्य से पद्य को विशेष महत्व देते हैं। इसका कारण यही है कि पद्य में गद्य से कई विशेषताएँ हैं। उन में से कुछ यह हैं :—

१. पद्य में थोड़े से शब्दों में अधिक बातें कही जाती हैं।

२. पद्य पढ़ने में भला मालूम होता है, क्योंकि उसकी रचना क्रमबद्ध होती है।

३. पद्य के कंठाग्र करने में सुविधा होती है।

४. पद्य द्वारा थोड़े समय में ही अधिक उपदेश दिया जा सकता है।

५. पद्य के द्वारा, भाषा में स्थिरता एवम् प्रौढ़ता आती है।

६. पद्य का उपदेश कान्ता के उपदेश के सदृश प्रिय होता है, अतएव उसका प्रभाव अधिक और शीघ्र पड़ता है।

(८) खड़ीबोली से ब्रजभाषा में निम्नलिखित विशेषताएँ हैं:—

१. ब्रज-भाषा में कवियों को स्वतन्त्रता अधिक रहती है; क्योंकि वे शब्दों का रूप आवश्यकतानुसार तोड़-मरोड़ सकते हैं।

२. ब्रज-भाषा के क्रिया-पद, खड़ीबोली के क्रियापदों से सुगम होते हैं।

३. उसकेबचन और कारकों के प्रयोग में भी अधिक सुविधा है।

४. कर्मकारक की विभक्ति 'का' का कार्य प्रायः "हि" से, 'से' का कार्य "ते" से लिया जाता है और कहीं-कहीं ऐसी विभक्ति बिलकुल छिपा दी जाती है, जो खड़ीबोली में नहीं छिप सकती।

५. ब्रजभाषा के छन्दों मे बहुधा दीर्घ का ह्रस्व और ह्रस्व का दीर्घ पढ़ सकते हैं, किन्तु खड़ीबोली में ऐसा नहीं होसकता।

(९) दोहा, कवित्त और छप्पय के लक्षण पहले लिखचुके हैं।

चौपाई— सोलह मात्राओं का चौपाई छन्द होता है।

इसके अन्त में जगण और तगण का निषेध है। यथा:—

थके नयन रघुपति छबि देखी। पलकन हू परिहरी निमेषी॥
अधिक सनेह देह भइ भोरी। शरद शशिहि जनु चितव चकोरी॥

सवैया—२२ वर्ण से लेकर २६ वर्ण तक के कई एक वर्ण-बृत्त सवैया के नाम से प्रख्यात हैं। नीचे उसके एक भेद दुर्मिल सवैया का उदाहरण उद्धृत करते हैं। वह आठ सगण का होता है। यथा:—

उन चंचल-चारु दृगंचल की छवि निश्चल है हिय में उमहै।
अब ठौर न और रह्यो सजनी कुल-कानि जहां सुखमानि रहै॥

नहिं अर्थ अनर्थ को ध्यान रह्यो, उपदेशहु को कछु काम न है।
लव लागी रहै बस प्रीतम सो, तजि याहि नहीं मन और चहै॥

साहित्य २

[परीक्षक—पं० कृष्णशंकर तिवारी, बी. ए.]

समय ३ घंटे

(१) नर की अरु नलनीर की, गति एकै कर जोय।
जेतो नीचो ह्वै चले, तेतो ऊँचो होय॥

ऊपर लिखे हुए दोहे का आशय बताइये और दृष्टान्त में सेठ हीराचन्द्र के सद्गुणों का वर्णन कीजिये। १०

(२) न केवल विद्या ही के कारण इनकी सब कोई प्रशंसा करते थे, किन्तु अनेक असाधारण लोकोत्तर गुणों से भी शान्ति और क्षमा के यह आधार थे।

(क) यह वाक्य किस विद्वान् के लिए कहा गया है और विद्या के अतिरिक्त उनके कौन से असाधारण गुण थे। ८

(ख) ऊपर के वाक्य में "इनकी" और "गुणों से" इन शब्दों के कारक बताइये और यह भी लिखिये कि प्रत्येक पद में वह कारक किस अर्थ में आया है। ३

(ग) उपर्युक्त वाक्य की पूर्ति इस प्रकार होती है, "शान्ति और क्षमा के यह आधार थे" यहाँ कर्ता और क्रिया के वचन भिन्न-भिन्न क्यों रक्खे गये हैं। २

(३) नीचे लिखे वाक्यों का आशय सरल भाषा में समझाइये—

(क) शनैः शनैः उदयाचल के बालमन्दार के फूलों का गुच्छा सा, अथवा पूर्व दिगङ्गना के लिलार का रोली का लाल बेंदा सा, या उसी के कान का कुण्डल सा, या आसमान गुम्बज़ पर सोने का कलश सा, अथवा देवाङ्गनाओं के मस्तक का सीसफूल सा, अथवा चराचर विश्वमात्र को निगल जानेवाले काल महासर्प का अंडा सा, कमल के वन को प्रफुल्लित करता हुआ चक्रवाक के विरहाग्नि को बुझाता हुआ, जंगम जगत मात्र के नेत्र को प्रकाश पहुँचाता हुआ, श्रोत्रिय धर्मशील ब्राह्मणों को सन्ध्या और अग्निहोत्र आदि कर्म में प्रवृत्त करता हुआ सूर्य का मण्डल पूर्व दिशा में सुशोभित होने लगा। ८

(ख) एक तो अत्यन्त दण्डायमान दिन उसमें ललाटन्तप चण्डांशु के प्रचण्ड आतप के ताप से सन्तप्त शीतलच्छाया का सहारा लिये हुए यह जंगम जगम भी स्थिर भाव धारण कर मौन अवस्था से दुःखदायी ग्रीष्म के उच्चाटन का मानो मन्त्र सा जप रहा है। ६

(ग) देवता दैत्य एक ही हैं। निस्सन्देह, स्वभाव करके वे दैत्य कहलाये, वे देवता कहलाये। इसमें अपनी ही खोट है कि अहंकार करके और अपने पराक्रम के गर्व से नारायण आश्रित नहीं हैं, स्वाधीन है। और देवता आर्तवन्त हैं, कष्ट पायकर नारायण की शरण जाते हैं। श्रीमहाराज को अपने बाने की लाज से उनकी सहाय करनी होती है। ६

(घ) न्यायपरता यद्यपि सब वृत्तियों को समान रखनेवाली है, परन्तु इसकी अधिकता से भी मनुष्य के स्वभाव में मिलनसारी नहीं रहती, क्षमा नहीं रहती। ५

(४) क – प्रश्न ३ "ख" के वाक्य में "जप रहा है" इस क्रिया का कर्त्ता और कर्म बताइये । इस वाक्य में कौन सा अलंकार है ? उस अलंकार का लक्षण लिखिये । ५

(ख) शीतलच्छाया, तेजोमय, निस्तार, प्राङ्मुख -- इनके प्रत्येक शब्द की सन्धि का नियम लिखिये । ४

(ग) चतुर्भुज, अन्नजल, चन्द्रमुख, निर्भय, कालचक्र, लुप्तलोचन, स्वार्थचित्त, इन पदों में जो समास हैं, उनके नाम लिखिये । ७

(५) क—कहा जा सकता है कि हिन्दी नहीं थी, बाबू हरिश्चन्द्र ने उसे पैदा किया । यदि होती, तो राजा शिवप्रसाद नागरी अक्षर के बड़े प्रेमी होकर उर्दू में क्यों उलझे रहते ।

राजा शिवप्रसाद का हिन्दी के विषय में क्या मत था और यदि यह माना जाय कि उक्त महोदय हिन्दी के सेवक और नागरी अक्षरों के प्रचार के पक्ष में थे, तो यह किस प्रकार सिद्ध होगा कि "हिन्दी नहीं थी, बाबू-हरिश्चन्द्र ने उसे पैदा किया ।" १०

(ख) कहाँ कहाँ के चौपट चरन इकट्ठे भये हन, अस मन होत है कि इन हरामखोरन का, आपन बस चलत, तो कालापानी पठै देतेन ।

इसका व्याकरण के अनुसार शुद्ध भाषा में अनुवाद कीजिये और यह लिखिये कि यह किसने किस स्थान पर किनके सम्बन्ध में कहा है । ६

(६) क – निम्नलिखित वाक्यों का अर्थ लिखियेः—

स्वर्ग में रहकर ।कोई स्वर्ग का आदर ठीक नहीं करता ।

कहाँ झगड़ा पिजावे का निकाला बाग़ का काग़ज ।

समाचार-पत्र राज्य का प्रधान मन्त्री और मध्यस्थ होता है । वाणिज्य का तो जीवनस्वरूप है ।

कालचक्र की गति सदा एक सी रहे तो वह चक्र क्यों कहा जाय । ६

(ख) नीचे लिखे पदों का उपयोग अपने बनाये वाक्यों में कीजिये:—

फूँक-फूँककर पाँव रखना, बाल बाँकना, सठिया जाना, दाँत खट्टे करना, खुचुर करना, कपोल-कल्पना, माथे थोपना, हाँथ पर हाँथ धरे । ८

(७) "वाक्य-विन्यास" किसे कहते हैं ? शब्दों के क्रम तथा प्रत्येक वाक्य के उच्चारण में स्वर-भेद से नीचे लिखे वाक्यों के क्या अर्थ होते हैं:—

(१) वह क्या करता है ? (२) क्या ! वह करता है ? (३) वह करता है क्या ?

उत्तर

साहित्य २

(१) मनुष्य की तथा जल के नल की बिलकुल एक ही सी दशा होती है । वे जितने ही नीचे होकर चलते हैं, उतने ही ऊँचे तक पहुँच जाते हैं । नल का यह नियम है कि जितने वह

गहरे से लगाया जाता है, उतने ही ऊँचे तक पानी दे सकता है। इसी प्रकार जो लोग अपने को जितना छोटा समझते हैं वह उतने ही ऊँचे और प्रतिष्ठित समझे जाते हैं।

सेठ हीराचन्द, योग्य विद्वानों के सत्सङ्ग में रुचि रखने के कारण इतना बहुश्रुत हो गया था कि साधारण योग्यतावाले ग्रंथ-चुम्बक उसके सम्मुख मुख नहीं खोल सकते थे। परन्तु वह अपनी योग्यता के अभिमान से किसी का अपमान नहीं करता था। योग्यता के अनुसार साक्षर-मात्र का सम्मान करता था। यहाँ तक कि कोई शिष्ट व्यक्ति द्वेषीवर्ग का भी हो तो भी वह उसकी प्रतिष्ठा रखता था। उसमें बनावट का नाम भी न था। कुराह में उसकी कौड़ी भी न जाती थी। समयानुसार धर्म, अर्थ और काम-क्रम से तीनों का सेवन करता था और सदैव अपने को सब से तुच्छ समझता था। यही कारण था कि सदैव उसका सम्मान होता था। वह विद्वानों का सहायक, दीनों का पालक, दया का अवतार और करुणा का सागर था। उसकी दी हुई वृत्ति से कई पाठ-शालाएँ और धर्मशालाएँ चलती थीं। कहाँ तक कहें, वह प्रायः सभी लोकोपकारी कार्यों में सदैव दत्त-चित्त रहता था।

(२) क—यह वाक्य विद्वन्मण्डली-मण्डन श्रीशिरोमणिजी मिश्र के लिये कहा गया है। विद्या के अतिरिक्त उनमें बहुत से असाधारण गुण थे। शान्ति और क्षमा के वे आधार थे। तृष्णा उन्हें छू तक न गई थी। हठ और दुराग्रह का उनमें नाम भी न था। उदारता, क्षमा,

उपशम, शील, सौजन्य और धर्मप्रियतादि गुण उनमें कूट-कूटकर भरे थे।

(ख) 'इनकी' में सम्बन्ध कारक है और प्रशंसा से इसका सम्बन्ध है। 'गुणों से' अपादानकारक है। यहाँ 'गुणों से' का अर्थ अतिरिक्तवाची है। अर्थात् अनेक असाधारण गुणों में से ये दो गुण पृथक् करके उनको मुख्यता दी गई है।

(ग) चूँकि "यह" शब्द आदर-प्रदर्शक सर्वनाम है, अतएव क्रिया बहुवचन कर दीगई है।

(३) क—धीरे-धीरे उदयाचल से सूर्य उदय हुआ। उस समय की शोभा देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानों यह नव विकसित मन्दार पुष्पों का गुच्छा है, या पूर्व रूपी दिशा-बधूटी के मस्तक का लाल टीका है, या उसी नायिका के कान का कुण्डल है, या आकाशरूपी मन्दिर के गुम्बज पर रक्खा हुआ कंचन का कलश है, या सुर-वनिताओं के शीश का शीशफूल (गहना विशेष) है। अथवा सम्पूर्ण जड़-जङ्गम को डस जानेवाले कालरूपी कराल सर्प का अंडा है। वह कमलों को खिलाता, चकवा-चकवी को संयोग-सुख लाभ कराता, सभी नेत्रधारी जीवों की आँखों में प्रकाश को उदित कराता हुआ वेद-विहित कार्य करनेवाले ब्राह्मणों को कर्मकाण्ड में लगाकर पूर्व दिशा को सुशोभित करने लगा।

(ख) एक तो ग्रीष्मकाल के लम्बे-लम्बे दिन ही कष्ट देने और काम-काज में फँसाये रखने के लिये कुछ कम

किसी ह्रस्व स्वर के पीछे 'छ' होता है तब उस छ के पहले च बढ़ जाता है।

तेजः+मय=तेजोमय, विसर्ग-सन्धि। यदि अकार पूर्वक विसर्ग के आगे स्पर्श वर्णों का तीसरा, चौथा, पाँचवाँ अथवा कोई अन्तस्थ वर्ण पास हो तो विसर्ग का 'ओ' हो जाता है।

निः+तार=निस्तार, विसर्ग-सन्धि। यदि विसर्ग के आगे त, थ अथवा स हो तो विसर्ग का स हो जाता है।

प्राक्+मुख=प्राङ्-मुख, व्यज्जन-सन्धि। जब किसी वर्ण के पहले अक्षर के आगे कोई अनुनासिक वर्ण रहे तो पहले अक्षर के स्थान में उसी वर्ग का पंचम वर्ण हो जाता है।

(ग) चतुर्भुज—चार हैं भुजा जिसके सो है चतुर्भुज। वहुब्रीह समास।

अन्नजल—अन्न और जल; द्वन्द समास।

चन्द्रमुख—चन्द्र ही है मुख; कर्मधारय समास।

निर्भय—निः+भय--बिना भय के; अव्ययीभाव समास।

कालचक्र—काल का चक्र। षष्ठी तत्पुरुष समास।

लुप्तलोचन—लुप्त हैं नेत्र जिसके सो है लुप्तलोचन। बहुब्रीह समास।

स्वार्थ-चित्त—स्वार्थ ही है चित्त। कर्मधारय समास।

(५) क—हिन्दी के विषय में शिवप्रसादजी का मत था कि लिपि नागरी हो और भाषा ऐसी मिली-जुली और रोज-

मर्रा के बोलचाल की कि किसी दल वाले को एत-राज़ न हो।

भारतेन्दुजी ने हिन्दी को पैदा किया, इस विषय में बालमुकुन्दजी गुप्त कहते हैं कि यदि राजा साहब से पूर्व हिन्दी होती तो राजा शिवप्रसादजी नागरी अक्षरों के प्रेमी होकर भी उर्दू में क्यों उलझे रहते ? वास्तव में यह ठीक है कि राजा शिवप्रसादजी से पूर्व लेखकों में से लल्लूजीलाल तथा सदल मिश्रकी भाषा तो एक तरह से व्रज-भाषा और खड़ीबोली के बीच की खिचड़ी भाषा थी, जिसका प्रचार विशेष रूप से होता हुआ नहीं देखा गया। हाँ, राजासाहब (लक्ष्मणसिंह) की भाषा वास्तव में प्राञ्जल एवम् परिमार्जित थी; किन्तु यथोचित प्रचार उसका भी नहीं हुआ। राजा शिवप्रसादजी चाहते तो उसका अनुकरण करके अपनी भाषा को सँभाल सकते थे; किन्तु वह तो फ़ारसी अरबी के शब्दों की भर-मार ही करते रहे। सबसे प्रथम हिन्दी का ऐसा नमूना, जिसका अनुसरण अनेक लेखकों ने किया "भारतेन्दुजी" ने ही उपस्थित किया। उन्होंने यही नहीं किया, बल्कि हिन्दी में नाटक, इतिहास आदि के अधिक उपयोगी ग्रंथ लिखकर हिन्दी को समृद्धिशालिनी बनाया और बहुत से लुप्त ग्रंथों को फिर से खोज निकाला। अतएव यही कहा जाता है कि हिन्दी नहीं थी, भारतेन्दु जी ने ही उसे पैदा किया।

(ख) कहाँ कहाँ के चौपटचरण इकट्ठे हुए हैं ? ऐसा मन होता है कि अपना वश चलता तो इन हरामख़ोरों को कालेपानी भेज देता।

(६) क—जो वस्तु प्राप्त हो जाती है, प्रायः लोग उसकी यथोचित् क़द्र नहीं करते।

कहाँ झंझट से निकाला हुआ बाग़ का काग़ज़! अर्थात् वह काग़ज़ जो बड़ी कठिनाई से प्राप्त हुआ। उसका कथन क्या किया जाय।

समाचार-पत्रों का वही स्थान है, जो राजा के मुख्य मन्त्री और किसी मध्यस्थ का होता है। अर्थात् उसके लेखों से उत्तम सम्पतियाँ मिलती हैं, आलोचनाओं के द्वारा झगड़ों के समझौते हो जाते हैं। इसी प्रकार उससे वाणिज्य व्यापार को भी पूरा प्रोत्साहन मिलता है।

यदि समय एक ही स्थिति पर रहे तो भला उसका नाम कालचक्र ही क्यों रक्खा जाता।

(ख) इस नाज़ुक समय में सभी को फूँकफूँककर पाँव रखना चाहिये।

मेरे जीते जी कोई तुम्हारा बाल भी बाँका नहीं कर सकता।

बुढ़ापे में लोग सठिया जाते हैं।

महाभारत के युद्ध में अर्जुन ने बड़े बड़े योद्धाओं के दाँत खट्टे कर दिये।

बसन्ता सदैव चन्द्र के साथ खुचुर* करता था।

विद्वानों की स्वर्ग-नर्क-सम्बन्धी सभी बातें कपोल-कल्पनामात्र हैं।

मैं ख़ूब समझता हूँ, तुम सब कलङ्क मेरे ही माथे थोपना चाहते हो।

---

*छेड़छाड़

अथवा—रामू ने सारा कलङ्क चन्द्र के माथे थोप दिया, आप साफ़ बच गया।

यह साल रोज़गारियों के लिये बड़ा बुरा है। सभी हाँथ पर हाँथ धरे बैठे हैं।

(७) वाक्य के उद्देश्य और विधेय तथा उसके प्रत्येक अंशों के अलग-अलग दिखाने का नाम "वाक्य-विन्यास है"।

१. इस वाक्य को सुनकर श्राता का कर्तव्य होगा कि वह यह खोज करे कि किसके सम्बन्ध में पूछा जा रहा है; उसके द्वारा जो कार्य हो रहा है, वह क्या है ? यहाँ प्रश्न-कर्ता अन्यपुरुष के कार्य से नितान्त अनभिज्ञ है।

२. इस वाक्य में अन्यपुरुष के कार्य्य का प्रश्न-कर्ता को ज्ञान है। केवल कार्यक्रम जारी है या नहीं, इस सम्बन्ध में ही प्रश्न है।

३. इस वाक्य में अन्यपुरुष रोकने पर भी कार्य्य में तल्लीन है। अतएव उसे एक प्रकार की झिड़की दी गई है। अर्थात् कहा गया है कि क्या वह नहीं मानता—करता ही चला जाता है ?

साहित्य ३

[परीक्षक—पं० रामजीलाल शर्मा]

समय तीन घंटे

नीचे लिखे विषयों में से किसी एक विषय पर एक एक ऐसा निबन्ध लिखिये जो ८० पंक्तियों से कम न हो और १०० से अधिक न हो।

१—वर्षा-वर्णन ।
२—दसहरे के मेले का वर्णन ।
३—रेल में यात्रा ।
४—व्यायाम से लाभ ।
५—अतिथि-सत्कार ।

प्रश्नपत्र सं० १९८०

साहित्य १

समय ३ घण्टे

[परीक्षक—श्री साहित्यालङ्कार लाला कन्नोमलजी एम० ए०]

१—नीचे लिखे पद्यों का अर्थ सरल भाषा में लिखिये:—

(क) हरि सो मीत न देखौं कोई ।
अन्तकाल सुमरत तेहि औसर आनि प्रतच्छहु होई ॥
ग्राह गहे गजपति मुकरायो हाथ चक्र लै धायो ।
तजि बैकुण्ठ गरुड़ तजि श्री तजि निकट दास के आयो ॥
दुर्वासा को श्राप निवार्‌यो अम्बरीष पति राखी ।
ब्रह्मलोक पर्य्यन्त फिर्‌यो तहँ देत मुनीजन साखी ॥
लाखागृह ते जरत पाँडुसुत बुधिबल नाथ उबारे ।
सूरदास प्रभु अपने जन के नाना त्रास निबारे ॥ ५

(ख) सुन सुरेस उपदेसु हमारा ।
रामहिं सेवक परम पियारा
मानत सुख सेवक सेवकाई ।
सेवक बैर बैर अधिकाई

यद्यपि सम, नहिं राग न रोषू।
गहहिं न पाप पुन्य गुनदोषू ॥
करम प्रधान विश्व करि राखा।
जो जस करइ सो तस फल चाखा ॥
तदपि करहिं सम विषम विहारा।
भगत अभगत हृदय अनुसारा ॥
अगुन अलेख अमान एकरस।
राम सगुन भये भगत प्रेमबस ॥
राम सदा सेवक रुचि राखी।
बेद पुरान साधु सुर साखी ॥
अस जिय जानि तजहु कुटिलाई।
करहु भरतपद प्रीति सुहाई ॥ ८

(ग) न होगी आर्यों की अहह! अब क्या आर्यधरणी,
हमारी होगी क्या अतल जल में मग्न तरणी?
अनार्यों का ही क्या अब अटल है शासन हरे!
हुआ क्या आर्यों का अब निपट निष्कासन हरे! ४

(घ) बद्दल न होंहिं दल दच्छिन घमंड माहिं,
घटा जू न होंहि दल सिवाजी हँकारी के।
दामिनी दमंक नाहिं खुले खग्ग बीरन के,
बीर सिर छाप लघु तीजा असवारी के ॥
देखि देखि मुग़लों की हरमैं भवन त्यागैं,
उझकि उझकि उठैं बहत बयारी के ॥
दिल्लीमति भूली कहैं बात घनघोर घोर,
बाजत नगारे ये सितारे गढ़धारी के ॥ ४

(ङ) रहिमन जग की रीति, मैं देखी रस ऊख में।
ताहू में परतीति, जहाँ गाँठि तहँ रस नहीं !"

जहाँ गाँठि तहँ रस नहीं, यह रहीम जग जोय।
मड़येतर की गाँठ में, गाँठि-गाँठि रस होय॥ ४

(च) १. करमगति टारे नाहिं टरे।
सतवादी हरिचँद से राजा, सो तो नीच घर नीर भरे।
पाँच पांडु अरु कुंती द्रोपदी हाड़ हिमालय गरे॥
जज्ञ किया बलि लेन इंद्रासन, सो पाताल धरे।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, विष से अमृत करे॥ ४

२. प्रेम दिवाने जो भये, पलटि गयो सब रूप।
सहजो दृष्टि न आवई, कहा रंक कहा भूप॥

३. ज्ञान रूप को भयो प्रकास।
भयो अविद्या तम को नास॥
सूझ पर्‍यो निज रूप अभेद।
सहजै मिट्यो जीव को खेद॥
जीव ब्रह्म अन्तर नहिं कोय।
एकै रूप सर्व घट सोय॥
जगत विवर्त सूं न्यारा जान।
परम अद्वैत रूप निर्वान॥ ६

(२) प्रश्न १ के (क) अवतरण में आई हुई अन्तर्कथाएँ बताइये। २

(ख) अवतरण के वाक्य किसने किससे कहे हैं ?

(ग) और (घ) अवतरणों के पद्यों के छन्द और उनके लक्षण बताइये। इनके रचनेवालों के विषय में आप क्या जानते हैं ? ४

(ङ) अवतरण के पद्यों के छन्द और लक्षण बताइये। ४

(च) १ में आई हुई अन्तर्कथाएँ बताइये। ३

(छ) ३ में के विवर्त शब्द पर व्याख्या कीजिये और विवर्तवाद सिद्धान्त बताइये । ३

३—(क) मात्रिक छन्द और वर्ण-वृत्त में क्या भेद है ? इन दोनों की उदाहरणसहित परिभाषा लिखिये । ५

(ख) प्रतिभा, रोला और मालिनी छन्दों के लक्षण बताइये और उनके उदाहरण भी दीजिये । ६

(ग) नीचे लिखे पद्यों में कौन से छन्द हैं :—

१. बड़ा कि छोटा कुछ काम कीजै ।
परन्तु पूर्वापर सोच लीजै ॥
बिना विचारे यदि काम होगा ।
कभी न अच्छा परिणाम होगा ॥ ३

२. तुझे बन्ध-बाधा सताती नहीं है ।
मुझे सर्वदा मुक्ति पाती नहीं है ॥
प्रभो शंकरानन्द आनन्द-दाता ।
मुझे क्यों नहीं आपदा से छुड़ाता ॥ ३

(४) क—उत्प्रेक्षा, अपह्नुति और अनुप्रास अलङ्कारों के लक्षण लिखिये और प्रत्येक का उदाहरण दीजिये । १२

(ख) नीचे लिखे पद्यों में कौन-कौन से अलङ्कार हैं ?

१. चरण धरत चिन्ता करत भावत नींद न शोर ॥
सुवरण को ढूंढ़त फिरत, कवि भावुक अरु चोर ॥ ३

२. कारज धीरे होत है काहे होत अधीर ।
समय पाय तरुवर फलै केतो सींचो नीर ॥ ३

३. बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू ।
भूप किशोर देख किन लेहू ॥ ३

(४) बिनु पद चलै सुनै बिन काना ।
कर बिनु कर्म करै बिधि नाना ॥
आननरहित सकल रस भोगी ।
बिनु वाणी बकता बड़ योगी ॥४

उत्तर

संवत् १९८०

साहित्य १

१) क—परमात्मा के सदृश, अन्य कोई मित्र नहीं हो सकता यदि उसका स्मरण अन्तकाल में भी किया जाता है तो वह आकर तुरंत ही प्रत्यक्ष हो जाता है । जब ग्राह से गहे हुए गजने उसको स्मरण किया तो वह तुरंत ही हाथ में चक्र लेकर उसके बचाने को दौड़ पड़े, बैकुण्ठ को तत्क्षण ही त्याग दिया । बाहन (गरुड़) की भी परवा न की और प्राणप्यारी लक्ष्मी को भी अकेला छोड़ दिया । इसी प्रकार दुर्वासा के शाप से अम्बरी को विमुक्त किया और उसकी लज्जा रक्खी । इस विषय में मुनिजन साक्षी हैं कि वह—अम्बरीष—ब्रह्म-लोक तक दौड़ आये; किन्तु किसी ने भी उनकी रक्षा न की, परमात्मा ही ने उन्हें शरण दी । सूरदासजी कहते हैं कि लाक्षा भवन में पाण्डवों को जलने से बचानेवाले प्रभु अपने भक्तों के विविध कष्टों का निवारण करते हैं ।

(ख) हे इन्द्र ! तुम मेरे उपदेश पर ध्यान दो। देखो, राम को अपने भक्तों से अपूर्व स्नेह है। वह अपने दास की (किसी के द्वारा) सेवा होते देखकर प्रसन्न होते हैं और उसके साथ बैर करने पर बैर मानते हैं। यद्यपि भगवान् सम हैं, उन्हें किसी से भी रागद्वेष नहीं। किसी का पाप, पुण्य, गुण और दोष ग्रहण नहीं करते; परन्तु उन्होंने संसार में कर्म को प्रधान बना रक्खा है—जो जैसा करता है उसे वैसा ही फल मिलता है। तोभी वह भक्त और अभक्तों के हृदय के अनुसार सम-विषम लीला करते हैं। अर्थात् जिनका प्रेम एकरस है उनके हृदय में एकरस और जिनका प्रेम भिन्न प्रकार का है उनके हृदय में सम-विषम हैं। वह गुणरहित अलेख, मानरहित और एकरस हैं और भक्तों के प्रेमवश होकर शरीर धारण करते हैं। उन्होंने सदैव भक्तों की इच्छानुसार कार्य्य किया है। वेद, पुराण, साधु, और देवता —सभी इस बात के साक्षी हैं। ऐसा हृदय में जानकर अपने मन की कुटिलता को दूर करो और भरतजी के चरणारविन्द में सदैव प्रीति रक्खो।

(ग) क्यों परमात्मन् ! क्या यह आर्य्यभूमि अब (हम) आर्य्यों की न रहेगी ? क्या हमारी नौका अगाध जल में ही डूबेगी ? क्या अब अनार्यों का ही शासन स्थिर हो जायगा और क्या अब हम लोगों का बिलकुल वहिष्कार होकर ही रहेगा।

(घ) महाराज शिवाजी के आतंक से मुग़लानियाँ एवम् दिल्ली के अधिवासियों का हृदय सदैव ही भय-भीत

रहता है। यहाँ तक कि वर्षाऋतु के बादलों को देखकर उन्हें शिवाजी की सेना का ही भ्रम होता है। उमड़े हुए बादलों को देखकर वह कहते हैं, यह घमंड से भरी दक्षिणी सेना है। घटा देखकर कहने लगते हैं कि यह अहंकारी शिवाजी की सेना है। बिजली की चमक से उन्हें वीरों के नंगे खड्ग और तीजा सवारी में निकलने वाले वीरों के चमकीले सिरपेंचों का भ्रम होता है। उन्हें देखकर मुग़लानियाँ अपने घर छोड़कर भाग जाती हैं और हवा के झोंके से चौंक पड़ती हैं। बादलों की गरज सुनकर दुर्मति दिल्ली-निवासी यह समझते हैं कि यह सितारे के क़िले के स्वामी (शिवाजी) के नगाड़े बज रहे हैं।

(ङ) रहीम कहते हैं हमें ऊख को देखकर संसार का नियम ज्ञात हो गया और अब दृढ़ निश्चय हो गया कि जहाँ गाँठ (भेद) होती है वहाँ रस (प्रेम) नहीं होता।

रहीम कहते हैं कि हम संसार में ख़ूब देख चुके कि जहाँ पर गाँठ (भेद) होती है वहाँ पर रस (प्रीति) नहीं होता। किन्तु मन्डप के नीचे (दूल्हा, दुलहिन की जो गाँठ बाँधी जाती है) की गाँठ में अपूर्व रस (आनन्द) होता है।

(च) १—भाग्य बड़ा प्रबल है। उसमें लिखा हुआ कभी नहीं मिटता। देखिये, सत्यवादी हरिश्चन्द्र को नीच कुल वाले डोम के घर पानी भरना पड़ा। पाँचो पाण्डव, कुन्ती एवम् द्रौपदी को हिमालय में गलना पड़ा। जिस बलि ने इन्द्रासन के लिये यज्ञ किया उसे पाताल में जाना पड़ा।

मीरा कहती है कि मेरे तो एकमात्र प्रभु गिरधर नागर ही हैं जिन्होंने विष को अमृत कर दिया।

२. जो लोग भगवान के प्रेम में उन्मत्त हो जाते हैं चाहे वह राजा हों चाहे रंक, उनका सब रूप बदल जाता है। सहजो कहती है, फिर उन्हें कुछ भी नहीं सूझ पड़ता।

३. ज्ञान का प्रकाश होते ही अविद्यारूपी अन्धकार का नाश हो गया तभी अपना सच्चा रूप दिखाई दिया और उसी समय जीव का सब खेद दूर होगया। जीव, ब्रह्म में कोई अन्तर नहीं। एक ही रूप है, जो घट-घट में प्रकाशक है और संसारी माया से अलग है। अन्त में यही अद्वैतरूप ब्रह्म है।

(२) प्रश्न १ के (क) अवतरण की अन्तर्कथायें: —

१. गज और ग्राह की कथा—गजेन्द्र को जब ग्राह ने जल में पकड़ा और उनमें बहुत काल तक युद्ध होता रहा, तब उसके साथवाले हाथी उसे छोड़कर भाग गये। ग्राह उसे जल-मग्न करने लगा, केवल जौ भर सूँड़ बाक़ी रही। तब उसने कमल-पुष्प तोड़कर ईश्वर को समर्पित किया और भगवान से रक्षा की प्रार्थना की। उसी समय भगवान् अपने इस भक्त की टेरें सुनकर तुरन्त ही नंगे पाँव बिना वाहन के लक्ष्मी को छोड़कर भागते हुए आये और उसका उद्धार किया।

२. अम्बरीष की कथा—राजा अम्बरीष एकादशीव्रत के पीछे ब्राह्मण भोजन कराके पारण किया करते थे। उन्होंने एक दिन दुर्वासा को न्यौता दिया। वह स्नानादि से निवृत्त होकर बहुत देर में आये। तब तक राजा ने द्वादशी बीती जान, ब्राह्मणों की सम्मति से पारण

कर लिया। ऋषि ने यह जानकर बड़ा क्रोध किया और जटाओं से एक राक्षसी उत्पन्न कर दी। वह ज्योंहीं राजा को खाने दौड़ी त्योंहीं उसे चक्र-सुदर्शन ने मार डाला और ऋषि का पीछा किया। उनको किसी देवता ने शरण नहीं दी। अन्त में राजा ने ही चक्र-सुदर्शन का निवारणकर ऋषि को बचाया और भोजन करा के आप खाया। इस झगड़े में एक वर्ष का समय लगा।

२. लाक्षागृह की कथाः—

कुरुराज ने कपट से बन में एक उत्तम लाक्षाभवन तैयार कराया और उसमें पाण्डवों को ठहराकर गुप्त रीति से उन्हें भस्मसात् करने की चेष्टा की। भगवान् की कृपा से यह सम्पूर्ण समाचार जानकर पाण्डव वहाँ से छिपकर निकल भागे। उसी रात्रि को उसमें अग्नि जला दी गई और वहाँ ठहरे हुए अन्य पाँच पथिक एक स्त्री-सहित जल मरे।

(ख) अवतरण के वाक्य देवताओं के गुरु बृहस्पति ने इन्द्र से उस समय कहे हैं जब इन्द्र ने उनसे भरत को राम से बन में मिलाप न होने की प्रार्थना की थी।

(ग) यह 'शिखरणी" छन्द है। इसमें ६ और ११ वर्णों की यति से १७ वर्ण होते हैं। उसका लक्षण यह है—

इसमें "यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, और अन्त में एक लघु गुरु होता है। यथा—(।ऽऽ ऽऽऽ ।।। ।।ऽ ऽ।। ।ऽ)

(घ) मनहरण छन्द। इसके लक्षण पहले लिख चुके हैं। इस छन्द के रचयिता महाकवि भूषण की गणना वीर रस के कवियों में प्रधान है। यह हिन्दी के नव रत्नों में से एक रत्न हैं। इनका जन्म सं० १६१४ और

देहान्त १७१५ के लगभग माना जाता है। ये कानपुर ज़िले के तिकवाँपुर ग्राम के अधिवासी त्रिपाठी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। चित्रकूटनरेश के पुत्र रुद्रराय ने इन्हें भूषण उपाधि दी। कहा जाता है कि ये औरंगज़ेब के दर्बार में भी रहे। किन्तु उससे रुष्ट होकर शिवाजी के दर्बार में गये। वहाँ उनका पूरा सत्कार हुआ। इनकी सारी कविता शिवाजी से ही सम्बन्ध रखती है। केवल दस छन्द छत्रसाल के लिये लिखे हैं। इन्होंने शिवराजभूषण, शिवाबावनी और छत्रसाल-दशक ग्रन्थ रचे। इसके अतिरिक्त इनकी कुछ फुटकर कवितायें भी मिलती हैं।

(ङ) यह छन्द दोहा है। इसके लक्षण अन्यत्र अंकित हैं।

(च) प्रश्न १. में आई हुई अन्तर्कथायें:—

हरिश्चन्द्र—अयोध्यानरेश महाराज हरिश्चन्द्र के दान की प्रशंसा सुनकर इन्द्र घबराया और उनके सत्य को डिगाना चाहा। बिश्वामित्र ने इन्द्र की सहायता की और राजा की सारी पृथ्वी दान में ले ली तथा दक्षिणा में साठ भार सोना माँगा। राजा ने इसको स्त्री-पुत्र सहित बिककर पूरा किया और डोम का दास बन उसका पानी भरा; किन्तु अपने प्रण से टलना स्वीकार नहीं किया। अन्त में भगवान् प्रसन्न हुए और उसे अपना धाम दिया।

२. बलि—जब राजा बलि तीनों लोकों का स्वामी हुआ तो इन्द्र घबराकर विष्णु के पास गया। उन्होंने उसे धीरज देकर राज्य दिलाने का बचन दिया और स्वयं वामन का रूप धारणकर उससे साढ़े तीन पैंड पृथ्वी माँगी। राजा ने इनको दान दिया। तब तीन चरण में ही

उन्होंने तीनों लोक नाप लिये और आधे चरण पृथ्वी का प्रश्न किया तब राजा ने कहा—महाराज ! मेरी पीठ नाप लीजिये। भगवान उससे प्रसन्न हुए और इन्द्र की कामना पूर्ण करके उसे पाताल का राज्य दिया।

३. पाण्डव—महाभारत के पश्चात् कुलक्षय की ग्लानि से पाँचो पाण्डव कुन्ती और द्रोपदी-सहित हिमालय को चले गये थे और वहाँ सभी गल गये। केवल युधिष्ठिर बचे, किन्तु उनकी भी एक उँगली गल गई।

(च) प्रश्न ३. के "विवर्तवाद" शब्द का अर्थ है, भ्रम अथवा भ्रांति। इसी भ्रम को वेदान्ती लोग 'माया' बतलाते हैं। विवर्तवाद, यह वेदान्त में एक सिद्धान्त है, जिसके अनुसार 'ब्रह्म' को सृष्टि का मुख्य उत्पत्ति स्थान और संसार को माया मानते हैं। इस सिद्धान्त को परिणामवाद भी कहते हैं।

(३) क— मात्रिक छन्द में केवल मात्राओं की गणना होती है और लघुगुरु का कोई क्रम नहीं होता; किन्तु, वर्णवृत्त छन्द में वर्णों की गणना के अतिरिक्त लघुगुरु समान रूप से व्यवहृत होते हैं।

खीरा सिर सों चाहिये, भरिये नमक बनाय।
"रहिमन" करुये मुखन को, चहियत यही सजाय॥

इस दोहे नाम के दोना दलों में चौबीस-चौबीस मात्राये तो हैं; किन्तु लघुगुरू का नियम नहीं है। अर्थात् पहले दल के आदि के वर्णों "खीरा सि" में ऽऽ। तगण का प्रयोग है; किन्तु दूसरे दल में 'रहिम' ।।। नगण आया है।

अब वर्णवृत्त को लीजिये।

शोका धीरा सब वन थली को, जहाँ थी बनाती।
सीता बैठी व्यथित अति ही, राम का नाम ले ले॥
पापी, कामी असुर पति था, हाथ में खड्ग धारे।
आया व्याधा सरिस करने, भीत सीता मृगी को॥

यह वर्णवृत्त छन्द है। इसके चारों चरणों में सं प्रत्येक में सत्रह-सत्रह वर्ण हैं और लघुगुरू का क्रम भी सब पदों में एक सा है। अर्थात् उसके पहले पद में—SSS SII III SSI SSI SS—लघुगुरू का यह रूप है और यही रूप सभी चरणों में इसी प्रकार है।

(ख) चौदह मात्राओं का "प्रतिभा" छन्द होता है। उसके आदि में सदैव लघुवर्ण होता है। यथा—

चरित है मूल्य जीवन का,
बचन प्रतिविम्ब है मनका॥
सुयश है आयु सज्जन की,
सुजनता है प्रभा धन की॥

रोला छन्द का लक्षण तथा उदाहरण अन्यत्र अङ्कित है।

मालिनी—न न म य य (III III SSS ISS ISS) का मालिनीवृत्त होता है। यथाः—

जगकर कितनी ही, रात मैंने बिताईं,
यदि तनिक कुमारों, को हुई बेकली थी।
यह हृदय हमारा, भग्न कैसे न होगा,
यदि कुछ दुख होगा, बालकों को हमारे॥

इस छन्द में ८ व ७ वर्णों की यति से १५ वर्ण होते हैं।

(ग) छन्द सं० १, उपेन्द्रवज्रा है और छन्द सं० २, भुजङ्गप्रयात है।

(४) क—इन अलङ्कारों के लक्षण अन्यत्र अंकित हैं।

(ख)—१. पहले पद्य में श्लेष अलङ्कार है; क्योंकि यहाँ चरण और सुवरण शब्दों के दो भिन्न-भिन्न अर्थ पाँव तथा छन्द का पद और सोना तथा अच्छा रंग हैं।

२. दूसरे पद में "दृष्टान्तालंकार" है, क्योंकि दोनों वाक्यों 'चरण.........शोर और सुवरण.........चोर' का भिन्न-भिन्न अर्थ बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव से कहा गया है।

३. तीसरे पद में व्याजोक्ति अलंकार है; क्योंकि यहाँ व्यंग्य से सखी ने सीता के राम-अनुराग को छिपाया है।

४. यहाँ कारण के अभाव में (पद, कर्ण, कर, आनन और वाणी के न होते हुए भी) कार्य (चलना, सुनना, रसभोग और बोलना) का होना कथन किया गया है। अतएव प्रथम विभावना है।

साहित्य २

समय ३ घण्टे

परीक्षक
१—श्री० वैद्य रामचरणलाल दीक्षित बी० ए०, एल्० टी०, विशारद
२—श्री गुरुप्रसाद पाण्डेय बी. ए., विशारद

(१) निम्नलिखित वाक्यों का सरल भाषा में अर्थ लिखिये:—

(क) निदान उस देववाणी वा वेदभाषा त्रिपथगा की इह-लौकिक धारा वैदिक अपभ्रंश-प्राकृत-गङ्गोत्तरी से जो

आर्षप्राकृत नाम्नी गङ्गा बही, तो जैसे सुरसरिता क्रमशः अनेक नाम और रूप धारण करती कोड़ियों नदी नद को अपने में लीन करती, भारतभूमि के प्रधान भागों को उपजाऊ बनाती, सैकड़ों शाखाओं में बँटकर समुद्र से जा मिली, और जैसे गङ्गोत्तरी से चलकर प्रयाग तक जाह्नवी अपनी श्वेतधारा और सुधास्वादुसलिल के रूप और गुण को स्थिर रख सकी, किन्तु यमुना से मिलकर वर्ण में श्यामता और गुण में वातुलता ला चली, इसी प्रकार आर्ष-प्राकृत भी हिमालय से लेकर कुरुक्षेत्र तक आते अपने रूप और गुण को स्थिर रख सकी। १३

(ख) ईर्ष्या में अग्नि है; परन्तु अग्नि का गुण उसमें नहीं। वह हृदय को फैलाने के बदले उसे और भी सङ्कीर्ण कर देती है। ४

(२) निम्नाङ्कित पद्यों का अर्थ लिखिये और यह भी बतलाइये कि ये किस प्रसङ्ग में आये हैं:—

(क) यह दिन द्वै सुख-काज, कीरति अक्षय जिन तजहु।
क्षत्रिय लाज जहाज, जवन समुद्र न बोरिये। ४

ख) कहुँ सुन्दरी नहात नीर कर-जुगल उछारत।
जुग अम्बुज मिलि मुक्त-गुच्छ मनु सुच्छ निकारत।
धोअत सुन्दर बदन करन अतिही छबि पावत।
वारिधि नाते ससि कलंक मनु कमल मिटावत॥ ६

(३) निम्नलिखित वाक्यों का अर्थ पूर्वापर सम्बन्ध दिखाते हुए लिखिये:—

(क) मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है जो एक दिन दिखाई देता है और फिर घटते-घटते लुप्त हो जाता

है। ऊपरी आय जल का बहता हुआ स्रोत है, जिससे सदैव प्यास बुझती है। ४

(ख) यह तो हो ही नहीं सकता कि इधर जायँ और इस घाट के देवता को भेंट न चढ़ायँ।

(ग) अच्छी घड़ी में मनभावते को ढूँढ़ने आई और अच्छे मुहूर्त में पुरुवंशी राजा से ब्याह हुआ। ४

(घ) हाय! इस समय इस चपलभाषिणी के वचन मेरे लिये वज्र-समान घातक होते, परन्तु इसका मुस्कराना कहता है कि मेरी आपत्ति-रूपी मेघमाला की ओट में सुखसम्भावना की शुभ्रहासिका भी विद्यमान है। ४

(४) हिन्दी-भाषा के पाँच मुसलमान कवियों के नाम लिखिये। इनमें से आप किसको श्रेष्ठ समझते हैं और क्यों? किसी एक के काव्य पर आलोचना भी कीजिये। १०

(५) निम्नलिखित पात्रों में से किसी दो पात्रों के चरित्रों की आलोचना कीजिये—(क) मालती (ख) शैव्या (ग) पृथ्वीराज (घ) विश्वामित्र १२

(६) निम्नलिखित मुहावरों का अर्थ लिखिये और अपने वाक्यों में इनका प्रयोग कीजिये:—

१. घात में बैठना।
२. छाती पर मूँग दलना।
३. कन्नी काटना।
४. एक की अठारह लगाना। ८

(७) नीचे लिखे हुए शब्दों का विग्रह कीजिये:—

(क) यावज्जीवन, निष्कपट, सच्चिदानन्द, अक्षौहिणी, पावक। ५

(ख) कर्मधारय और बहुव्रीहि को उदाहरणसहित समझाइये और निम्नलिखित शब्दों के समास लिखिये— ४
ग्रामवास, त्रिभुवन, पीताम्बर, प्रतिदिन। ४

(८) विभावना और अर्थान्तरन्यास अलङ्कारों की परिभाषा लिखिये और दोनों का एक-एक उदाहरण भी दीजिये। ६

(९) निम्नलिखित पद्यों में कौन-कौन से अलङ्कार हैं:—

(क) जानकी देहु तो जान की खैर,
नहीं यह जानकी जान की गाहक। २

(ख) आनन-कलानिधि में दूनी कला देख देख,
चाहक चकोरों के उदास उर ऊलेंगे। ४

(ग) मिलो न और प्रभा रती, करी भारती दौर।
सुन्दर नन्दकिशोर से, सुन्दर नन्दकिशोर। २

उत्तर

साहित्य २

(१) क— जब वैदिक अपभ्रंश प्राकृत रूपी गंगोत्तरी से, आर्ष-प्रकृति की गङ्गा बही, अर्थात् वैदिक अपभ्रंश से आर्षप्रकृति निकली तो वह, क्रम-पूर्वक अनेक नामों और अनेक रूपों को धारण करती हुई, अनेक नदी-नालों को अपने में मिलाती हुई भारत के मुख्य-मुख्य भूभागों को हरा-भरा करती हुई, अनेक शाखाओं में विभाजित होकर समुद्र में जा मिली। अर्थात्, अनेक बोलियों को

अपने साथ मिलाकर प्रधान भाषा में जा मिली और जिस प्रकार गङ्गोत्तरी से निकलकर प्रयाग तक आने तक ही गङ्गा के जल का स्वाद और गुण स्थिर रहता है, यमुना के साथ मिलने पर वह बात नहीं रह जाती, उसके रंग में कुछ कालापन, और गुण में बादीपन आ जाता है, उसी प्रकार आर्ष प्राकृत भी हिमालय से लेकर कुरुक्षेत्र तक ही अपने मुख्य रूप और मुख्य गुण को स्थिर रख सकी। आगे चलकर उसके रूप और गुण में अन्तर पड़ गया।

(ख) ईर्ष्या में अग्नि की उपस्थिति तो अवश्य है, किन्तु उसमें अग्नि का गुण (फैलाना) नहीं है। वह तो हृदय को फैलाने के स्थान में उलटा उसे संकुचित ही बनाती है। भाव यह है कि ईर्षा से मनुष्य का हृदय सङ्कीर्ण हो जाता है, उसमें उदारता नहीं रह जाती।

२) क— देखो, केवल दो दिन के तुच्छ सुख के हेत, अपने अटल-यश को न छोड़ो। इस क्षात्र धर्म की लज्जा के जहाज़ को यवन-रूपी समुद्र में न डुबाओ। अर्थात् क्षत्रियों की लज्जा को यवनों के हाथ नष्ट न होने दो।

जब महाराणा प्रताप ने अकबर के यहाँ सन्धि का प्रस्ताव भेजा, तब राजा पृथ्वीसिंह ने उन्हें एक प्रभावशाली पत्र लिखकर भेजा था, जिससे वह सन्धि न कर लें। उसी पत्र का यह एक अंश है।

(ख) कहीं पर सुन्दर स्त्रियाँ स्नान करते हुए, कौतुक से अपने दोनों हाथों से जल उछालती हैं, उस समय ऐसा मालूम होता है कि दो कमल मिलकर मानों स्वच्छ मुक्ताओं को फेंक रहे हैं। वे स्त्रियाँ अपने मुख

धोने के लिये, उसे अपने हाथों से मलती हैं। और बालों को एक ओर हटाती हैं, सो ऐसा ज्ञात होता है, मानो कमल यह सोचकर कि मैं और चन्द्रमा एक ही स्थान (समुद्र) से उत्पन्न हुए हैं— उससे भाई-भाई का नाता है—उसके कलंक को मिटाता है।

सत्यहरिश्चन्द्र नाटक में यह वर्णन महाराज हरिश्चन्द्रजी के काशी पहुँच जाने पर उक्त तीर्थ की शोभा-वर्णन के प्रसङ्ग में आया है।

(३) क—सच पूछिये तो महीने के वेतन का जोड़ ठीक पूर्णिमा के चन्द्रमा से टक्कर खाता है। जैसे चन्द्रमा केवल एक दिन तो पूरा आकार दिखाता है, पुनः घटते-घटते बिलकुल लुप्त हो जाता है, उसी प्रकार वेतन भी एक दिन तो पूरा मिल जाता है, किन्तु व्यय होते-होते उसमें से कुछ भी नहीं रहता। अर्थात् पीछे कुछ नहीं पड़ता, किन्तु ऊपरी आमदनी रिश्वत में बड़ी बरकत है। वह जल के सोते के समान सदैव ही पिपासा को दूर करती रहती है।

(ख) भला, यह कब संभव है कि इधर जायें (अदालत में आयें) और इस घाट के देवताओं (अहलकारों) की भेंट, पूजा न करें—उनको रिश्वत न दें। अर्थात् यहाँ तो जो कोई आता है उसे बरबश भेंट चढ़ानी ही पड़ती है।

(ग) ये राजा दुष्यन्त से शकुन्तला के बचन हैं। जब उसने इसे न पहचानकर उसको झूठी क़रार दिया तब वह कहती है—"मैं उस समय की सराहना कहाँ तक करूँ, जिसमें तुम्हारे सदृश धोखेबाज़ प्रेमी

से मैंने प्रेम-सम्बन्ध स्थिर किया।" अर्थात् वह समय मेरे बड़े ही दुर्भाग्य का था, जिसमें तुमसे प्रीति की।

(घ) इस समय की इस चंचल वाणी बोलनेवाली युवती के वाग्बाण मेरे लिये निस्सन्देह बहुत बुरा प्रभाव डालनेवाले होते; किन्तु मैं समझता हूँ कि इसकी मृदुवाणी एवम् सुन्दर मुस्कराहट में मेरे भावी सुख का विकास भी अवश्य ही गुप्त है। अतएव धैर्य धारण करता हूँ।

(४) हिन्दी के पाँच मुसलमान कवियों के नाम:—रहीम, रसखान, आलम, शेख़ (स्त्री) और ताज (स्त्री)।

इन सब में हम "रसखान" को सर्वश्रेष्ठ समझते हैं। क्योंकि प्रथम तो इनकी कविता में भक्ति की अपूर्व झलक है, दूसरे उसमें जितनी तल्लीनता है उतनी हम हिन्दी के बहुत कम कवियों में पाते हैं। इस सहृदय कवि ने मनोविकारों के दरसाने में अपूर्व कौशल से काम लिया है। यह एक प्रेमी कवि है। उसकी कविता में प्रेम की यथेष्ट मात्रा है। उसकी प्रेम की परिभाषा आदर्शरूप है। वह लिखता है:—

दम्पति सुख अरु विषयरस, पूजा निष्ठा ध्यान।
इतने परे बखानिये, शुद्ध प्रेम "रसखान"॥

"मानुष हौं तो........कदम्ब की डारन" तथा या लकुटी........वारौं" आदि छन्द उसकी तल्लीनता के उदाहरण हैं। इनकी भाषा में प्रसादादि गुण, उपमा रूपकादि अलङ्कार और व्यङ्ग आदि अनेक

काव्याङ्गों का उत्तम समावेश हुआ है। भक्ति की छटा तो उनके पद-पद से टपकती है। उनके शृङ्गार में भी भक्ति का पुट है। यही कारण है कि उनकी गणना चौरासी वैष्णवों में हुई और उन्होंने सहज ही बादशाह वंश की ठसक को छोड़कर व्रजवासी कृष्ण का आश्रय ले लिया।

शैव्या—यह राजा हरिश्चन्द्र की पतिव्रता स्त्री थी। सदैव पति की आज्ञा का पालन करने और उसके धार्मिक कार्यों में सहयोग देने ही में अपना सौभाग्य समझती थी। आपत्ति के समय में पति को धैर्य्य देती थी। पति के सत्यपालन के लिये दासी बनी और स्वामी के कार्य्य में किसी प्रकार की कभी त्रुटि न होने दी। आपत्ति के समय भी धीरज धारण करती थी। बड़ी विचारवान् और गम्भीर थी। धर्म के मार्गों में पड़नेवाले कंटकों से कभी न डरती थी। इसने घोर संकट में भी धर्म की रक्षा की। स्वाभिमान और आत्मगौरव को उसने कभी हाथ से नहीं जाने दिया। उसमें स्त्री-स्वभाव के अनुसार घबड़ा जाने की टेव तो थी, किन्तु वह तुरन्त ही अपने को सँभाल लेती थी।

विश्वामित्र—अत्यन्त क्रोधी, निज स्वार्थसाधन में चतुर और दूसरे के अपकार में भी न चूकनेवाले मुनि थे। जिस कार्य्य में प्रवृत्त होते, उसे यथा-सम्भव पूरा करने ही का उद्योग करते थे। मित्र का काम हर तरह पूरा करते। शत्रु के अमंगल करने में तनिक भी न हिचकिचाते थे। घृणित

से घृणित और कठोर से कठोर कार्य्य करके भी उसे नीचा दिखाने की चेष्टा करते थे। किन्तु सत्यवादी हरिश्चन्द्र को वह उसके कर्तव्य से न हटा सके।

(६) १. घात में बैठना—ताकते रहना, लक्ष्य पर डटे रहना। बिल्ली चूहे की घात में बैठी है।

२. छाती पर मूँग दलना—जिसको खटके उसी के पास रहकर आनन्द करना। मैं यहाँ से कभी नहीं जाऊँगा, तुम्हारी ही छाती पर मूँग दलूँगा।

३. कन्नी काटना—बचकर निकल जाना, बचना। शिरोमणि मिश्र के सम्मुख बड़े-बड़े ग्रन्थ-चुम्बक भी कन्नी काटते थे।

४. एक की अठारह लगाना—अधिक चुगली खाना। यार लोगों ने सरकारी कर्मचारियों से भारतेन्दुजी की एक की अठारह लगाई।

(७) क—यावज्जीवन (यावत+जीवन)=(जीवन भर) समास अव्ययी भाव

निष्कपट (निः+कपट)= (विना कपट के) अव्ययी-भाव समास

सच्चिदानन्द (सत+चित+आनंद सो है सच्चिदानन्द) वहुब्रीहि समास

अक्षौहिणी द्विग-समास

पावक (पौ+वक)=बहुब्रीहि समास

(ख) समानाधिकरण और विशेष्य विशेषण पदों का जो समास होता है उसे कर्मधारय समास कहते हैं। इस समास में प्रायः विशेषण पद पहले रहता है

और विग्रह करने में (है जो) शब्द मध्य में आता है। जैसे परम है जो आत्मा = परमात्मा।

विशेष्य विशेषण किम्वा अधिक विशेष्य पदों का समास करने से यदि समस्त मान पद के अर्थ से भिन्न कोई सांकेतिक अर्थ प्रकाशित हो वहाँ बहुब्रीहि समास होता है। यथा पीताम्बर (पीत वसन धारण करने वाला) कृष्ण

ग्रामवास = ग्राम में वास। सप्तमी तत्पुरुष

त्रिभुवन = तीन भवन—द्विगु समास

पीताम्बर = पीतही अम्बर = कर्मधारय समास। पीत है वस्त्र जिसका कृष्ण, बहुत्रीह समास ॥

प्रतिदिन = प्रति + दिन = अव्ययी भाव समास।

(८) विभावना—हेतु के विना यदि कार्य्य की उत्पत्ति का वर्णन हो तो उसे विभावना अलङ्कार कहते हैं। यथाः—

तिय ! कत कमनैती सिखी,
बिन जिह भौह कमान।
चल चित वेधत चुकत नहिं,
वंक विलोकन वान॥

यहाँ धनुष में प्रत्यंचा के न होने और बाहों के टेढ़े होने पर भी अर्थात् हेतु के अभाव में भी चल चित वेधने रूप कार्य्य की सिद्धि हुई; अतएव विभावनालंकार है।

अर्थान्तरन्यास—जहाँ विशेष्य से सामान्य या सामान्य से विशेष्य अथवा कारण से कार्य्य या कार्य्य से कारण साधर्म्म के द्वारा किंवा वैधर्म के द्वारा समर्थित होता है उसे अर्थान्तरन्यास कहते हैं। यथाः—

बड़े न हूजै गुनन बिन,
बिरद बड़ाई पाय ।
कहत धतूरे सों कनक,
गहनों गढ़्यो न जाय ॥

(६) क—इसमें यमक अलङ्कार है ।
ख—इसमें सम अभेद रूपक एवम् अनुप्रास अलङ्कार है ।
ग—इसमें यमक और अनन्वय अलङ्कार है ।

साहित्य ३

समय ३ घण्टे

परीक्षक { १—श्री० मदनलाल बी० ए०, एल-टी०
२—श्री० पं० रामचन्द्र शर्मा वाग्मीशास्त्री, काव्यतीर्थ

निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर न्यून से न्यून ८० और अधिक से अधिक १०० पंक्तियों में एक भावपूर्ण निबन्ध लिखिये । निबन्ध लिखने के पहले उसका ढाँचा बनाइये जो १५ पंक्तियों से अधिक न हो । यह ढाँचा आपके उत्तर का भाग समझा जायगा ।

(१) भारतीय किसान की दशा सुधारने के उपाय ।
(२) देशाटन और उससे लाभ ।
(३) सार्वजनिक सेवा ।
(४) भारतीय महिला-समाज को शिक्षित बनाने के मार्ग में रुकावटें और उनके दूर करने के उपाय ।
(५) हमारे त्यौहार और मेले ।
(६) हमारे देश में गो-रक्षा ।

प्रश्न-पत्र सं० १६८२

साहित्य—१

समय ३ घण्टे

परीक्षक { १. श्रीगिरिजादत्त शुक्ल "गिरीश" बी० ए०
२. श्रीयशोदानंदन अखौरी }

(१) निम्नांकित अवतरणों का अर्थ सुबोध भाषा में लिखिये—

(अ) अब मैं नाच्यो बहुत गुपाल ।
काम क्रोध को पहिरि चोलना कंठ विषय को माल ॥
महामोह के नूपुर बाजत निन्दा सबद रसाल ।
भरम भरयो मन भयो पखावज चलत कुसंगति चाल ॥
तृस्ना नाच करत घट भीतर नाना बिधि दै ताल ।
माया को कटि फैंटा बाँध्यो लोभ तिलक दै भाल ॥
कोटिक कला काछि दिखराई जल थल सुधि नहिं काल ।
सूरदास की सबै अविद्या दूरि करौ नँदलाल ॥

(ब) ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहनवारी,
ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहाती हैं ।
कन्दमूल भोग करैं कन्द-मूल भोग करैं,
तीन बेर खातीं ते वे तीन बेर खाती हैं ॥
भूषन सिथिल अंग भूखन सिथिल अंग,
बिजन डुलातीं ते वे बिजन डुलाती हैं ।
भूषन भनत सिवराज बीर तेरे त्रास,
नगन जड़ातीं ते वे नगन जड़ाती हैं ॥

(स) सर्व्वोपकार जिसके जीवन का व्रत रहा है।
प्रकृती पुनीत जिसकी निर्भय मृदुल महा है॥
जहँ शान्ति अपना करतब, करना न चूकती थी।
कोमल कलाप कोकिल कमनीय कूकती थी॥
वह मातृभूमि मेरी।
वह पितृभूमि मेरी॥

(२) पगनि कब चलिहौ चारौ भैया॥
प्रेम पुलकि उर लाइ सुवन सब कहति सुमित्रा मैया॥१॥
सुन्दर तनु सिसु-बसन-विभूषण नख-सिख निरखि निकैया।
दलि तृन, प्रान निछावरि करि-करि लैहै मातु बलैया॥२॥
किलकनि नटनि चलनि चितवनि भजि मिलनि मनोहरतैया।
मनि खम्भनि प्रतिबिम्ब झलक छबि झलकिहै भरि अँगनैया॥३॥
बालविनोद मोद मंजुल बिधु लीला ललित जोन्हैया।
भूपति पुण्य-पयाधि उमँग घर-घर आनंद बधैया॥ ४॥
ह्वैहै सकल सुकृत सुख-भाजन लोचन लाहु लुटैया।
अनायास पायहै जनमफल तोतरे बचन सुनैया॥ ५॥
भरत राम रिपुदवन लषण के चरितसहित अन्हवैया।
तुलसी तब कैसे अजहुँ जानिबे रघुबर नगर बसैया॥ ६॥

× × ×

ललित-ललित लघु लघु धनुशर कर,
तैसी तरकसी कटि कसे पट पियरे।
ललित पनही पाँय पैंजनी किंकिणी धुनि-
सुनि सुख लहै मनु रहै नित नियरे।
पहुँची अंगद चारु हृदय पदिक हारु,
कुंडल तिलक छबि गढ़ी कबि जियरे।

सुभग सकल अंग अनुज बालक संग,
देखे नर-नारि रहैं ज्यों कुरंग दियरे।
खेलत अवध खोरि गोली भौंरा चकडोरि,
मूरति मधुर बसै तुलसी के हियरे।

(२) क— प्रश्न १ के (ब) अवतरण में कवि की कविता को क्या विशेषता है। उसकी तथा (स) अवतरण के कवि के सम्बन्ध में कुछ ज्ञातव्य बातें लिखिये।

(ख) अवतरण (ब) तथा (स) की प्रथम चार पंक्तियों में कौन छन्द प्रयुक्त हुए हैं। उनके लक्षण लिखिये।

(३) निम्नाङ्कित छन्दों में जो अलङ्कार हों उन्हें उनके लक्षण-समेत लिखिये।

(च) राना भो चमेली और बेला सब राजा भये,
ठौर-ठौर रस लेत नित यह काज है।
सिगरे अमीर आनि कुंद होत घर-घर,
भ्रमत भ्रमर जैसे फूल को समाज है।
भूषन भनत सिवराज वीर तैंही देस-
देसन में राखी सब दच्छिन की लाज है।
त्यागे सदा षटपद पद अनुमानि यह,
'अलि अवरंगजेब चंपा सिवराज है'॥

(छ) थे भलाई के जहाँ डेरे पड़े,
थी जहाँ पर हाट भलमंसी लगी।
घूमकर देखा वहीं मतलब खड़ा,
आँख करके बन्द करता था ठगी॥

(ज) पूत कपूत तो क्यों धन संचय।
पूत सपूत तो क्यों धन संचय।

(४) नीचे लिखे छन्दों के लक्षण उदाहरण-समेत लिखिये—
तोमर, शार्दूलविक्रीड़ित, हरिगीतिका, मालिनी, दोहा और कुण्डलिया

तुलसीदासजी की छोटी-सी जीवनी लिखिये, जिसमें उनके ग्रन्थों की चर्चा ज़रूर हो।

उत्तर

साहित्य १

(१) अ— सूरदासजी कहते हैं—

प्रभो, अब मैं बहुत नाच चुका। अब न नचाइये। मैंने काम और क्रोध के वस्त्र धारण किये, गले में विषयों की माला पहनी, मोह के नूपुरों से अपने को सुसज्जित किया, जिनसे बराबर निन्दात्मक ध्वनि निकलती रही। मैंने अपने मनको पखावज बनाया, जो सदैव कुसंगति की अद्भुत चाल की छटा दिखाता रहा। मेरे घर में तृष्णा नाना प्रकार की ताल देकर नाचती रही। मैंने माया का कमर में फेंटा बाँधा और लोभ का तिलक मस्तक पर लगाया। सम्भवतः सभी स्थानों में सभी कलाओं को स्पष्ट करके दिखलाता रहा। यहाँ तक कि अपने काल को भी भुला दिया।

कृपाकर अब तो मेरी इस अविद्या को दूर कीजिये।

(ब) भूषण कवि कहते हैं कि हे शिवाजी महाराज आपके आतंक से बैरियों की स्त्रियों की बुरी दशा है। जो सदैव पर्दे में रहती थीं, वे आज भयानक पहाड़ों पर मारी मारी फिरती हैं। जो बढ़िया मिठाई खाया करती थीं वे फल-फलारी से अपना गुज़ारा करती हैं। जो दिन में तीन-तीन बार भोजन करती थीं, वे आज तीन बेर खाकर दिन काट रही हैं। सुकुमारता के कारण जिनका शरीर भूषणों का भार भी न सह सकता था वे आज भूखों के मारे विकल हो रही हैं। जिनपर सदैव पंखे चला करते थे, वे आज निर्जन बनों में मारी मारी फिरती हैं, और जो रत्नजटित हारों से सुसज्जित रहती थीं, वे बिना वस्त्रों के—नंगी—जाड़े के मारे थर-थर काँप रही हैं। कितनी ज़बर-दस्त मजबूरी है! क्या करें, किसी प्रकार तो जान बचे!

(स) मेरी मातृ-पितृभूमि (भारत जननी) वह है, जो सदैव परोपकार को अपने जीवन का दृढ़ व्रत मानती रही है, जिसका स्वभाव अत्यन्त कोमल रहा है, जहाँ पर सदैव सुखशान्ति का साम्राज्य रहा है, और जिसमें कोयल की मनोहर कूक सदैव गुञ्जरित होती रही है।

प्रेम से पुलकित होकर अपने पुत्रों को हृदय से लगाकर सुमित्रा माता कहती हैं—तुम चारों भाई पैरों से चलना कब सीखोगे। वह कौन दिन होगा

जब मैं तुम्हारे सुन्दर तन पर बालकोचित भूषण सजे हुए देखूँगी। तृण तोड़कर तुम्हारे ऊपर प्राण निछावर करूँगी, तुम्हारा किलक-किलककर चलना, नाच-नाचकर गमन करना, कौतुक से देखना, भागना और फिर लौट आना—यही सब मनोहर कार्य्य करते हुए आँगन में कब देखूँगी।

मणिखम्भों का प्रतिविम्ब पड़ने पर जो सुन्दर छवि दिखाई देती है उसे कब देखूँगी। तुम्हारी बाल-क्रीड़ा, चन्द्रलीला का आनन्द, भूपति के पुण्यसागर में उमंग का आना देखकर घर-घर बधाई कब बजेगी। जब यह सब काम होंगे, तब मुझे नेत्रों का लाभ प्राप्त होगा। और उस समय तुम्हारे तोतरे बचन सुनकर जन्म धारण करने का फल मिल जायगा। चारों भाइयों के चरित्र की नदी में स्नान करनेवाले महात्मा तुलसीदासजी कहते हैं कि क्या मैं आज भी अयोध्या नगर में निवासकर ऐसा देख सकूँगा।

सुन्दर और छोटे-छोटे धनुषों से हाथ सुसज्जित हों, और उन्हीं के अनुसार पीले कपड़े से कमर में तरकस बँधा हो। सुन्दर जूते पैरों में पहने हों और किंकिणी की ध्वनि से आनन्द प्राप्त हो रहा हो, जिन्हें देखकर यह इच्छा होती हो कि सदैव इन्हीं के निकट रहे। पहुँची व कड़े पहने और गले में हार धारण किये, कानों में कुंडल डाले तथा मस्तक पर तिलक लगाये हुए सुन्दर अंगवाले जिनके साथ में उनके चारों छोटे भाई गोली, भौंरा और चकई का

खेल खेलते हों। म० तुलसीदासजी कहते हैं कि ऐसी अद्भुत मूर्ति सदैव मेरे हृदय में वास करे।

(२) क— प्रश्न एक के (व) अवतरण में कवि की कविता में तत्कालीन इतिहास और समाज की साधारण दशा का संक्षिप्त वर्णन है। उसकी कविता ओज-पूर्ण तथा वीररस प्रधान है और उसमें कविने हिन्दू और हिन्द का सच्चा संदेश दिया है। उसके जीवन सम्बन्धी अन्य बातें पहले लिखी जा चुकी हैं।

(स) इस अवतरण के कवि श्रीधर पाठक जोंधरी, ज़िला आगरा के रहनेवाले सारस्वत ब्राह्मण थे। उनका जन्म सन् १८६० ई० में हुआ और देहान्त १९२८ ई० में। इनकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी। इन्हें संस्कृत, अंग्रेज़ी और हिन्दी का अच्छा ज्ञान था। ये खड़ीबोली और ब्रज-भाषा दोनों के कवि थे। खड़ी बोली के तो आचार्य्य थे। इन्होंने गोल्डस्मिथ के तीन ग्रन्थों का, एकान्त वासी योगी, ऊजड़ गाँव और श्रान्त पथिक के नामसे बड़ी योग्यता-पूर्वक अनुवाद किया। इसके सिवा और भी बहुत सी फुटकर कवितायें भी लिखी। ये लखनऊ के पंचम-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति हुए थे।

(ख) अवतरण (व) मनहरण छन्द है। इसका लक्षण पहले लिख चुके हैं। अवतरण (स) की प्रथम चार पंक्तियों में दिक्पाल छन्द है। अर्थात् बारह-बारह की यति से उसके प्रत्येक पद में चौबीस-चौबीस मात्राएँ हैं। इसमें पाँचवीं तथा सत्रहवीं मात्रायें लघु होती हैं।*

---

* पहले पद का का और तीसरे पद का 'अपना' का 'ना' लघु पढ़े जायँगे।

(३) च—इस छन्द में समअभेदरूपक अलङ्कार है। इसका लक्षण पहले लिख चुके हैं।

छ—यहाँ भी समअभेदरूपक अलङ्कार है; क्योंकि भलाई तथा भलमनसी में डेरे तथा हाट का आरोप किया गया है।

ज—यहाँ लाटानुप्रास अलङ्कार है।

(४) हारगीतिका और दोहे के लक्षण पहले लिख चुके हैं। १२ मात्राओं का तोमर छन्द होता है। अन्त में क्रम से गुरु, लघु होते हैं। यथा—

मुख में मधुर उच्चार, कर में सदा उपकार।
रखते हृदय में प्रीति, है सुजन की यह रीति॥

शार्दूलविक्रीड़ित—म, स, ज, स, त, त, ग, (SSS IIS ISI IIS SSI SSI S) बारह और सात वर्णों की यति से १९ वर्ण का होता है। यथा—

अन्तस्ताप विनाश हेतु तुम हो, सर्वत्र ही चन्द्रमा।
आलोकार्थ सदैव ज्ञान-पथ के, देवेन्द्र सूर्योपमा॥
उल्लासी शत भक्तवृन्द तुम से, होते रहे सर्वदा।
संसारी सब दुःख, सिन्धु तरणी, स्वामी तुम्हीं हो सदा॥

मालिनी—न न म य य (III III SSS ISS ISS) का मालिनी-वृत्त होता है। इसके आठ और सात वर्णों पर यति होती है। यथा—

जगकर कितनी ही रात मैंने बिताईं।
यदि तनिक कुमारों को हुई बेकली थी॥
यह हृदय हमारा भग्न कैसे न होगा,
यदि कुछ दुख होगा बालकों को हमारे॥

कुंडलिया—दोहा और रोला मिलकर ६ पद का कुंडलिया छन्द होता है। इसके आदि और अन्त का शब्द एक ही होता है। दोहे का चौथा चरण रोला का आरम्भ होता है और इसमें कुल १४४ मात्रायें होती हैं। यथा—

दौलत पाय न कीजिये, सपने में अभिमान।
चंचल जल दिन चारि को, ठाँव न रहत निदान॥
ठाँव न रहत निदान, जियत जग में यश लीजै।
मीठे बचन सुनाय, विनय सब ही की कीजै॥
कह गिरधर कविराय अरे यह सब घट तौलत।
पाहुँन निश दिन चार, रहत सबही के दौलत॥

(५) महात्मा तुलसीदासजी की जीवनी

इन महाकवि का जन्मकाल प्राय: संवत् १५८९ माना जाता है और जन्मस्थान बाँदा ज़िले का राजपुर नामक ग्राम है। कुछ लोग यह गौरव तारीगाँव को भी देते हैं। यह महानुभाव शूकरक्षेत्र, अयोध्या, काशी और मथुरादि तीर्थों में भ्रमण करते रहे। इनकी प्राय: सभी रचनायें महाराज रामचन्द्रजी से सम्बन्ध रखती हैं। इन्होंने उनको साकारब्रह्म माना है। ये दास्य श्रेणी के भक्त थे। हिन्दी के कवियों में इनका पद सबसे ऊँचा है। राजा से लेकर प्रजा तक आबालवृद्ध सभी जाति, सभी श्रेणियों के व्यक्तियों के लिये इन्होंने अपूर्व सन्देश दिया है। इन्होंने अपनी रचना में आदर्श गृहस्थी और आदर्श समाज का चित्र खींचा है। ये विश्व-कवि थे। इन्होंने सोमवार चैत्र शुक्ल

नौमी संवत् १६३१ वि० को अयोध्या में रामायण का आरम्भ किया और काशी में उसकी पूर्ति हुई। इसके अतिरिक्त इन्होंने विनयपत्रिका, गीतावली, दोहावली, कवितावली, कृष्णगीतावली, रामललानहछू, वैराग्यसंदीपिनी, बरवा रामायण, पारवतीमंगल, जानकीमंगल, रामाज्ञा-प्रश्न और कलि-धर्म-निरूपण आदि अनेक ग्रंथ रचे हैं।

साहित्य २

समय ३ घंटे

परी० { १. श्री० बाबूराम बित्थरिया, साहित्यरत्न
२. श्री० भागीरथप्रसाद दीक्षित "विशारद"

सूचना—शुद्ध और स्वच्छ लेख तथा विराम-चिन्हों के उचित प्रयोग के लिये १० प्रतिशत अङ्क सुरक्षित हैं।

१. निम्नलिखित अवतरणों का अर्थ सरल तथा सुबोध भाषा में लिखिये:—

(अ) जिसका भीतर बाहर एक सा हो और विद्यानुरागी, उपकारप्रियता आदि गुण जिसमें सहज हों, अधिकारमें क्षमा, विपत्ति में धैर्य सम्पत्ति में अनभिमान और युद्ध में जिसकी स्थिरता है, वह ईश्वरकी सृष्टि का रत्न है और उसी की माता पुत्रवती है। ७

(अ) रसिकमित्र क्या, बहुत से काव्य-कलाप ऐसे देखने में आते हैं कि उनको ध्यान में रखकर काव्य के नवीन नियम रचना महाकवियों का कर्त्तव्य है। पिङ्गल तो प्रसिद्ध ही है, डिङ्गल भी हमने राजपूताने के कवियों से सुना है। वह अपने ढङ्ग पर रोचक और नियमबद्ध है; परन्तु उक्त महाकवियों को "अनर्गल" शास्त्र बनाना चाहिये। उसमें जिन शब्दों का वर्णन होना चाहिये उनके नाम हम रक्खे देते हैं। सुनिये—

रबरछन्द, केंचुवाछन्द, माड़छन्द और गड़बड़छन्द इत्यादि-इत्यादि। ८

(ई) प्रेम महामोह का सारभूत, निश्चलता का लौहस्तम्भ, करुणा का अपार समुद्र, नैराश्य का गगनस्पर्शी उच्चपर्वत, सहिष्णुता का जनक, मन की गति का सीमा-चिह्न, सुख और दुख दोनों का निश्चित सिद्धान्त है। ३

(२) अधोलिखित पद्यों में से किन्हीं तीन का अर्थ स्पष्ट कीजियेः— ६

(क) दहैं निगोड़े नैन ये, गहैं न चेत अचेत।
हौं * कसि कै रिस को करौं, ये* निरखत हँसि देत॥

(ख) लिखन बैठि जाकी सबहिं* गहि गहि गरब गरूर।
भये न केते जगत के, चतुर-चितेरे कूर॥

(ग) कीट-समन्दर सम करत, मो मन सुरुचि प्रकाश।
प्रिया-प्रेम-पावक पकत, पावत परम हुलास॥

(घ) सब सज्जन के* मान को, कारन इक हरिचन्द।
जिमि सुभाव दिन रैन के, कारन नित हरि चन्द॥

(ब) निम्नाङ्कित पात्रों का चरित्र लिखियेः— ६
इन्द्र, विश्वामित्र और शैव्या।

(३) निम्नलिखित लोकोक्तियों का प्रयोग अपने बनाये वाक्यों में कीजिये और यह भी अङ्कित कीजिये कि वह किन अर्थों में प्रयुक्त होती हैं:— ८

१. मेंडकी का नाल जड़ाना।
२. आँखों के अन्धे का नाम नैनसुख।
३. ये गाहक करबीन के तुम लीनी कर वीन
४. जिसकी लाठी उसकी भैंस।

(४) निम्नलिखित वाक्यों में जिन विराम चिन्हों का प्रयोग हुआ है उनके रूप और नाम लिखकर उनके प्रयोग में आने के अवसरों का सूक्ष्म वर्णन कीजिये। ७

(पत्र खोलता हुआ) न जाने प्रिया हमसे कब तक विलग रहेगी। फाल्गुन की पूर्णिमा तो बहुत दूर नहीं है, फिर अब तक चन्द्रकला के स्वयम्बर का न्योता श्री कंचनपुरनरेश ने यहाँ क्यों नहीं भेजा? (पत्र पढ़कर) इस पत्र ने तो मुझे अपार चिन्ता का पात्र बनाया।

(५) अ दूसरे प्रश्न में जिन शब्दों के नीचे रेखाएँ खिची हैं उनके समास विग्रह-सहित लिखिये। इसी प्रश्न में जिन शब्दों के ऊपर यह (*) चिन्ह बना है उनके कारक भी लिखिये और बताइये कि 'समास' और 'कारक' से क्या अभिप्राय है? ८

(ब) अकर्म्मक और सकर्म्मक क्रियाओं का भेद सम-

झाइये, और अपूर्णभूत, सामान्यवर्तमान तथा प्रेरणार्थक क्रियाओं के दो-दो उदाहरण दीजिये। ७

(६) क रूपक और अपन्हुति अलंकार किसे कहते हैं। उदाहरण देकर समझाइये।

(ख) निम्नलिखित पदों के अलंकार समझाकर लिखिये। १०

१. कोमल कमल के गुलावन के दल के,
सुजात गड़ि पाँयन बिछौना मखमल के।

२. सङ्ग ते जती कुमन्त्र ते राजा।
मान ते ज्ञान पान ते लाजा॥
प्रीति प्रणय बिनु मद ते गुनी।
नासहिं बेगि नीति अस सुनी॥

३. वह कविता औरे जु सुनि, घूमत चतुर समाज।

४. काम-कुसुम धनु सायक लीन्हे।
सकल भुवन अपने बस कीन्हे॥

(७) 'चित्रकार' और 'कवि' की तुलना कीजिये। आवश्यकतानुसार उदाहरणों का भी प्रयोग कीजिये। उत्तर-पुस्तक की अधिक से अधिक दस पंक्तियों में ही हो। १०

———

उत्तर

साहित्य २

(१) अ मनुष्य बाहर से देखने में जैसा दिखाई देता हो, वैसा ही उसका हृदय भी हो, स्वभाव से ही विद्या का प्रेमी और उपकार-प्रिय हो, जिसमें अधिकार पाकर भी क्षमा और शील हो, जो संकट के समय धीरज रखता हो, सम्पत्ति पाने पर जिसे अभिमान न हो, युद्ध में दृढ़ हो, उसे ही सृष्टि का शृंगार समझना चाहिये। वास्तव में उसी की माता का दूध सार्थक है। यों तो प्रायः सभी स्त्रियाँ सन्तान उत्पन्न करतीं और माता कहलाती हैं।

(अ) केवल रसिकमित्र से ही क्या, प्रायः आजकल के सभी पत्रों की कवितायें ऐसी निकल रही हैं कि उनको पढ़कर छन्दों के नये नियम बनाने की आवश्यकता का अनुभव हो रहा है। इस विषय के आचार्य्यों का धर्म है कि वह शीघ्र ही इस कार्य्य को पूर्ण करें। पिंगल तो सब का जाना हुआ है, डिंगल की रचना भी राजपूताने के कवियों ने की है। वह भी अपने ढंग में उत्तम है। परन्तु जिन महाकवियों से हमारी प्रार्थना है उनको एक अनर्गल — अनियमित — शास्त्र रचना होगा।

जिन छन्दों का वे समावेश करेंगे उनके ये नाम हम रक्खे देते हैं—

सुनिये— रबरछन्द, केंचुआछन्द, माणछन्द, और गड़बड़छन्द इत्यादि, जिनमें मात्राओं और वर्णों की गणना और क्रम का कोई हिसाब न होगा।

(इ) प्रेम में मोह का तत्व गुम्फित है। वह दृढ़ता का स्तम्भ, करुणा का गहरा सागर, निराशा का ऊँचा पहाड़, सहनशीलता का पिता, मन की गति की सीमा का चिन्ह और सुख तथा दुख दोनों ही का निश्चय किया हुआ सिद्धान्त है। भाव यह है कि प्रेम के साथी मोह, दृढ़ता, करुणा, निराशा, सहनशीलता, दुख और सुख. यह सब अपने आप ही उत्पन्न हो जाते हैं।

(२) क ये कम्बख़्त नेत्र भाड़ में जायँ, इतने अज्ञान हैं कि समझाने पर भी नहीं समझते। देखो न, मैंने तो अपने वशभर क्रोध करने में कमी नहीं करती, परन्तु क्या करूं, लाचार हूँ, ये (नेत्र) देखते ही हँस देते हैं और सब क्रोध हवा हो जाता है।

(ख) इस (नायिका) का चित्र खींचने के लिये, बड़े-बड़े चतुर चित्रकार यह गर्व धारण करके आये कि हम अवश्य ही खींचलेंगे ; परन्तु बेवक़ूफ़ी का ख़िताब लेकर विदा हुए; क्योंकि वयःसन्धि के कारण उसके अंगों में थोड़ी-थोड़ी देर में ही परिवर्तन हो जाता था। भला ऐसी दशा में वे बेचारे यथार्थ चित्र कैसे बना सकते !

(ग) जिस प्रकार समन्दर नाम का कीड़ा अग्नि में रहकर ही आनन्द पाता है उसी प्रकार मुझे

अपनी प्रेमिका की प्रेमाग्नि में पकते रहने ही में आनन्द है।

(ब) विश्वामित्र तथा शैव्या का चरित्र पीछे लिख चुके हैं।

इन्द्र का चरित्र

इन्द्र दूसरे का वैभव देखकर तुरन्त ही ईर्ष्या और द्वेष की अग्नि में जलने लगता है। वह दूसरे की उन्नति कभी नहीं चाहता। उसे किसी के द्वारा यज्ञादि शुभ कार्यों का किया जाना बहुत बुरा मालूम होता है। वह भयभीत होता है कि कहीं मेरा अधिकार न छिन जाय। धृष्टता, अनुदारता, छल, कपट और स्वार्थ-साधन में वह बहुत ही पक्का है। उसे विश्वामित्र के सदृश वही सहकारी अच्छा लगता है, जो समय पर उसके लिये सभी प्रकार की निष्ठुरता और दुष्कर्म कर सके। नारद की तरह खरी कहनेवालों से दूर भागता है। उसमें ऊपर की बनावट बहुत है। वह अपने विपक्षी का नाश कराने के लिये अपने सहायकों की ख़ुशामद करना भी ख़ूब जानता है।

(३) १. मेंढकी का नाल जड़ाना। छोटे आदमी का बड़ा काम करने की चेष्टा करना। क्यों साहब, अब तो मेढकी भी नाल जड़ाने लगी। क्या आपने भी उस ज़मी- दारी पर रुपया लगाया है।

२. आँखों के अन्धे नाम नैनसुख। गुण के विरुद्ध कार्यकरना—बिना देखेभाले काम करना। घंटा भर

हो गया, आपको किताब ही नहीं मिली। "आँखों के अन्धे, नाम नैनसुख" ! यह कैसी रक्खी है !

३. जो जिसकी इच्छा रखता है वही उसे पसन्द आता है। "ये ग्राहक करबीन के तुम लीनी कर बीन। यथा—आप इनको पिंगल पढ़ाना चाहते हैं; पर ये बिचारे उसे क्या समझें !

४. जिसमें सामर्थ्य है, उसी की विजय है। "जिसकी लाठी उसकी भैंस"। देखो न, पुलिस मनमाना अत्याचार करने में तनिक भी नहीं चूकती।

(४) अ— ( ) इस चिन्ह को कोस्ट कहते हैं। यह कभी तो अपने पूर्व में लिखे शब्द का दूसरा अर्थ बताता है, कभी किसी दूसरे मुख्य भाव का संकेत करता है।

आ—,इसको अल्पविराम या कामा कहते हैं। जहाँ थोड़ी देर रुकना पड़ता है वहाँ इसका उपयोग होता है।

इ—? यह प्रश्नबोधक चिन्ह है। उसे प्रश्न- सूचक वाक्य के पीछे लगाते हैं।

ई—। इसका नाम पूर्णविराम है। जहाँ पर एक वाक्य पूरा होता है. वहाँ लगाया जाता है।

(५) अ— निगोड़े नैन—विशेषण और विशेष्य के संयोग से कर्मधारय समास।

चतुर चितेरे— ,, ,, ,, ,,

कीट समन्दर— ,, ,, ,, ,, ,,

प्रिया-प्रेम-पावक (प्रिया के प्रेम का पावक) षष्ठी तत्पुरुष समास।

हौं—कर्त्ता कारक। ये—कर्त्ता कारक। सबहिं—कर्मकारक। सज्जन के—सम्बन्ध कारक।

समास—भिन्न-भिन्न दो वा कई पदों के मिलने से, जब एक पद बनता है तब उसे समास कहते हैं।

कारक—संज्ञाओं की उस अवस्था को कहते हैं, जिससे वाक्य में संज्ञाओं, क्रियाओं और दूसरे पदों से सम्बन्ध जाना जाता है।

(ब) अकर्मक और सकर्मक क्रियाओं के भेद—सकर्मक क्रिया का कोई कर्म होता है, पर अकर्मक क्रिया का कर्म नहीं होता। 'खाना' सकर्मक क्रिया है, क्योंकि कोई चीज़ खाई जाती है और 'जाना' अकर्मक क्रिया है, क्योंकि कुछ जाया नहीं जाता। परन्तु प्रयोग के अनुसार कभी एक ही क्रिया सकर्मक और अकर्मक होती है। जैसे वह सिर खुजलाता है और उसका सिर खुजलाता है। यहाँ पहले वाक्य में खुजलाता है सकर्मक क्रिया है; और दूसरे वाक्य में वही अकर्मक है।

अपूर्णभूत का उदाहरण—मोहन पोथी पढ़ता था, सोहन चिट्ठी लिखता था।

सामान्य वर्तमान—वह आता है, मोहन जारहा है। प्रेरणार्थक क्रिया—राजा मोती से हल चलवाता है, बाबू मुन्नी से गीत गवाते हैं।

(६) क रूपक अलङ्कार—जहाँ भेद-रहित उपमान का उपमेय में आरोप हो, परन्तु उपमेय के स्वरूप का निषे-

धक कोई शब्द न हो, वहाँ रूपकालङ्कार होता है। यथा—"अलि नवरंगज़ेब चम्पा शिवराज है।"

अपह्नुति अलङ्कार—प्रकृति (उपमेय) का प्रतिषेध करके अन्य (उपमान) का स्थापन अर्थात आरोप करना 'अपह्नुति' अलङ्कार कहलाता है। यथा—"भौंय नहीं युगचाप चढ़े मघवा"। यहाँ उपमेय "भौंय" का निषेध करके इन्द्रधनुष को स्थापित किया गया है।

(ख) १. अतिशयोक्ति अलङ्कार है। क्योंकि यहाँ लोक-मर्यादा का उल्लंघन करके अलौकिक उक्ति 'मख़मल के बिछौनों का पैरों में गड़ना' कथन किया है।

२ यहाँ दीपक अलंकार है; क्योंकि यहाँ उपमेय और उपमान के एक ही धर्म "नासहिं" का कथन किया गया है।

३. यहाँ भेदकातिशयोक्ति अलंकार है; क्योंकि यहाँ "औरै" पद से भेद करके अत्युक्ति की गई है।

४. यहाँ द्वितीय विभावना है। क्योंकि पूरा कारण न होने पर भी 'पुष्पों ही के बाण से सम्पूर्ण भुवन वश में होगये हैं।

(७) चित्रकार और कवि की तुलना :—

१. दोनों ही मनुष्य तथा प्रकृति के भावों का चित्रण करते हैं। एक अपनी लेखनी एवम् शब्दों के द्वारा और दूसरा अपनी तूलिका और विविध रङ्गों के द्वारा।

२. दोनों का कार्य बारीक और अत्यन्त कठिन है और दोनों ही को लोकोत्तर प्रतिभा की आवश्यकता है।

३. दोनों ही की कल्पनाशक्ति एक सी है किन्तु कवि जिस आशय या भाव को बहुत से शब्दों में प्रकट करता है, उसी को चित्रकार तूलिका के एक मामूली संकेत से प्रकट कर सकता है।

४. कवि के कार्य में चित्रकार के कार्य से अधिक स्थायित्व है।

५. सभ्यता की उन्नति के समय में चित्रकला की उन्नति और कविता की अवनति होती है। इस विषय में लार्ड मेकाले ने अपने एक लेख में अच्छा प्रकाश डाला है।

साहित्य ३

समय ३ घंटे

परीक्षक— { १. श्री० मदनलाल जैन बी० ए०, एल्–टी०
२. श्री० श्रीकृष्ण शुक्ल, विशारद

निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर न्यून से न्यून ८० और अधिक से अधिक १०० पंक्तियों में एक भावपूर्ण निबन्ध लिखिये। निबन्ध लिखने से पहले उसका ढाँचा बनाइये जो १५ पंक्तियों से अधिक न हो। यह ढाँचा आपके उत्तर का भाग समझा जायगा।

१. हमारे देश के उद्योग-धन्धे।

२. पशु-पक्षियों पर प्रेम ।
३. सबसे अच्छा मेला जो आपने देखा हो ।
४. छात्रालय में रहने से लाभ ।
५. गोस्वामी तुलसीदासजी के जीवनचरित्र और उनके ग्रन्थों का भारतवर्ष पर प्रभाव ।
६. वर्षा-काल में नदी-तटवर्ती किसी उपवन की शोभा का वर्णन ।

प्रश्न-पत्र सं० १९८३

साहित्य १

समय ३ घन्टे

[परीक्षकः—पं० गिरिजादत्त शुक्ल "गिरीश" बी० ए०]

सुपाठ्य लेखन और परिमार्जित भाषा के लिए १० अंक नियत हैं ।

(१) निम्नलिखित अवतरणों का अर्थ परिचय-सहित सरल भाषा में कीजिए ।

(अ) कह्यो कान्ह सुनु जसुमति मैया ।
आवहिंगे दिन चारि पाँच में हम हलधर दोउ भैया ॥
मुरली बेंत विषान देखियो सृङ्गी बेर सबेरो ।
लै जिनि जाइ चुराइ राधिका कछुक खिलौना मेरो ।
जा दिन तें तुमतें हम बिछुरे, कोऊ न कहत कन्हैया ।
भोरहिं नाहिं कलेऊ कीनो, साँझ न पियो अघैया ।

(ब) देवल गिरावते फिरावते निसान अली
ऐसे डूबे राव-राने सबी गये लबकी।
गौरी गनपति आप औरन को देत ताप,
आपनी ही बार सब मारि गये दबकी।
पीरा पयगंबरा दिगंबरा दिखाई देत,
सिद्ध की सिद्धाई गई रही बात रब की।
कासी हूँ की कला जाती, मथुरा मसीत होती,
सिवाजी न होतो तो सुनति होत सब की।

(स) बूझत जनक नाथ ढोटा दोउ का के हैं।
तरुन तमाल चारु चम्पक बरन तनु
कौन बड़ भागी के सुकृत परिपाये हैं।
सुख के निधान पाये, हिय के पिधान लाये
ठग के से लाड़ू खाये प्रेम-मधु छाके हैं।
स्वारथ-रहित परमारथी कहावत हैं
ये सनेह बिबस बिदेहता बिबाके हैं।
रेखाङ्कित शब्दों के आधुनिक रूप लिखिये।

(२) निम्नलिखित छन्दों में कौन से अलंकार हैं— १०
नैया मेरी तनिक सी, बोझी पाथर भार।
चहुँ दिश अति भौंरें उठत, केवट है मतवार॥
केवट है मतवार नाव मँझधारहिं आनी।
आँधी उठी प्रचण्ड तेउ पै बरसत पानी॥
कह गिरिधर कविराय, नाथ हो तुमहिं खेवैया।
उरै दया कौ डाँड़ घाट पर आवै नैया॥

× × ×

सन्ध्या फूली परम प्रिय की, कान्ति सी है दिखाती।
मैं पाती हूँ रजनितन को, श्याम के रंग डूबा॥

ऊषा आतीप्रति दिवस है प्रीति से रंजिता हो।
पाया जाता वरवदन सा ओप आदित्य में है॥

× × ×

(३) श्लेष और यमक के लक्षण उदाहरण-सहित लिखिए। ८

(४) निम्नलिखित छन्दों के नाम लक्षण-सहित बतलाइए। १२

कुञ्ज में गुपाल लाल राधिका बिराजहीं।
वृन्द गोपिबाल के सुराग रङ्ग साजहीं॥
नृत्य में उपङ्ग सङ्ग बीन वेनु बाजहीं।
लच्छरी बिलोकि यच्छ अच्छरी सुलाजहीं॥

× × ×

ग्वाल बाल सँग सज्जि, गोपिका गन को रुक्कत।
दधिलुट्टत बरजोर जुट्ट, झंझट सों रुक्कत॥
निरखि नन्दनन्दन कों, भज्जत तित सब मुक्कत।
अकबक्कत मग छाँड़ि, जननि गृह गोबिंद लुक्कत॥

* * *

मुख ससि अभिरामा चारु पीयूषधामा।
भृकुटि धनुष बामा नैन द्वै तीर कामा॥
तन सुवरन बेली सँग सोहै नवेली।
हरि हित अलबेली कुञ्ज में सो अकेली॥

(५) भूषण कवि के विषय में आप क्या जानते हैं? उनकी संक्षिप्त जीवनी लिखिये। बतलाइए कि भूषण कवि की रचना में तत्कालीन समाज का क्या प्रतिबिम्ब है? १५

(६) सूरदास की कविता में अधिकतर किस रस की प्रधानता है? इस सम्बन्ध के कुछ पद जो आपको स्मरण हों, लिखिये। १०

उत्तर

साहित्य १

(१) अ— जब महाराज कृष्ण मथुरा को चले गये, तब उन्होंने अपनी माता यशोदा के लिये उद्धव के द्वारा यह सन्देश भेजा—

हे माता ! हम बलदाऊ भाई को साथ लेकर सम्भवतः चार-पाँच दिन में ही शीघ्रातिशीघ्र लौट आवेंगे। तू मेरी मुरली, बेंत, विषाण और सींग होशियारी से रखना। कहीं समय असमय, राधिका वहाँ आकर उन्हें न उड़ा ले जाय।

माता हमें यहाँ बड़ा कष्ट है। जिस दिन से हम तुझसे विलग हुए, तब से हमसे कोई अच्छी तरह कन्हैया कहकर बोला भी नहीं है, और न किसी ने कलेवा ही कराया। सच कहते हैं, सन्ध्या को कभी भरपेट दूध भी पीने को नहीं मिला।

(ब) भूषण कहते हैं कि औरंगजेब ने अपनी मदान्धता के चक्कर में पड़कर, हिन्दुओं के देवमन्दिरों को गिरा दिया और अली का झंडा फहरा दिया, जिसे देखकर प्रायः सभी राना-राजा डर के मारे भाग गये। हमने गौरा-गणपति आदि देवों को भी देख लिया, वे केवल भक्तों ही को दण्ड देने के मर्द हैं जब स्वयं उन पर आ बनी और उनके मन्दिर पर कुदाल चला तो एक चली न दी, न जाने कहाँ जा छिपे ! उस समय सिद्धों की सिद्धिता

कपूर की तरह उड़ गई। अब चारों ओर मुसलमानों के पीर, पैग़म्बर और वली लोगोंका ही बोलवाला है—मुसलमानों ही के धर्म की दुहाई फिर रही है। मैं सच कहता हूँ, यदि आज छत्रपति शिवाजी महाराज न होते तो काशी कलाहीन हो जाती, मथुरा में चारों ओर मस्जिदें दिखाई देतीं। कहाँ तक कहें, जितने हिन्दू थे, एक तरफ़ से सबके ख़तने करा दिये जाते और सबको मुसलमान बना लिया जाता। हिन्दुओं का कहीं नाम भी न रहता।

(स) महाराज जनक विश्वामित्रजी से पूछते हैं कि महाराज! यह दोनों बालक किस भाग्यवान के हैं, जिसने इन्हें अपने पुण्यों के फलस्वरूप प्राप्त किया है। उनमें एक तो तरुणतमाल के वर्ण का है और दूसरा चम्पे के फूल के रंग के सदृश गौर वर्ण का है। यह तो आपको कहीं से सर्वसुखों की निधि प्राप्त होगई है। ये बरबस हृदय को वश में कर-लेनेवाले हैं। इनके प्रेम के मधु से मैं छक गया हूँ और ऐसा ज्ञात होता है, मानों किसी ठग को खाने के लिये लड्डू मिल गये हों। ये स्वार्थ से रहित और परमार्थी हैं। इनके स्नेह में मैं विदेह होकर भी फँस गया हूँ।

नाम शब्द	आधुनिक रूप	शब्द	आ० रू०
आवहिंगे	आवेंगे	देखियो	देखना
कोऊ	कोई	भोरहिं	भोर ही
मारिगये	मार गये	ढोटा	बेटा
लाड़ू	लड्डू	कहावत	कहलाते हैं
जिनि	न, नहीं	कछुक	कोई
अधैया	अधाकर	औरन	औरों
काके	किसके	कौन	किस

(२) १. इस छन्द में रूपकातिशयोक्ति अलकार है; क्योंकि यहाँ उपमान उपमेय का अध्यवसान है। अर्थात् यहाँ जीवन को नैया माना है, किन्तु उसका उपमेय पृथक् कथन न करके केवल उपमान "नैया ही" का कथन है।

२. यहाँ प्रथम प्रतीप अलंकार है; क्योंकि कृष्ण की कान्ति तथा मुख आदि उपमेयों को उपमान कल्पित करके फूली सन्ध्या और आदित्य आदि उपमानों को उपमेय कल्पित किया है।

(३) श्लेष—श्लिष्ट पदों से अनेक अर्थों का कथन किया जाय, वहाँ श्लेष अलंकार होता है। यथा:—

चरण धरत चिन्ता करत, भावत नींद न शोर।
सुवरण को ढूँढ़त फिरत, कवि भावुक अरु चोर॥

यहाँ चरण और सुवरण पदों के दो-दो अभिप्राय (पाँव तथा छन्दों के चरण और सोना तथा अच्छा रंग) हैं।

यमक—जहाँ एकही शब्द भिन्न-भिन्न अर्थों में अनेक बार आता है, वहाँ यमक होता है। यथा—"तीन बेर खातीं ते वे तीन बेर खाती हैं।" यहाँ पहले बेर का अर्थ बार, मर्तबा है और दूसरे बेर का अर्थ फल-विशेष।

(४) १. यह चामर छन्द है। इसे तूण और सोमबल्ली भी कहते हैं। यह र ज र ज र (SIS ISI SIS ISI SIS)-पन्द्रह वर्णों का होता है और इसके पदान्त में यति का नियम है।

२. यह रोला छन्द है। इसके लक्षण पहले लिख चुके हैं।

३. यह ८ और ७ वर्णों की यति से १५ पन्द्रह वर्णवाला 'मालिनी' छन्द है। इसका लक्षण यह है:— न न म य य (||| ||| SSS ISS ISS)।

(५) भूषण की जीवनी पहले लिख चुके हैं। उसकी कविता के पढ़ने से ऐसा ज्ञात होता है कि वह समय हिन्दूसमाज के लिये घोर संघर्षण का था। औरङ्गज़ेब की धर्मान्धता के कारण मन्दिर तोड़े जा रहे थे, हिन्दुओं पर कर लगाया गया था, भिन्न-भिन्न प्रकार से उनका असम्मान किया जा रहा था और उनको मुसलमान बनाने की पूरी चेष्टा की जाती थी, राजराना सभी क्षत्रीपन को खो बैठे थे। किन्तु मरहठों

के मारे उनका नाक में दम आ गया था। उन्होंने इनको हर प्रकार से नीचा दिखाया—शिवाजी ने हिन्दुओं की पूरी तरह से रक्षा की। इस बात की पुष्टि के लिये निम्नांकित अवतरण पर्याप्त हैं।

"देवल गिरावते फिरावते निसान अली"—"शिवाजी न होते तो सुनति होत सबकी"—"अलि नवरंगज़ेब चम्पा सिवराज है"—और "नौरंग में रंग एक न राख्यो" आदि।

(६) वैसे तो सूरदास ने शृंङ्गारादि कई रसों में उत्तम कविता की है। किन्तु काव्यविशारदों का मत है कि उनके वात्सल्यरस-वर्णन में स्वाभाविकतादि के प्राचुर्य्य के कारण अधिक चमत्कार है। यथाः—

१. इस प्रश्नपत्र के प्रथम प्रश्न का पहला पद।

२. जसुमति मन अभिलाप करै।
कब मेरो लाल रेंगे कब धरनी पग द्वैक धरै॥

३. गहे अँगुरिया तात की, नंद चलन सिखावत।

४. चन्द्र खिलौना लैहों मैया मेरी, चन्द्र खिलौना लैहों।

५. जसोदा मैया, मेरी कबहिं बढ़ैगी चोटी।

६. मैया मोहिं दाऊ बहुत खिझायो, आदि।

साहित्य २

समय ३ घंटे

[परीक्षक—श्री रामलषण शुक्ल बी० ए०]

(शुद्ध और स्वच्छ लेख के लिये १० प्रति शत अङ्क सुरक्षित हैं)

(१) निम्नलिखित अवतरणों का अर्थ सरल तथा सुबोध भाषा में लिखिए:— २०

(अ) अहा ! स्थिरता किसी को भी नहीं है। जो सूर्य उदय होते ही पद्मिनी-वल्लभ और लौकिक वैदिक दोनों कर्म का प्रवर्त्तक था। जो दोपहर तक अपना प्रचण्ड प्रताप क्षण-क्षण बढ़ाता गया, जो गगनाङ्गन का दीपक और कालसर्प का शिखामणि था, वह इस समय परकटे गिद्ध की भाँति अपना सब तेज गँवाकर देखो समुद्र में गिरा चाहता ह।

(आ) हे मेरे वीररसमत्त प्रचण्ड योद्धाओ ! वैरीदलदमन समरधीर सुयशी शस्त्रोपजीवियो ! मुझे तुम्हारे प्रसिद्ध राजभक्ति वीरतादि गुणों से पूर्ण आशा है कि तुम शत्रुदल पर उसी भाँति सघन वाण-वर्षा करोगे जैसे घोर जलवृष्टि। तुम्हारा गरजना अरि-सेना को इस प्रकार भयभीत करेगा जैसे भीरु अबलाओं को तड़ित की तुमुल ध्वनि। तुम्हारी तलवारें वैरियों के सिरों पर इस भाँति चमकेंगी जैसे मेघमाला में चंचला। तुम्हारी डपट से रिपुदल ऐसे तितर-बितर हो जायगा जैसे क्वाँर का बादल।

तुम्हारी सिरोही उनकी ग्रीवा को ऐसे काटेंगी
जैसे नर्म पौधे को किसान का हँसिया।

(इ) वाह्य आकृति सर्वोपरि मुख है जिससे मानसिक भाव चट्ट प्रतिविम्बित हो जाता है। मन में किसी प्रकार की वेदना या विकार उत्पन्न होते ही फिर उसका छिपाना कठिन ही नहीं, वरन् असम्भव है। मन की कोई बात यदि प्रकट होगी तो मुख्यतर मुख ही के द्वारा। मुख से मानसिक भाव प्रतिविम्वित होता है यह सामुद्रिकविद्या का एक सूत्र है।

(२) नाटक किसे कहते हैं? हिन्दी में इसका प्रचार कब से हुआ? हिन्दी में कौन-कौन मुख्य नाटक लिखनेवाले हुए हैं? १०

(३) निम्नलिखित लोकोक्तियों का प्रयोग अपने बनाये वाक्यों में कीजिए, अर्थ स्पष्ट हों:—

१. मीठी मीठी गप, कड़ुआ कड़ुआ थू।
२. नक्कारखाने में तूती की आवाज़।
३. नया नौ दिन पुराना सौ दिन।
४. आम के आम और गुठली के दाम।

(४) हिन्दी में किन विराम-चिन्हों का प्रयोग किया जाता है? उदाहरण-सहित लिखिये। ५

(५) अ— कारक किसे कहते हैं? करण और अपादान कारक किस प्रकार जाने जा सकते हैं? १०

(ब) प्रथम प्रश्न में रेखाङ्कित शब्दों के समास विग्रह-सहित लिखिए।

(६) निम्नलिखित पदों के अलङ्कार समझाकर लिखियेः—

(अ) रचित प्रभासी भासी अवलि मकानन की जिनमें अकासी फबै रतन नकासी है।............खासी परकासी पुनवासी चन्द्रिकार्सी जाके बासी अविनासी अघनासी ऐसी कासी है ।

(ब) छिनु छिनु प्रभुपद कमल बिलोकी
रहिहों मुदित दिवस जनु कोकी ।

(स) या मुरलीधर की मुरली अधरान धरी अधरा न धरौंगी ।

(द) साहितनै शिवराज की सहज टेव यह ऐन ।
अनरीझे दारिद हरै अनखीजे अरि सैन ॥

(७) "उपमा और "रूपक" अलङ्कार किसे कहते हैं। उदाहरण देकर समझाइए। ६

(८) श्री० पं० रामशंकर व्यास की शैली में किसी विषय पर लगभग दस पंक्तियों के श्लेषालंकारयुक्त लेख लिखिए १२

उत्तर

साहित्य २

(१) अ—इस अवतरण का अर्थ पहले लिख चुके हैं।

(आ) वीररस के मद्य से उन्मत्त बने मेरे अद्वितीय वीरो ! वैरियों को समर में नष्ट करनेवालो ! युद्ध में दृढ़ता धारण करनेवालो एवम् शस्त्रों को चलाकर ही अपनी उपजीविका करनेवाले मेरे

योद्धाओं! मुझको पूर्ण विश्वास है कि तुम में अचला राजभक्ति और अनुपम वीरतादि गुण ओत-प्रोत हैं। निस्सन्देह तुम विपक्षियों पर बाण-वर्षा करोगे। तुम्हारे बाण मूसलाधार पानी के सदृश उन पर गिरेंगे। जिस प्रकार गाज गिरने की ध्वनि से स्त्रियाँ स्वभाव से ही भयभीत हो जाती हैं, उसी प्रकार शत्रु के दिल तुम्हारी दहाड़ सुनकर दहल उठेंगे। जिस प्रकार घटाओं में बिजलियाँ चमकती हैं, उसी प्रकार तुम्हारी नंगी तलवारें शत्रुओं के सिरों पर चमकेंगी। तुम्हारी डपट सुनकर शत्रुओं की सेना इस प्रकार अस्तव्यस्त हो जायगी, जिस प्रकार क्वार के बादल—कहीं कहीं टुकड़ियों में ही दिखलाते हैं—और तुम्हारी विजयिनी तलवारें उनकी गर्दनों को इस प्रकार कतर डालेंगी, जिस प्रकार कृषकों के हँसिये नवीन उगे पौदों को काट डालते हैं।

(इ) "मनके भावों को तुरन्त ही प्रकट कर देनेवाली, सबसे स्पष्ट इन्द्रिय मुख है। मन के सुख-दुख को छिपाना बिलकुल असम्भव है। क्योंकि मन की बात वैसे तो ज्ञात होना कठिन है; किन्तु मुख की चेष्टा और आकृति से वे भाव तुरन्त ही छलक पड़ते हैं। यह भाव सामुद्रिकविद्या के एक सूत्र में प्रकट किया गया है।

(२) नाटक—इसकी परिभाषा पहले लिख चुके हैं। भारतेन्दुजी ने 'नाटक' नाम का एक ग्रन्थ सं० १९४० वि० में लिखा है। उसमें वे लिखते हैं—"हिन्दी भाषा

में वास्तविक नाटक के आकार में ग्रन्थ की सृष्टि हुए पचीस वर्ष से विशेष नहीं हुए।" इससे स्पष्ट है कि सबसे पहला वास्तविक नाटक सं० १९१५ के लगभग लिखा गया। इससे पहले नेवाज, ब्रजवासीदास, देव तथा महाराज विश्वनाथ प्रभृति लेखकों द्वारा कुछ नाटक ग्रन्थ लिखे गये थे; किन्तु उनमें से कुछ तो केवल काव्यमय थे और कुछ में नाटकीय नियमों का पालन नहीं हुआ है। विशुद्ध नाटक सबसे प्रथम भारतेन्दुजी के पिता गिरधरदासजी ने लिखा, उसका नाम "नहुष नाटक" था। इसके पश्चात् राजा लक्ष्मणसिंहजी ने शकुन्तला नाटक लिखा और भारतेन्दुजी ने "विद्या-सुन्दर" नामक नाटक-ग्रन्थ की रचना की। भारतेन्दुजी से नाटक-साहित्य को बहुत उत्तेजन मिला। उनके पीछे मुख्य नाटककार लाला श्रीनिवासदास व बाबू तोताराम आदि हुए। वर्तमान काल में भी राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' आदि ने नाटक-रचना की। आजकल बाबू जयशंकरप्रसाद, प्रो० पं० बदरीनाथ भट्ट अच्छे नाटककार माने जाते हैं।

(३) १. जो काम सरलता से लाभकारी होता है उसे सभी पसन्द करते हैं। यथा— क्यों साहब! "मीठी-मीठी गप, कड़ुआ-कड़ुआ थू"। पुस्तकालय के सेक्रेटरी तो आप बनने को तैयार थे—अब चन्दा माँगने जायँ दूसरे।

२. ऐसे ज़माने में जब नेताओं तक को कोई नहीं पूछता, तब हमारी कौन सुनेगा। भला "नक्कारख़ाने में कहीं तूती की आवाज़ सुनाई देती है।"

३. देखो रमेश, क़मीज़ को ज़रासा खोंता लग जाने पर न फेंको—"नया नौ दिन, पुराना सौ दिन"। आख़िर यही काम देगी ।

४. राम ने अपनी पुस्तकें भाड़े पर उठाकर "आम के आम गुठलियों के दाम" किये। उसको सभी पुस्तकें मुफ़्त में बच गईं ।

(४) हिन्दी में प्रायः अल्पविराम (,), अर्द्धविराम (;), पूर्णविराम (।), प्रश्नसूचक (?), विस्मयादि बोधक (!) उद्धरण "......", कोलन और डैश (:—), सम्बोधन (!) और विभाजन (—) आदि चिन्ह प्रयुक्त होते हैं। उदाहरण:—

राक्षक—मित्र ! क्या तू नहीं जानता कि मैं प्रारब्ध के भरोसे नहीं हूँ ? हाँ, फिर।

कितने साधारणधर्म ऐसे हैं जिनके न करने से कुछ पाप नहीं होता । जैसे—"मध्याह्ने भोजनं कुर्य्यात्"। इसके न करने से कुछ पाप नहीं है ।

वाक्य तीन प्रकार के होते हैं—सरल, यौगिक और जटिल ।

अहा ! मोर कैसा नाच रहा है !

हम अपने शरीर को किस प्रकार रक्खें ; अपने मन को किस प्रकार बहलावें ; अपने कारोबार को किस प्रकार सँभालें ; यह सब बातें जानना आवश्यक है ।

(५) अ— कारक की परिभाषा पहले लिख चुके हैं। यद्यपि करण और अपादान, दोनों ही का चिन्ह 'से' है, किन्तु करणकारक हेतु व कारण के योग, क्रिया

करने की रीति बताने, कार्य-कारण के भाव और सम्बन्ध की विभक्ति-सहित पद के आगे 'द्वारा' लगाने और भाव तथा मूल्य के अर्थ में प्रयुक्त होता है। यह करण के मुख्य प्रयोग हैं। साधारणतया वह अपने द्वारा किसी क्रिया का सम्पादन करता है।

यथा—क़लम से लिखा, हाथ से साफ़ किया।

अपादान से पृथकत्व का बोध होता है। यथा—पेड़ से फल गिरे, कुएँ से पानी खींचा। अपादान अनेक भावों में होता है। यथा—किसी से डरने में, किसी से हारने में, किसी से छिपने, लज्जित होने, पीछा छूटने और बैर होने आदि में।

(ब) पद्मिनी-वल्लभ (पद्मिनी का वल्लभ),
षष्ठी तत्पुरुष समास।

कालसर्प (काल ही सर्प),
कर्मधारय समास।

वीररसमत्त (वीररस से मत्त),
तृतीया तत्पुरुष समास।

समरधीर (समर में धीर),
सप्तमी तत्पुरुष समास।

शस्त्रोपजीवी (शस्त्र से है उपजीविका जिसकी)
बहुव्रीहि समास।

सर्वोपरि (सर्व-उपरि),
अव्ययीभाव समास।

(६) अ— इस छन्द में यमक अलङ्कार है; क्योंकि इसमें भासी और कासी आदि निरर्थक अथवा भिन्नअर्थबोधक शब्दों का प्रयोग कई बार हुआ है।

(ब) यहाँ निरवयव समअभेदरूपक अलङ्कार है। सीता, उपमेय और को की, उपमान का एक ही रूप कथन किया गया है और बिना अङ्गों के केवल एक उपमेय का एक उपमान में ही कथन है। अतएव निरवयव समअभेदरूपक अलङ्कार हुआ।

(स) यहाँ व्याजस्तुति अलङ्कार है; क्योंकि यहाँ मुरली के व्याज से मुरलीधर की निन्दा झलकती है।

(द) यहाँ प्रथम विभावना अलङ्कार है; क्योंकि अनरीझे और अनखीझे ही दारिद हरने तथा अरि से न हारने का कथन किया गया है। अर्थात् बिना कारण के ही कार्य की सिद्धि हुई है।

(७) उपमा—जहाँ भेद रहते हुए, उपमेय और उपमान का साधर्म्य कथन हो। यथा; "हरिपद कोमल कमल से" यहाँ पद उपमेय और कमल उपमान का भेद रहते हुए भी, एक धर्म कोमलपन कथन किया गया है।

रूपक—जहाँ उपमेय को उपमान रूप कथन किया जाय। यथा—"व्याल बसन्त बड़ो जहरी है।" यहाँ बसन्त उपमेय को 'व्याल' उपमान रूप कथन किया गया है।

(८) दिनकर की प्रखर किरणों से सन्तप्त हो वाटिका में पहुँचा। वहीं कई प्रमुख पंडित भी बैठे थे। सूरदास के एक पद पर कुछ विवाद चला। घोंटू लोगों की दाल न गली। हृषीकेश बहुत चतुर थे, उनकी धाक जम गई। उन्होंने सरिस सुमन का उदाहरण उपस्थित किया और गुलाब के नख की ओर संकेत

कर कहा—"इसी का पिनाक बनाकर कामदेव संसार को विजय करता है। नारद से मुनि भी उसने इसी के द्वारा वश में किये। मकान में बैठे-बैठे किसी को बोध नहीं होता। यदि कुछ चाहते हो, तो स्कंधपुराण का पाठ करो। मिथ्या अभिमान को खूँटी पर टांग दो! इसकी चपेट बुरी होती है; कोरी कण्ठी-माला काम नहीं देती। श्रीशारदा-पीठ के शंकराचार्यजी के उपदेश से मेरा मोह भंग हुआ और मैंने नयनागर, जगत३जागर श्रीवेद भगवान् का आश्रय लिया। अब उरद में सफ़ेदी के बराबर ज्ञान का आविर्भाव हुआ है। उसी के अनुसार मैंने यह व्याख्या की है। यदि भूल हो, क्षमा करना।

साहित्य ३

समय ३ घण्टे

(परीक्षक—श्री० मदनलाल जैन बी० ए०, एल्-टी०)

निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर न्यून से न्यून ८० और अधिक से अधिक १०० पंक्तियों में एक भावपूर्ण निबन्ध लिखिये। निबन्ध लिखने से पहले उसका ढाँचा बनाइये जो १५ पंक्तियों से अधिक न हो। यह ढाँचा आपके उत्तर का भाग समझा जायगा।

१. भारतवर्ष में कृषि की दशा सुधारने के उपाय।
२. स्वास्थ्य-रक्षा ।
३. पशु-पक्षियों में चतुरता।
४. बरसात के किसी दिन का वर्णन ।
५. बड़े नगर में रहने से लाभ व हानियाँ ।
६. किसी देश के यदि आप शासक बना दिये जायँ तो आप क्या करेंगे ?

प्रश्नपत्र सं० १९८४

साहित्य १

समय ३ घण्टे

(१) प्रकरण-निर्देश-सहित निम्नाङ्कित अवतरणों का अर्थ सुबोध भाषा में लिखिये:— ५०

(क) गोविंद कोप चक्र कर लीन्हों।
छाँड़ि आपनो प्रन जादवपति,
जन को (भायो) कीन्हों॥
रथ ते उतरि अवनि आतुर ह्वै,
चले चरन अतिधाये।
मनु (संकित) भूभार उतारन,
चलत भये अकुलाये॥
कछुक अंगते उड़त पीत पट,
उन्नत बाहु विसाल।

स्वेद स्रोत तनु सोभाकन छबि,
घन बरसत जनु लाल ॥
सूर सुभुजा समेत सुदरसन,
देखि (विरंचि) भ्रम्यो।
मानों आन सृष्टि करिबे का,
पद्मज नाम भज्यो ॥

(ख) बिजपूर बिदनूर सूर-सर धनुषन संधहिं ।
मंगल बिनु मल्लारि नारि धम्मिल नहिं बन्धहिं ॥
गिरत गब्भ कोटै गरब्भ चिंजी चिंजा डर।
चालकुण्ड दलकुण्ड गोलकुण्डा संका उर ॥
भूषन प्रताप सिवराज तव,
इमि दच्छिण दिसि संचरै।
मधुरा धरेस धक-धकत सो,
द्रविड़ निबिड़-डर दबि डरै ॥

(ग) राजत सिसु रूपराम, सकल गुन निकाय धाम,
कौतुकी कृपालु ब्रह्म, जानु पानि चारी।
नीलकंज जलद पुंज, मरकत मनि सरिस श्याम,
काम कोटि सोभा, अँग अंग ऊपर वारी ॥
हाटक मनि रत्न खचित, रचित इन्द्र मंदुराम,
इन्दिरा निवास सदन, विधि रच्यो सँवारो।
बिहरत नृप अजिर अनुज, सहित बाल केलि कुशल,
नील जलज लोचन हरि, मोचन भय भारी ॥

(घ) नीके कै मैं न बिलोकन पाये।
सखि ! यहि मग युग पाथक मनाहर,
वधु बिधु-वदनि समेत सिधाये ॥

नयन सरोज किसोर बयस बर,
सीस जटा रचि मुकुट बनाये।
कटि मुनि-बसन तून धनु-सरकर,
स्यामल गौर सुभाव सोहाये॥
सुन्दर बदन बिसाल बाहु उर,
तनु छबि कोटि मनोज लजाये।
चितवत मोहिं लागी चौंधी सी,
जानौं न कौन कहाँ ते धौं आये॥

(२) क— प्रश्न १ के अवतरणों में रेखाङ्कित शब्दों के शुद्ध रूप लिखिये। ५

(ख) भक्त-शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजी तथा महात्मा सूरदासजी के काव्यों में क्या अन्तर है और किनमें क्या-क्या विशेषताएँ आपको जान पड़ती हैं? उत्तर में अपनी स्वतन्त्र सम्मति लिखिये। [उत्तर अधिक से अधिक ३० पंक्तियों में दीजिये]। १५

(३) अ— किसी छन्द की पहचान आप किन-किन उपायों से करेंगे? सतर्क उत्तर दीजिये। ५

(ब) रोला, सोरठा, मनहरन और मालती सवैया के लक्षण लिखिये।

अथवा

कुल गणों के नाम, स्वरूप और उदाहरण लिखिये। कौन से गण क्यों और कहाँ पर अशुभ माने जाते हैं और उनका परिमार्जन कैसे हो सकता है? १०

(४) अ— प्रश्न (१) के 'क' और 'ख' अवतरणों में कौन अलङ्कार हैं ? परिभाषा-सहित उनके नाम लिखिये।

लाटानुप्रास और यमक में क्या अन्तर है ? उदाहरण-सहित समझाइये। १०

(ब) अपन्हुति अथवा अतिशयोक्ति की परिभाषा लिखिये और अपनी किसी पाठ्यपुस्तक से एक उदाहरण दीजिये। ५

(५) कवि-भूषण अथवा महाकवि सूरदासजी की जीवनी तथा उनकी काव्य-रचना पर एक टिप्पिणी लिखिये, जो प्रायः ४० पंक्तियों के भीतर ही समाप्त हो जाय। १०

उत्तर

साहित्य १

(१) क जब भीष्मपितामह ने "कृष्ण" को अस्त्र ग्रहण करा देने का प्रण किया और वह क्रोध करके सहस्रों योद्धाओं का विनाश करने लगे तब पाण्डव दुखी हुए और उनको अपनी विजय में शङ्का हुई। तब, भगवान कृष्ण ने अपने भक्तों के कष्टनिवारण करने और दूसरे भक्त भीष्म की प्रतिज्ञा रखने के लिये अपने हाथ में अस्त्र धारण किया। उसी समय का यह पद महात्मा सूरदास ने कहा है।

भगवान कृष्ण ने क्रोधित होकर चक्र को हाथ में ग्रहण किया और भक्त की इच्छा पूर्ण करने के लिये प्रण-पालन की चिन्ता न की। वे रथ से भूमि पर उतर पड़े और पैदल ही भागे। उस समय उनका मन सशङ्क था; क्योंकि भूमि का भार उतारना था। पर यदि प्रण की रक्षा करते तो यह असम्भव था, अतएव आकुल होकर चले। वेग से चलने के कारण कुछ पीताम्बर उड़ा और विशाल बाहु उठी। श्रम के कारण अङ्ग में जो पसीना बहने लगा सो ऐसा ज्ञात होता था मानों लाल बादल बरस रहे हैं। सूरदासजी कहते हैं कि सुदर्शन-युक्त भुजा देखकर ब्रह्मा को भ्रम हुआ कि कहीं पुनः सृष्टि-निर्माण का श्रम तो न उठाना पड़ेगा। क्योंकि कृष्ण भगवान ने अस्त्र धारण किया है। कहीं ऐसा न हो कि क्रोध में सारी सृष्टि का संहार कर डालें अतएव वह हरि नाम का जाप करने लगा।

(ख) भूषण कवि कहते हैं कि हे महाराज शिवाजी, आपका प्रताप दक्षिण दिशा में ऐसा छा गया है कि बीजापुर और बिदनूर के शूर वीर धनुष पर वाण चढ़ाना भूल गये हैं। मालाबार की स्त्रियाँ सौभाग्य-चिन्ह छोड़कर अपने बाल भी नहीं बाँधती हैं। क़िले में भली भाँति सुरक्षित रहने पर भी शत्रुओं की स्त्रियों के गर्भ गिर जाते हैं। उनके बालक सदैव भयभीत रहते हैं। चालकुण्ड, दलकुण्ड और गोलकुण्डा के क़िलेवालों के हृदय डर के मारे प्रकम्पित रहते हैं। मधुरा (मदुरा) का राजा डरता

रहता है और द्रविड़ लोग मारे डर के सदैव छिपे रहते हैं—निकलते ही नहीं ।

(ग) जिस ब्रह्म के कौतुक से ही सब कुछ हो सकता है, वही सकल गुणनिधान आज आजानबाहु बालक राम के रूप में सुशोभित है। उनके शरीर की शोभा, नीलकमल, बादल और मरकतमणि के सदृश है और उसपर अनेक कामदेव बलि जाते हैं। राजा दशरथ का भवन कंचन, मणि और रत्नों के सँयोग से इन्द्र के प्रासाद की शोभा पाता है और ऐसा भान होता है कि इसमें सदैव लक्ष्मीजी निवास करती हैं। विधाता ने मानों उसे स्वयम् अपने हाथों से सँभाल कर रचा है । इसी सदन में अपने-अपने छोटे भाइयों के साथ बाल-क्रीड़ा में कुशल (राम) विहार कर रहे हैं। ऐसे नीलकमल से लोचनवाले भगवान् राम घोर संकटों को भी दूर कर देते हैं।

यह सानुज राम की बाल-क्रीड़ा का वर्णन है।

(घ) राम-बन-गमन के समय मार्ग-वासिनी किसी स्त्री की अपनी सखी के प्रति उक्ति है:—

हे सखी, अभी-अभी, थोड़ी ही देर हुई, इधर होकर दो सुन्दर पथिक, जिनके साथ चन्द्रमा के सदृश मुखवाली एक स्त्री भी थी, निकले थे। मुझे खेद है कि मैं उन्हें अच्छी तरह, मन भर के, देख भी न पाई और वह निकल गये । उनके नेत्र कमल के समान सुन्दर थे। श्रेष्ठ किशोर अवस्था थी; सिर पर जटा-जूट धारण किये हुए थे। कटि में

मुनि-वस्त्र के साथ तरकस कसा हुआ था और हाथ में सुन्दर धनुष सजा हुआ था। उनका मुख सुन्दर, भुजाएँ लम्बी और वक्षस्थल विशाल था। ऐसे शरीर की शोभा देखकर अनेक कामदेव भी लज्जित हो जाते थे। सत्य कहती हूँ, उनको देखकर मैं तो चकाचौंध हो गई, और यह भी न देख सकी कि वह कौन थे और कहाँ से आये थे।

(२) क—

शब्द	शुद्धरूप	शब्द	शुद्धरूप
सोत	स्रोत	पद्मज	पद्मज
विज्ञपूर	बीजापुर	गब्भ	गर्भ
धरेस	धरेश	पानि	पाणि
सरिस	सदृश	बालकेलि	बाल्यकेलि
मग	मार्ग	तून	तूणीर

(ख) यह दोनों ही महाकवि थे। दोनों की गणना श्रेष्ठ भक्तों में है। किन्तु सूरदास की भक्ति सख्यभाव की थी और तुलसीदासजी दास कवि हैं। सूर ने अपने नायक तथा नायिका के वर्णनों में अधिक ख़ुशामद से काम न लेकर स्पष्टवादिता से काम लिया है। इसके विरुद्ध तुलसीदासजी ने

सीता राम के वर्णनों में सदैव जनक-जननी के भावों को प्रकट किया है और जैसे भाव एक दास के अपने स्वामी के प्रति होने चाहिये, ठीक वैसे ही भाव उन महात्मा के राम और सीता के विषय में हैं। पद-लालित्य, अर्थ-गाम्भीर्य, अलङ्कार-प्रयोग आदि काव्यांगों का समादर दोनों ही ने एक सा किया है। उत्प्रेक्षादिपूर्ण भाषा के व्यवहार के कारण दोनों ही कवियों पर आधुनिक समालोचकों ने आक्षेप किया है। सूरदास की भाषा शुद्ध ब्रज-भाषा है। तुलसीदासजी की प्रधान भाषा अवधी है किन्तु वह ब्रजभाषा भी लिख सकते थे। दोनों ही का बाल-चरित्र विषद है। किन्तु सूरदास इस विषय में तुलसीदास से आगे हैं। सूर ने केवल शृंगार, भक्ति और वात्सल्य को प्रधानता दी है, किन्तु तुलसी ने प्रत्येक विषय पर अच्छा प्रकाश डाला है। तुलसी का वीररस सूर से बढ़ा चढ़ा है। सूरदास का सन्देश तुलसीदास के सन्देश से प्रजा के लिये अधिक हितकर है। तुलसी ने जिस आदर्श गृहस्थी का चित्र खींचा है, वैसा सूरदासजी नहीं खींच सके और न उन्होंने इसका उद्योग ही किया। कुछ विद्वानों नें तुलसी पर बार-बार राम को ईश्वर कहने के कारण आक्षेप किया है। सूर ने ऐसा नहीं किया, बल्कि गोपियों के मुख से उनकी काफ़ी निन्दा कराई है। सच तो यह है कि यह बताना कठिन है कि दोनों कवियों में किसकी कविता उत्तम है। हमारी समझ में तो दोनों ही एक तुला के दो पलड़े

थे और दोनों ही मातृभाषा के सच्चे प्रेमी और कविता गगनाङ्गन के दो उज्वल नक्षत्र थे।

(३) अ—किसी छन्द को पहचानने के उपाय।

१. प्रथम उसको बार-बार पढ़कर लय ठीक करेंगे, तदुपरान्त यह पहचानेंगे कि वह छन्द मात्रिक है या वर्णवृत्त। इसकी साधारण पहचान यह है कि यदि छन्द के चारों चरणों में गुरु-लघु का क्रम एक सा मिल जाय तो वह वर्णवृत्त है, अन्यथा मात्रिक है।

२. यदि वह छन्द मात्रिक होगा तो प्रत्येक चरण की मात्राओं की गणना और यति पर विचार करेंगे और यह देखेंगे कि उसके पदान्त में लघु-गुरु का क्या नियम है। फिर का लक्षण बनाकर उनका नाम खोजेंगे।

३. यदि वह छन्द वार्णिक होगा, तो उसके वर्णों की संख्या, यतिक्रम और गणभेदानुसार लक्षण बनाकर उनका नाम खोजेंगे। यदि गणों के अनुसार रूप बनने से कोई गुरु और लघु शेष रहेंगे तो उन्हें भी लक्षण के साथ संयुक्त कर देंगे।

ब. रोला, सोरठा और मनहरणछन्द के लक्षण पहले लिख चुके हैं।

मालती सवैया का लक्षण

सात भगण और अन्त में दो गुरू का "मत्तगयन्द' या मालती सवैया होता है।

(४) अ— इस छन्द के अन्तिम पदों में वाच्याउक्तविषया-वस्तूत्प्रेक्षा अलङ्कार है। इसके लक्षण पहले लिख चुके हैं।

(५) कवि भूषण की जीवनी भी पहले अङ्कित हो चुकी है और उनकी तथा सूरदासजी की कविता पर कुछ विचार भी प्रकट कर चुके हैं।

साहित्य २

समय ३ घण्टे

सूचना—शुद्ध, स्वच्छ और स्पष्ट उत्तर लिखनेवाले परीक्षार्थियों के लिये दश प्रतिशत अङ्क सुरक्षित हैं।

(१) निम्नलिखित अवतरणों का अर्थ सरल तथा सुबोध भाषा में अंकित कीजिये।

(अ) यावत् मिथ्या और दरोग की क़िबलेगाह इस कल्पना पिशाचिनी का कहीं ओर-छोर किसी ने पाया है! अनुमान करते-करते हैरान गौतम से मुनि "गौतम" होगये। कणाद किनका खा-खाकर तिनका बीनने लगे, पर मन की मनभावनी कन्या कल्पना का पार न पाया। ३

(अ) सच है रे पाप पाषंड, मिथ्या दानवीर! तू क्यों न मुझे "राज-प्रतिग्रह-पराङ्मुख" कहेगा; क्योंकि तैंने तो कल सारी पृथ्वी मुझे दान न दी है! ठहर, ठहर! देख, इस झूठ का कैसा फल भोगता है! हा! इसे देखकर क्रोध से मेरी दाहिनी भुज शाप देने को उठती है। वैसे ही जाति-स्मरण के संस्कार से बाईं भुजा फिर से कृपाण ग्रहण किया चाहती है। ३

(ओ) निम्नांकित पात्रों का चरित्राङ्कण कीजियेः—
हरिश्चन्द्र, नारद तथा शैब्या।

(४) औ निम्नलिखित लोकोक्तियों का अर्थ लिखकर उनका प्रयोग अपने बनाये वाक्यों में कीजियेः— ६

१. बन्दर क्या जाने अदरक का सवाद।
२. नाच न जाने आँगन टेढ़ा।
३. किसी को बैंगन बावले किसी को बैंगन पथ्य।
४. नौ दो ग्यारह होना

(अं) एक ऐसा वाक्य लिखिये जिसमें निम्नलिखित चिह्नों का प्रयोग हो :— ३

" " ; ! ?

(अः) इन चिह्नों के नाम तथा प्रयोग के अवसरों को भी अंकित कीजिये। ३

(५) क द्वितीय प्रश्न के जिन शब्दों के ऊपर (*) यह चिह्न लगा है उनके कारक लिखकर उनमें से किन्हीं दो की परिभाषाएँ उल्लिखित कीजिये। उसी प्रश्न के रेखाङ्कित शब्दों के समास विग्रह-सहित लिखकर समास का अर्थ समझाइये। ६

(ख) सन्धि का क्या अर्थ है? उसके भेद परिभाषा-सहित लिखकर निम्नांकित शब्दों में जो सन्धियाँ हों उनके नाम सकारण अंकित कीजियेः— ७

उद्धत, जगन्नाथ, पुनरपि, नीरस, श्रेयस्कर, स्वागत, नायक तथा महर्षि।

(६) ग "अङ्क, गर्भाङ्क, नेपथ्य तथा यवनिका—इन शब्दों का प्रयोग बहुधा नाटक-ग्रंथों में देखा जाता है, इसका क्या कारण है? यदि इनका व्यवहार

न किया जाय तो किस प्रकार की हानि होने की आशङ्का है ? ५

(घ) 'साहित्यसुमनकार' ने चरित्र तथा शील में जो भेद दिखलाया है उसे बहुत ही सूक्ष्म किन्तु पूर्ण अर्थ प्रकाशक शब्दों में उल्लिखित कीजिये। ५

(७) निम्नलिखित पदों के अलंकार समझाकर लिखिये। ८

(ङ) हैं श्रम-बुन्द नहीं, तरु योवन,
सिंचन कौं बरसात भई है।

(च) मयंक है श्याम बिना कलंक का।

(छ) मुख, सरवन, दृग, नासिका, सब ही के इक ठौर।
कहिबो, सुनिबो, देखिबो, चतुरन कहँ कछु और॥

(ज) कूलन में केलिन कछारन में कुंजन में,
क्यारिन में कलित कलीन किलकंत हैं।

(८) झ अलंकार किसे कहते हैं? कविता में उनके प्रयोग का क्या प्रयोजन है? यदि कविता में अलंकारों की भरमार हो अथवा नितान्त ही अभाव हो तो उस (कविता) पर इस कार्य्य का क्या प्रभाव पड़ेगा? ६

(ञ) स्वामी दयानन्द सरस्वती, राजा लक्ष्मणसिंह तथा भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रमें से किसी एक महाशय की जीवनी पर प्रकाश डालिये; अथवा बाबू राधाकृष्णदास के 'हिन्दी क्या है' निबन्ध का सार संक्षेप में लिखिये। ८

उत्तर

साहित्य २

(१) अ सम्पूर्ण झुठाई और बनावटों में शिरोमणि इस राक्षसी कल्पना-शक्ति की थाह लेने में आज तक कोई भी कृतकार्य होते नहीं देखा गया। इसी के चक्कर में पड़कर गौतम जैसे महामुनि भी अपनी बुद्धि खो चुके, विचारे कणाद भी भूख-प्यास सहन करके इसकी तलाश में लगे, और इसी में अपना सर्वस्व खोकर बर्बाद हो गये; किन्तु इस कल्पना रूपी कन्या का सच्चा हाल जानने में सर्वथा असमर्थ रहे।

(आ) ऐं, क्या कहा ? "धन से विमुख रहनेवाला" ! सच है, मैंने आज तेरे पाप और पाखंड को भली भाँति समझ लिया। कल तो तूने सारी पृथ्वी दान में दे दी थी और आज मुझे "राजप्रतिपराङ्मुख" कहकर सम्बोधित करता है। ऐसी बनावट ! ऐसा झूठ !! ज़रा ठहर तो सही, अभी इस झूठ का मज़ा चखाये देता हूँ।

हा ! इस दुष्ट को देखकर (ब्राह्मण-वर्ण के संस्कार के कारण) मेरी इच्छा होती है कि इसे अभी शाप दे दूँ। साथ ही जब जाति का स्मरण करता हूँ (कि मैं क्षत्री हूँ) तो चाहता हूँ कि बल-पूर्वक अस्त्रादि ग्रहणकर इसको निधन कर डालूँ।

(इ) इन लुप्त-लोचन (अन्धे) महाराज की क्या पूछते हो। आप उद्दंडता में बहुत ही बढ़े-चढ़े हैं और ज्योतिषशास्त्र के तो मानों भंडार ही हैं। यह प्रायः ज्योतिष के हर कोने को परख चुके हैं। यही क्यों, यह तो आकाश तक पहुँचकर कुछ नवीन नक्षत्र, भी जिनका पता किसी को भी अबतक न चला था, ढूँढ़ लाये हैं। इन्होंने कई नये ग्रन्थ रच डाले हैं। उनमें से एक "तामिश्र मकरालय" (अन्धकार रूपी मकर का रहने का स्थल, अर्थात् जिसमें मुख्य विषय-सम्बन्धी अन्धकार ही अन्धकार है, उसकी स्पष्टता नामको भी नहीं) बहुत प्रसिद्ध और आदरणीय है।

(ई) कवि चन्द्रमा को देखकर विविध प्रकार के विचार बाँधता हुआ कहता है—

"यह कामदेवरूपी वेद-विभूषित, किसी याज्ञिक ब्राह्मण के नित्य-प्रति पाठ करने का प्रधान मंत्र ओंकार है, या अन्धकाररूपी बड़े हाथी के हटाने के लिये अंकुश है, अथवा वियोगिनी बालाओं के प्राण कतरने-वाली क़ैंची है, या शृङ्गार से भरपूर पिटारे को खोलने वाली यह ताली है, या फिर तारेरूपी मोतियों के बीच में गुथा हुआ यह सुमेर (बड़ा मनका) है, अथवा जीवधारियों को डस जानेवाले कामदेव रूपी सर्प के फण पर का यह चमकता हुआ मणि है, या रात्रि रूपी नायिका के सुन्दर मुख की मृदुल मुस्क-राहट है।

(२) उ हे भ्रमर ! वसन्त ऋतु के वह दिन, जिनमें तूने उत्तमोत्तम पुष्प देखे थे, अब बीत गये। अब तो,

केवल गुलाब का पत्र-रहित कोरा ठूंठ ही खड़ा रह गया है।

(ऊ) भला यह सुकुमार शरीर, आभरणों का भार कैसे सँभाल सकेगा। जिसकी कोमलता का यह हाल है कि वह सौन्दर्य ही के बोझ तक को नहीं सह सकता अर्थात् उसके बोझ से ही उसकी नायिका के पैर पृथ्वी पर सीधे नहीं पड़ते तो गहने का बोझ कौन सहेगा ?

(ए) चाहे चन्द्र सूर्य अपने नियमों के उल्लंघन से मुक्त हो जायँ; चाहे संसार अपने कर्तव्य से विचलित हो जाय, परन्तु दृढ़प्रतिज्ञ श्रीहरिश्चन्द्र अपने सत्य प्रण से कभी एक तिल भी न टलेगा।

(३) ऐ दरोग़—फ़ारसी भाषा का शब्द है। इसका अर्थ झूठ अथवा मिथ्या है।

क़िबलेगाह—अर्बी भाषा का शब्द है। तीर्थ-स्थान, पूजनीय अथवा बुज़ुर्ग।

तिनका बीनने लगे—महावरा है। किसी काम के न रहे, चिन्ता करने लगे।

पाप पाखंड—जिसने पाप का पाखंड रचा हो।

राजप्रतिग्रहपराङमुख—जो राज-दान से विमुख हो।

ज्योतिषाभरण—ज्योतिष ही जिसका आभरण हो, ऐसा उत्कट ज्योतिषी।

उद्दंड पण्डित—अक्खड़ पंडित, निडर पंडित।

तामिश्र मकरालय—अन्धकार रूपी मकर का ग्रह—अन्धकार का भंडार। यहाँ व्यङ्ग-व्यवहार है।

अर्थात् ऐसा ग्रंथ, जिसमें अन्धकार ही अन्धकार हो, कोई बात स्पष्ट न हो।

श्रोत्रिय—वेद-विहित कार्यकरनेवाला ब्राह्मण।

सुमेर—माला के दानों के बीच का बड़ा मनका।

(आ) शैव्या का चरित्राङ्कण पहले कर चुके हैं। हरिश्चन्द्र का चरित्रः—

वीर, उत्साही, सत्यप्रतिज्ञ, उच्चाशय, महाशय, धर्म-प्रतिपालक, आपत्ति में धैर्य धारण करनेवाला, उदार, गम्भीर और स्वप्न में कही हुई बात का भी न टालनेवाला राजा था। धर्म-कार्य में पड़नेवाली बाधाओं का कभी चिन्ता न करता था। उसने सदैव अपनी कर्तव्य-परायणता का ध्यान रक्खा। वास्तव में भारतेन्दुजी ने इसका चरित्राङ्कण ऐसे कौशल के साथ किया है कि उसे निस्सङ्कोच भाव से एक उत्तम नायक कह सकते हैं।

नारद—यह संसार में भ्रमण करनेवाले, देवर्षि, ईश्वर के परम भक्त, सज्जनों के सच्चे-हितैषी, दुर्जनों से विमुख रहनेवाले और सत्य धर्म के उपदेशक थे। बनावट को तुरन्त ताड़ जाते थे। इन्हें लल्लो-चप्पो से घृणा थी। खरी बात कहना पसन्द करते थे और धार्मिक तत्वों की बड़ी मनोहर और विषद व्याख्या करते थे। इनके सामने इन्द्र जैसे पाखण्डी क्षण भर भी न ठहर सकते थे। प्रत्युत घें-घें करते रहजाते थे।

(४) औ १. मूर्ख गुणों का आदर नहीं करते। कहाँ मैं

और कहाँ साहित्य का यह गहन विषय। "बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद" !

२. अपनी अज्ञानता का दोष दूसरों पर मढ़ना—तुम भी मुफ़्त में बातें बनाते हो—यह नहीं है, वह नहीं है—"नाच न जाने आँगन टेढ़ा"। देखो, मैं लिखता हूँ कि नहीं।

३. एक वस्तु जो एक को हितकर है वही दूसरे के लिये अहितकर हो सकती है। यथा—"बहुधा आँसू का गिरना भलाई और तारीफ़ में दाख़िल है किन्तु हमारे लिये यह बड़ी बला है। सच है—"किसी को बैंगन बावले किसी को बैंगन पथ्य"।

४. नौ-दो ग्यारह होना—भाग जाना। राजसिंह को देखते ही डाकू नौ दो ग्यारह हुए।

(अं) सच है रे क्षत्रियाधम ! तू काहे को पहचानेगा ! सच है रे सूर्य-कुलकलङ्क ! तू क्यों पहचानेगा ! धिक्कार है तेरे मिथ्या धर्माभिमान को, ऐसे ही लोग पृथ्वी को अपने बोझ से दबाते हैं। अरे दुष्ट ! तैं भूल गया ; कल पृथ्वी किसको दान दी थी ? जानता नहीं कि मैं कौन हूँ ? "जाति स्वयं-ग्रहण......माम्" ।

(अः) " " इसका नाम उद्धरण या इनवर्टेड कामाज़ है। दूसरे की उक्ति उद्धृत करने में, डबल इनवर्टेड कामा लगाये जाते हैं। मनुष्य, वस्तु वा शब्द को महत्व देने के लिये भी इनका प्रयोग किया जाता है।

; वाक्य में जहाँ कम ठहरते हैं, वहाँ अल्प-विराम (,) लगाते हैं और जहाँ इससे अधिक ठहरते हैं वहाँ यह अर्द्ध विराम या सेमीकोलन नाम का चिन्ह लगाते हैं।

! यह आश्चर्य-चिन्ह है। आश्चर्य, हर्ष और विषाद् आदि भाव प्रकट करनेवाले शब्दों अथवा वाक्यों के अन्त में आता है।

? यह प्रश्न-चिन्ह है। जो उस वाक्य के अन्त में लगाया जाता है, जिसके द्वारा किसी से प्रश्न किया जाता है।

(५) क वे—कर्मकारक। अलि—सम्बोधन कारक। ये—कर्त्ताकारक। महि अधिकरणकारक। हरिश्चन्द्र सम्बन्ध कारक।

सम्बोधनकारक—जिन संज्ञाओं के रूपों में किसी को पुकारने का भाव हो, उसे सम्बोधनकारक कहते हैं।

अधिकरणकारक—संज्ञा की उस अवस्था को जो क्रिया का आधार हो, अधिकरण कारक कहते हैं।

समास का अर्थ पहले समझा चुके हैं।

अपत कटीली डार—अपत और कटीली डार द्वन्द होकर विशेषण तथा डार विशेष्य के संयोग से कर्मधारय समास।

भूषणभार—भूषण का भार, षष्ठी तत्पुरुष समास।

सूधे पाँय—सूधे हैं जो पाँय—कर्मधारय समास।

जगत व्यौहार—जगत का व्यौहार—षष्ठी तत्पुरुष समास।

सत्य विचार—सत्य ही विचार—कर्मधारय समास।

(ख) सन्धि का अर्थ पहले समझा चुके हैं। उसके तीन भेद हैं:—

१. स्वरसन्धि—जब स्वर के साथ स्वर के मिलने से विकार हो, तब स्वर-सन्धि होती है।
२. व्यञ्जन-सन्धि—जब व्यंजन के साथ स्वर या व्यंजन मिलने से विकार हो, तब व्यंजन-सन्धि होती हैं।
३. विसर्ग-सन्धि—जब विसर्ग के साथ स्वर अथवा व्यंजन मिलने से विकार हो, तब विसर्ग-सन्धि होती है। उद्धत (उत्+धत) व्यंजन-सन्धि। जगन्नाथ (जगत्+नाथ) व्यंजन-सन्धि। पुनरपि (पुनः+अपि) विसर्ग-सन्धि। नीरस (निः+रस) विसर्ग-सन्धि। श्रेयस्कर (श्रेयः+कर) विसर्ग-सन्धि। स्वागत (सु+आगत) स्वर सन्धि। नायक (नै×अक) स्वर-सन्धि। महर्षि (महा+ऋषि) स्वर-सन्धि।

(६) ग अङ्कों में विभाजित करके नाटककार मुख्य दर्शनीय विषय का विभाजन करके उसे क्रमवद्ध कर लेते हैं जिससे समयानुसार कार्य की पूर्ति सरलता से हो जाती है। पात्रों को अपने-अपने पार्टों का ध्यान रहता है। यदि ऐसा न हो तो नाटक का क्रम भंग होकर नाटक ही फीका हो जाय। इसी प्रकार यदि गर्भाङ्क न हो तो व्यर्थ के कार्यों का विस्तार होकर

मुख्य दृश्य के दिखाने के लिए समय ही न रहे। नैपथ्य का प्रबन्ध न होने से पात्रों के सजाने आदि कार्यों के करने में विघ्न पड़ेगा। इन सब के अतिरिक्त यवनिका का होना तो अत्यावश्यक है; क्योंकि रङ्गशाला में चित्रपट-परिवर्तन का प्रयोजन घड़ी-घड़ी पर होता है जो बिना चित्रपटी के होना असम्भव है।

(घ) "चरित्र और शील" यह दोनों ही बातें बहुत मिलती जुलती हैं। किन्तु शील का अन्तर्भाव चरित्र ही में हो सकता है। चरित्र का शील में नहीं। क्योंकि चरित्र-पालन में चतुर शील-संरक्षण में भी प्रवीण हो सकेगा, किन्तु शील-संरक्षण में विचक्षण व्यक्ति चरित्र-संगठन में प्रवीण नहीं हो सकता। इसका मुख्य कारण यह है कि शील का सम्बन्ध तो बाहरी चालचलन के सुधार से है; किन्तु जब तक मनुष्य का अभ्यन्तर शुद्ध न होगा तब तक केवल बाहरी सभ्यता ही को हम चरित्र नहीं कह सकते और न ऐसी सभ्यतावाले व्यक्ति चरित्रवान ही कहे जा सकते हैं।

(७) ङ इसमें शुद्धापह्नुति अलङ्कार है। क्योंकि सत्य बात श्रम-बुन्द निषेध करके बरसात का होना अन्य बात वर्णन की गई है।

(च) इसमें अभेद रूपकालंकार है। क्योंकि उपमेय श्याम; और उपमान मयङ्क में अभेद होते हुए भी उपमेय श्याम में कलङ्क न होने की विशेषता कथन की गई है।

(छ) इसमें भेदकातिशयोक्ति अलंकार है। क्योंकि यहाँ यथार्थ भेद न होने पर भी भेद कथन हुआ है।

(ज) इसमें अनुप्रास अलंकार है। क्यौंकि बार-बार 'क' वर्ण की आवृत्ति हुई है।

(८) झ जहाँ व्यंग्य के बिना चमत्कार हो, उसे अलंकार कहते हैं। कविता की शोभा बढ़ानेवाले रस भाव आदि हैं, और अलंकार उनके उत्कर्ष को बढ़ाकर उपकार करनेवाले हैं। यही कारण है कि कविता में उनका उपयोग कवि लोग करते हैं। जिस प्रकार अलंकार शरीर को शोभा बढ़ाते हैं, उसी प्रकार यह काव्यभूषण काव्य के शरीर रूपी शब्द और अर्थ की शोभा बढ़ाते हैं। और जिस प्रकार गहनों की अधिकता मनुष्य के शरीर की शोभा बढ़ाने के बदले, उसमें कमी करती है, ठीक यही दशा काव्य में अलंकार-प्रयोग की भी है।

ञ राजा लक्ष्मणसिंह, वज़ीरपुरा (आगरा) के निवासी थे। इनका जन्म सं० १८८३ में हुआ। सं० १९१३ में डिप्टीकलक्टर हुए और सं० १९४६ में पेन्शन ली। १९२१ में उन्हें राजा की पदवी मिली और सं० १९५३ में स्वर्गधाम को सिधारे। इनका कविताकाल १९१६ वि० से सं० १९५३ तक समझना चाहिये। इनका शकुन्तला नाटक सं० १९१९ में प्रकाशित हुआ। पीछे पद्य-रचना भी करने लगे। परन्तु इन्होंने मुख्यतया अनुवाद ही अनुवाद किये हैं, इनकी रचना मधुर और खड़ी बोली शुद्ध होती थी। यह फ़ारसी अर्बी के शब्दों

की ठूँस-ठाँस पसन्द नहीं करते थे। इन्होंने मेघदूत का पद्यानुवाद भी किया है।

साहित्य ३

समय ३ घंटा

नीचे लिखे हुए विषयों में से किसी एक पर कम से कम ८० और अधिक से अधिक १०० पंक्तियों का एक निबन्ध लिखिये। निबन्ध लिखने के पहले जिस विषय पर आप निबन्ध लिखना चाहते हों उसका यह ढाँचा तैयार कीजिये और उसी ढाँचे को आधार बनाकर निबन्ध लिखिये।

(१) अपने नगर या ग्राम का वर्णन करो और बताओ कि स्वास्थ्य-सम्बन्धी नियम पालन करने के लिये क्या सुधार होना चाहिये।

(२) ग्रामीण पशुशाला का वर्णन और उसका सुधार।

(३) किसी प्रकार का व्यायाम का विस्तृत वर्णन।

(४) अपने गाँव की पंचायत का वर्णन। यह भी बतलाइये कि उसमें क्या सुधार होना आवश्यक है।

(५) यदि तुमने कोई मिल, मशीन तथा बिजलीघर देखा है तो उसका वर्णन।

प्रश्न-पत्र सं० १९८५

साहित्य १

समय तीन घंटे

(१) निम्नलिखित अवतरणों का अर्थ सरल भाषा में लिखिये—

(क) कैसेहुँ जो अपबस करि पाऊँ।
जीवन-धन, तौ तुम्हें खोलि हिय, जियको मरम सुनाऊँ॥
या उर अन्तर प्रेम-कुटी रचि, पल पाँवड़े बिछाऊँ।
भाव सेज-सजि अति मृदु तापै, नाथ तुम्हें पौढ़ाऊँ॥
तहँ पलोटि पद-पदुम तुम्हारे, ललकि ललकि बलि जाऊँ।
लाय लाय सीतल रज नैननि, जियकी जरनि सिराऊँ॥

[अथवा]

अथवा गगन सरोवर नील सलिल पूरित पर फूला है।
सित सहस्रदल अमल कमल बनकर मन मधुकर भूला है॥
जिसकी केसर सरस कौमुदी जग कमनीय बनाती है।
शुभ सुगन्ध सम्मिलित सुधा मकरन्द बिन्दु बरसाती है।

(ख) दुरग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी,
उग्ग पर उग्ग नाचे रुंड मुंड करके।
भूषन भनत बाजे जीत के नागरे भारे,
सारे करनाटी भूप सिंहल को सरके।
मारे सुनि सुभट पनारे वारे उद्भट,
तारे लगे फिरन सितारे गढ़धर के।
बीजापुर बीरन के गोलकुण्डा धीरन के,
दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दरके॥

[अथवा]

साजि चूम जनि जाहु सिवा,
पर सोवत सिंह न जाय जगाओ ॥
तासों न जंग जुरो न भुजंग,
महाविष के मुख में कर नाओ ॥
भूषन भाषति बैरि बधू जनि,
एदिल औरंग लौं दुख पावो ।
तासु सुलाह की राह तजौ मति,
नाह दिवाल की राह न धाओ ॥

(ग) लालाहौं वारी तेरे मुख पर ।
कुटिल अलक मोहन मन विहँसत,
भृकुटि बिकट पंकज नैननि पर ।
द्वै द्वै दमकि दतुलिया बिहँसत,
मनु सीपिज किय घर वारिज पर ॥
लघु लघु सिर लट घूँघरवारी,
रही लटकि लोनी लिलार पर ॥

[अथवा]

दूध दंत दुति काह न जाति अति
अद्भुत इक उपमाई ।
किलकत हँसत दुरत प्रगटत मनु
घन में विद्यु छुपाई ॥
खंडित बचन देत पूरन सुख,
अलप जलप जल पाई ।
घुटरन चलत रेनु तनु मंडित,
सूरदास बलि जाई ॥

(घ) कविता कामिनि भाल में, हिन्दी बिन्दी रूप।
प्रगट शग्र बन में भई, व्रज के निकट अनूप॥
लाल करी जिहि अंकुरित, शिवप्रसाद द्वै पात।
कुसुमित भारतइन्दु ने रचना रचि विख्यात॥

(२) निम्नलिखित पद्यांशों का भावार्थ लिखिये—

१. अलि नवरंगजेब चम्पा शिवराज है।
२. सौ सौ चूहे खाय के बिलारी बैठी ताके।
३. सूरदास खल कारी कामरी चढ़त न दूजो रंग।
४. सूरसुअंजन आँजि रूप रस आरति हरौ हमारी।

(३) मनहरण, मालती सवैया, छप्पय, हरिगीतिका और शिखरणी छन्दों के लक्षण लिखिये तथा प्रत्येक का उदाहरण एक-एक चरण में दीजिये। १०

(४) १. अनुप्रास किसे कहते हैं? भेदों के सहित वर्णन कीजिये। १

२. श्लेष और यमक में क्या अन्तर है? उदाहरण सहित समझाइये।

[अथवा]

३. प्रश्न १ के किन्हीं तीन अवतरणों में आये हुये अलंकारों के नाम परिभाषा-सहित लिखिये।

४. उत्प्रेक्षा और रूपक में क्या भेद है? उदाहरण-द्वारा समझाइये।

(५) प्रत्येक प्रश्न का उत्तर सतर्क किन्तु संक्षेप में दीजिये। १०

१. अलंकार-रहित काव्य में सुन्दरता क्यों नहीं आती?
२. गद्य की अपेक्षा पद्य क्यों अधिक प्रिय लगता है?

३. शिवाबावनी में बेगमों की दुर्दशा वर्णन करने का कवि का क्या तात्पर्य है ?

४. सूरपदावली का कौन सा प्रकरण आपको विशेष रोचक जान पड़ता है और क्यों ?

(६) उद्भट, पदुम, दुग्ग, उग्ग लिलार, आरित—इन शब्दों के शुद्ध रूप लिखिये तथा 'कमल' और 'हाथी' के पर्य्यायवाची शब्द लिखिये। १०

(७) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, पं० श्रीधर पाठक, प्रेमधन जी, पं० नाथूराम शंकर शर्मा, गोस्वामी पं० किशोरी लालजी—इन कवियों में से किन्हीं दो कवियों का परिचय दीजिये (दोनों ३० पंक्ति से अधिक न हों)।

उत्तर

साहित्य १

(१) क. हे प्राणनाथ, यदि कहीं आप मुझे मिल जायँ तो फिर मैं हृदय खोलकर अपने मन की सम्पूर्ण बातें तुम्हें एक ओर से सुना जाऊँ—तनिक भी सङ्कोच न करूँ। (आपके स्वागत के लिये) हृदय को प्रेम-कुटीर बनाकर अपने पलकों के पाँवड़े बिछादूं; भावों की अत्यन्त कोमल सेज सजाकर उसपर आपको सुलाऊँ, आपके चरण-कमलों को दाबकर प्रसन्नतापूर्वक बलि जाऊँ और आपके

चरणों की शीतल रज को नेत्रों में लगाकर अपने हृदय के ताप को दूर करूँ।

(ख) धर्मधुरीण महाराज शिवाजी ने बहुत से किले अपने अधीन कर लिये। शिवाजी के युद्ध को देखकर शिवजी महाराज आकाश में नृत्य करने लगे और बहुत से रुण्ड-मुण्ड फड़कने लगे। जब विजय के बड़े-बड़े नगाड़े बजाये गये तो सारे करनाटक के राजा भयभीत होकर सिंहल द्वीप की ओर निकल भागे। परनालेवाले बड़े पराक्रमी योद्धाओं का मारा जाना सुनकर सितारेगढ़ के स्वामी शिवाजी महाराज को प्रसन्नता हुई और फिर उनको अपना सितारा फिरता हुआ दिखाई दिया। बीजापुर, गोलकुण्डा तथा दिल्ली के शूरवीर सरदारों के हृदय अनार की भाँति फटने लगे; क्योंकि उन्होंने समझा कि जब ऐसे अद्वितीय पराक्रमी वीरों को शिवाजी ने परास्त कर किया तो अब हमारी क्या हस्ती है। ख़ैर नहीं, ख़ुदा ही मददगार है!

(ग) हे कन्हैया, मैं तेरे मुख पर बलिहारी हूँ। तेरी टेढ़ी अलकें मनको मोह लेती हैं और तेरे कमलरूपी नेत्रों पर बिकट भौंहें अपूर्व शोभा दे रही हैं। दो-दो दमकती हुई दतुलियाँ हँसने में ऐसी जान पड़ती हैं मानों मोती ने कमल पर घर बना लिया है। उस पर भी सिर पर की छोटी-छोटी घूँघरवाली सुन्दर लटें जो तेरे मस्तक पर लटक रही हैं, वह

तो ऐसी मनभावनी है कि उन पर मैं न्यौछावर हो जाती हूँ।

(घ) कवितारूपी-कामिनी के मस्तक पर हिन्दी-बिन्दी के समान (सौभाग्य-चिन्ह के सदृश) सुशोभित है। कौन सी हिन्दी ? वही जो अनुपम ब्रज-भूमि के निकट उत्पन्न हुई; जिसको लाल ने उगाया, राजा शिवप्रसाद ने छैपात किया ; अर्थात् उसे थोड़ा बढ़ाया और भारतेन्दुजी ने अपनी सुप्रसिद्ध सुन्दर रचनाओं से द्वारा जिसको पुष्पान्वित किया।

(२) १. औरंगज़ेब, शिवाजी महाराज के पास तक नहीं फटक सकता।

२. अनेक पाप-कर्मों के पश्चात् अब धार्मिक बनने की चेष्टा कर रहा है।

३. दुष्टमनुष्यों के स्वभाव में परिवर्तन नहीं हो सकता।

४. हे प्रभो ! आप दरस देकर हमारे वियोग के दुःख को दूर करो।

(३) इन सम्पूर्ण छन्दों के लक्षण तथा उदाहरण पहले अङ्कित हो चुके हैं।

प्रश्न १ के (ख) अवतरण में पूर्णोपमा अलङ्कार है। उर उपमेय; दाड़िम उपमान; से वाचक और दरके साधारण धर्म है। इसी अवतरण के दूसरे छन्द में लोकोक्ति अलङ्कार है क्योंकि "सोवत सिंह न जाय जगाओ" आदि प्रसिद्ध लोकोक्तियों का व्यवहार हुआ है। (ग) अवतरण में उत्प्रेक्षा अलंकार है क्योंकि दँतुलियाँ

उपमेय में सीपिज उपनाम की सम्भावना की गई है।

४) उत्प्रेक्षा अलङ्कार में भेद का ज्ञान रहते हुए उपमेय में उपमान का आहार्य आरोप किया जाता है। आहार्य आरोप होता तो रूपक में भी हैं किन्तु वहाँ वह उपमेय और उपमान के अभाव में होता है जैसे; "मुख-चन्द्र" में मुख और चन्द्र का अभेद माना जाता है; परन्तु उत्प्रेक्षा में भेद का ज्ञान रहते हुए आहार्य आरोप होता है। जैसे मुख मानो चन्द्र है, इस प्रकार कहने में मुख और चन्द्रमा में भेद माना गया है।

(५) १. इस प्रश्न का उत्तर हम पहले लिख चुके हैं।

२. " " "

३. शिवाबावनी में भूषण महाराज ने बेगमों की दुर्दशा का जो चित्र खींचा है, उससे बादशाह की अत्यन्त हीनता प्रकट होती है। क्योंकि युद्धक्षेत्र के नियमानुसार स्त्री तथा बालकों पर अस्त्र नहीं उठाया जाता, और विजित पक्ष भी भरसक उसकी रक्षा करता है; किन्तु जब उसकी पराजय निश्चित होकर बिलकुल आत्मसमर्पण का समय आ जाता है, तब मनुष्य-स्वभावानुसार अपनी-अपनी जान बचाने की चिन्ता होती है। जहाँ जिसका जी आता है, भाग जाता है। इस कार्य में स्त्रियों की बारी सबसे पीछे आती है। अतएव कवि ने इसी अन्तिम समय का वर्णनकर मुग़लों का घोर पराजय और शिवाजी के पूर्ण उत्कर्ष तथा उनकी अपूर्व धाक का परिचय कराया है।

४. सूरपद्मावली में सब से रोचक प्रकरण, 'बाललीला' और 'कृष्ण-विरह' हैं। क्योंकि इनमें स्वाभाविकता का बाहुल्य है और वात्सल्यरस का मनोहर परिपाक हुआ है। इनको पढ़कर यही ज्ञात होता है कि साक्षात् कोई स्त्री या पुरुष बैठा हुआ अपने पुत्रों की बाल-क्रीड़ा पर मुग्ध हो रहा है।

(६)

शब्द	शुद्धरूप	शब्द	शुद्धरूप
उदभट	उद्भट	पदुम	पद्म
लिलार	ललाट	आरित	आर्त
दुग्ग	दुर्ग	उग्ग	उग्र

कमल के पर्य्यायवाची शब्द—पद्म, अम्बुज, नीरज, जलज, पङ्कज, वनज, वारिज, सरसिज, सरसीरुह, तथा पङ्क-सुत; आदि।

हाथी के पर्य्यायवाची शब्द—हस्ती, गज, कुंजर, द्विरद, करि, मतङ्क, गयन्द। गय, नाग और द्विप आदि।

(७) भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र तथा पं० श्रीधर पाठक का परिचय पहले दिया जा चुका है।

साहित्य २

समय ३ घण्टे

सूचना—शुद्ध, स्वच्छ और स्पष्ट उत्तर लिखनेवाले परीक्षार्थियों के लिये १० अंक सुरक्षित हैं।

(१) निम्नलिखित अवतरणों का अर्थ सरल एवं सुबोध भाषा में अंकित कीजिये :— ६+६+४

(अ) काशी में आकर लोग संसार के बन्धन से छूटते हैं, पर हमको यहाँ भी हाय हाय मची है। हा पृथ्वी! तू फट क्यों नहीं जाता कि मैं अपना कलंकित मुँह फिर किसी को न दिखाऊँ? (आतंक से) पर यह क्या! सूर्य वंश में उत्पन्न होकर हमारे यह कर्म हैं कि ब्राह्मण का ऋण बिना दिये पृथ्वी में समा जाना सोचें।

(आ) हाय! कहाँ यह रस-मर्दन और कहाँ यह रसिकता की डींग! कहाँ यह व्याकरण का सर्वनाश और कहाँ यह नागरी की उन्नति का उद्देश्य! कहाँ यह साहित्य के गले पर अकविता की छुरी का रगड़ना और कहाँ यह साहित्य-प्राणदान का उद्योग!

(इ) महाराज! तुम्हारे दर्शन की अभिलाषा किये सूर्य चला आता है। तुमको ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्रादि सब देवता ध्यावते हैं और आठ पहर ध्यान धर तुम्हारा यश गावते हैं। तुम हो आदिपुरुष अविनाशी, तुम्हें नित सेवती हैं कमला भई दासी।

(२) ई "गद्य शब्द की व्याख्या करके बतलाइये कि आप उसके सर्वप्रथम (जिन लेखकों की रचनाएँ उपलब्ध हैं उनमें) लेखक किसको मानते हैं और क्यों ? ५

उ प्रथम प्रश्न के रेखांकित शब्दों तथा वाक्यों की व्याख्या कीजिये। ६

ऊ प्रथम प्रश्न का 'इ' खंड जिस भाषा में लिखा गया है, उसका नामोल्लेख कीजिये और बतलाइये कि वर्त्तमान प्रचलित गद्य किस भाषा में लिखा जाता है ? उक्त खंड में जो क्रियाएँ प्रयुक्त हुई हैं, उनके वर्तमानरूप अंकित कीजिये। ५

(३) निम्नलिखित दोहों का अर्थ लिखिये :— ४

ए बेचि देह दारा सुअन,
होय दासहु मन्द।
राखि है निज*वच सत्य करि,
अभिमानी हरिचन्द* ॥

ऐ सठ सिसुमार कुठार कुल,
दीनों देश उजारि।
वीर विहीन मही*करी;
सुभट*समूहन मारि ॥

(४) ओ "अङ्क" और "गर्भाङ्क" में क्या अन्तर है, "सत्य हरिश्चन्द्र" नामक नाटक में कै अंक हैं, क्या उसमें कोई गर्भाङ्क भी है और यदि है तो कहाँ है ? ५

औ। इन्द्र, हरिश्चन्द्र और शैव्या का चरित्रांकण कीजिये। ६

(५) अं तीसरे प्रश्न के जिन शब्दों के नीचे रेखाएँ खिचीं हैं उनके समास विग्रह-सहित लिखकर (*) इस चिन्ह से चिन्हित शब्दों के 'कारक' समझाकर लिखिये। ६

अः कर्तृ-प्रधान और कर्म-प्रधान क्रियाओं में क्या अन्तर होता है, उदाहरण देकर समझाइये। सन्धि के प्रधान भेदों के नाम लिखकर नीचे लिखे शब्दों में जो सन्धियाँ हों उनके नाम कारणसहित लिखिये। हरिश्चन्द्र, उद्भूत, परमानन्द, स्वागत, महर्षि और नायक। ७

(६) क. नीचे लिखी लोकोक्तियों का अर्थ लिखकर, उनका प्रयोग अपने बनाये वाक्यों में कीजियेः— ५

१. आ बैल मुझे मार।
२. ऊँची दुकान फीका पकवान।
३. कोइले की दलाली में काले हाथ।

ख एक ऐसा वाक्य लिखिये जिसमें ? ! " "— और ( ) इन चिन्हों का प्रयोग हो। २

(७) ग नीचे लिखे पदों के अलंकार समझाकर लिखिये। १०

१. यह चौदहु-रत्न समेटि मनो निकसी है नवीन रमा सरसों।

२. नव उज्वल जलधार हार हीरक सी सोहात

३. आयो नहीं घनश्याम सखी !
घनश्याम हमैं तरसावन आयो।

नहि अंजन यह नैन में,
चन्द्र-मुखी दरसाय।

प्रेमिन की पुतरीन की.
रही स्यामता छाय॥

ङ. एक ऐसा वाक्य लिखिये जिसमें अलंकार की उत्तम छटा के साथ ही साथ पंचम-प्रतीप का उदाहरण भी उपलब्ध हो। ६

(८) भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी के साहित्यिक जीवन की आलोचना कीजिये। ६

उत्तर

साहित्य २

(१) अ यद्यपि ऐसा प्रसिद्ध है कि जो काशी में आता है, उसकी मुक्ति हो जाती है, किन्तु इस कथन के विपरीत मुझे तो यहाँ आकर भी चैन नहीं मिला। अच्छा होता, यदि भूमि फट जाती और मुझे अपने अन्तस्तल में स्थान दे देती—इस प्रकार मैं अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण न कर सकने के कारण मुख पर लगी हुई कलङ्क कारिख को तो छिपा सकता। इस प्रकार लोग मेरी ओर उँगली तो न उठाने पाते। परन्तु, छिः! छिः!! ये भी मेरे कितने घृणित विचार हैं! हा! मैंने यह न सोचा कि सूर्यवंश जैसे महान कुल में, जिसकी कीर्ति-पताका आज दिगन्त में फहरा रही है, उत्पन्न होकर यह क्या कह रहा हूँ। ब्राह्मण का दान दिये बिना, मुझे मरने का

भी तो अधिकार नहीं है। इस प्रकार ऋण का बोझ सिर पर लादे हुए मरने में बड़ा पाप है।

(आ) खेद है, आजकल लोग कविता में नीरसता की सृष्टि करते हुए भी रसिकता का अभिमान करते हैं। विचार करने पर इसी परिणाम पर पहुँचना पड़ता है कि वास्तव में वे व्याकरणादि के नियमों तक का प्रतिपालन नहीं कर सकते, परन्तु जब उनके सिद्धान्त का प्रश्न छिड़ता है, तब यही कहते हैं कि हमारा सिद्धान्त हिन्दी की उन्नति करना है। वे चारों ओर यही कहते फिरते हैं कि हम हिन्दी का उद्धार करेंगे। किन्तु, करते इसके विपरीत हैं। अर्थात् अपनी कुकविता द्वारा साहित्य की हत्या कर रहे हैं। ऐसे लोगों से ईश्वर ही बचावे।

(इ) महाराज! आप से भेंट करने के लिये आज सूर्य देवता चले आ रहे हैं। क्यों न हो, आपको तो त्रिदेव-सहित सभी देवता पूजते हैं और प्रतिक्षण आपकी पवित्र विरुदावली का गान किया करते हैं। आप आदि पुरुष हैं और आपका अन्त कभी नहीं होता। यह कोई बड़ी बात नहीं। सूर्य का आना एक साधारण-सी घटना है। लक्ष्मी भी आपकी दासी होकर सदैव सेवा में निमग्न रहती हैं।

(२) ई गद्य वह रचना है, जिसमें प्रायः मात्रा और वर्णों की गणना और क्रमादि का बंधन नहीं होता। संक्षेप में कह सकते हैं कि स्वतन्त्र वाक्यावली का नाम गद्य है।

यथा—"यह बसंत का त्रिविध समीर नहीं, किन्तु बेचारे वियोगियों का अन्त करने के लिये तीक्ष्ण तलवार-धार की बाढ़ आई है। "

हिन्दी के सबसे पहले गद्य-लेखक अब तक लल्लूजीलाल माने जाते थे; किन्तु भाषासार के सम्पादकों ने अब यह सेहरा मुं० सदासुख 'सुख सागर' के सिर पर बाँधा है। किन्तु इस सम्पादक महोदयों ने उक्त मुंशीजी का रचना-काल भ्रमोत्पादक ही रक्खा है। 'रानी केतकी की कहानी' का भी ठीक-ठीक रचना-काल नहीं बताया। अतएव जब तक इन बातों का निर्णय न हो जाय, तब तक हम अपने पूर्व विद्वानों के निर्णय के अनुसार लल्लूजीलाल को ही सर्वप्रथम गद्य-लेखक मानने के लिये मजबूर हैं।

(उ) बंधन, झंझट, झगड़ा, व्याधि। यहाँ सम्पूर्ण गृहस्थी और जीवन-सम्बन्धी कठिनाइयों से अभिप्राय है।

हाय हाय मची है—महाविरा है। चैन नहीं मिलता सुख से नहीं बैठ सकते।

सूर्यवंश में उत्पन्न होकर—उच्च और यशस्वी परिवार में पैदा होकर।

पृथ्वी—भूमि। राजापृथु के सम्बन्ध से इसका नाम पृथ्वी हुआ।

रसमर्दन—रस (काव्य-सम्बन्धी नवरस) मर्दन करना—दलित करना। अर्थात् ऐसी रचना करना

जिसमें रस का उत्कर्ष और सहायक भावों का सर्वथा अभाव हो।

डींग मारना—बढ़-बढ़कर बातें बनाना, शेख़ी मारना।

साहित्य के गले पर अकविता की छुरी फेरना—नीरस कविता करके साहित्य को नष्ट करना।

(ऊ) प्रथम प्रश्न का 'इ' खण्ड ब्रज-भाषा मिश्रित खड़ी बोली में लिखा गया है और आजकल का गद्य विशुद्ध खड़ीबोली में लिखा जाता है।

क्रिया	वर्तमान रूप
ध्यावते हैं	ध्यान करते हैं
सेवती हैं	सेती हैं, सेवा करती हैं
गावते हैं	गाते हैं

(३) ए स्वाभिमानी हरिश्चन्द्र, स्त्री-पुत्र-सहित, बिककर दासत्व जैसे निकृष्ट कार्य को भी स्वीकार कर लेगा, किन्तु अपने प्रण को भंग करे, यह तो नितान्त असम्भव है।

(ऐ) दुष्ट शिशुमार अपने कुल का घालक है। उसने देश को निर्जन बना दिया। उसके बराबर युद्ध करते रहने के कारण योद्धा लोग वीरगति को प्राप्त होगये और वीरों का नाम तक शेष न रहा।

(४) ओ 'अङ्क' में आवश्यक घटनाओं और अधिक दर्शनीय दृश्यों का वर्णन होता है और गर्भाङ्क में

अनावश्यक किन्तु प्रसङ्ग में आनेवाली बातों का सूक्ष्मतया दिग्दर्शन कराया जाता है। यही इन दोनों में अन्तर है।

"सत्य-हरिश्चन्द्र नाटक" में कुल चार अङ्क हैं और दूसरे तथा तीसरे अङ्कों के मध्य में एक गर्भाङ्क भी है।

(ओ) इन तीनों पात्रों का चरित्राङ्कण पहले हो चुका है।

(५) अ. देह दारा सुअन—देह, दारा और सुवन। द्वंद्व समास।

निज बच—निज के बचन—षष्ठीतत्पुरुष समास।

अभिमानी हरिचन्द—अभिमानी ही हरिश्चन्द्र—कर्मधारय समास।

सठ-सिसुमार—सठ ही सिसुमार—कर्मधारय समास।

निजवच—सम्बन्धकारक। हरिश्चंद्र—कर्त्ता कारक। मही—कर्म कारक। सुभटसमूह—सम्बन्ध कारक।

(अः) कर्तृ-प्रधान क्रियाओं के लिङ्ग बचन कर्ता के लिङ्ग वचन अनुसार होते हैं, और कर्मप्रधान क्रियाओं के लिङ्ग वचन कर्म के अनुसार। यथाः—

लड़का किताब पढ़ता है, लड़का किताबें पढ़ता है। यहाँ कर्त्ता के अनुसार ही क्रियाओं का रूप बदला है, अतएव क्रिया कर्तृप्रधान है। सोहन ने किताब पढ़ी—सोहन ने किताबें पढ़ीं। यहाँ क्रियाओं का रूप कर्म के अनुसार बदला है, अतएव क्रिया कर्मप्रधान है।

(६) क. १. अपने आप आफ़त में पड़ना—कंस ने कृष्ण के साथ छेड़छाड़ करके "आ बैल मुझे मार" वाली कहावत चरितार्थ की।

२. नाम बहुत करनी कुछ नहीं।" चलो रहने भी दो, बस देख लिया। "ऊंची दूकान फीका पकवान"। इसी पर अपने पुस्तकालय की बड़ाई करते थे, जिसमें एक रामायण तक नहीं !

३. नीच कार्य में बदनामी होती है। मोहन आचरण-भ्रष्ट नहीं था। उसे केवल संगति ने बदनाम किया। "कोइले की दलाली में काले हाथ" होते ही हैं।

ख. शैव्या—(ऊपर देखकर) क्या कहा—"इतने मोल पर कौन लेगा ?" आर्य ! कोई साधु-ब्राह्मण-महात्मा कृपाकर लेही लेंगे।

(७) ग. १. यहाँ वस्तूत्प्रेक्षा अलङ्कार है; क्योंकि यहाँ एक वस्तु (नायिका) में दूसरी वस्तु (रमा) को सम्भावना की गई है।

२. इसमें पूर्णोपमा अलंकार है। जलधार उपमेय; हीरक उपमान, सी वाचक; और सोहति साधारण धर्म हैं।

३. यहाँ यमक अलंकार है। क्योंकि "घनश्याम" शब्द दो भिन्न-भिन्न अर्थों में दो स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है।

४. यहाँ अंजन की कालिमा (सच्ची बात) को छिपाकर, अन्य बात प्रेमियों की पुतरियों की

श्यामता कही गई है। अतएव शुद्धापह्नुति अलंकार है।

(ङ) व्रषभानुदुलारी राधाजी के चन्द्रमुख से चहुँ ओर सुधावर्षण हो ही रहा है। वह नेत्रों के ताप को सर्वथैव दूर भी करती हैं, फिर सृष्टिकर्त्ता ने ने यह चारुचन्द्रिकायुक्त चन्द्रमा बनाने का व्यर्थ श्रम क्यों किया ?

(८) भारतेन्दुजी की जीवनी हम पहले लिख चुके हैं। उसी के साथ उनकी सूक्ष्म साहित्यिक जीवनी का भी आभास मिलेगा।

साहित्य ३

समय ३ घण्टे

(१) नीचे लिखे हुए विषयों में से किसी एक पर कम से कम ५० पंक्तियों का निबन्ध लिखने के पहले जिस विषय पर आप निबन्ध लिखना चाहते हों उसका एक ढाँचा बनाइये और उसी ढाँचे को आधार बनाकर निबन्ध लिखिये। ३

१. निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नतिकर मूल।
२. रेल द्वारा की हुई किसी यात्रा का वर्णन।
३. प्रेम की उपयोगिता।
४. गोस्वामी तुलसीदासजी की रामायण।

(२) अपने एक मित्र को एक पत्र लिखकर अपने बड़े भाई के विवाह में नहीं बुलाने का उसे उलहना दीजिये। १०

[अथवा]

अपनी आँखों देखी किसी घटना को किसी पत्र-सम्पादक के पास प्रकाशनार्थ लिखिये।

(३) किसी नगर के एक मुहल्ले में दो लड़के शारदा और शिशिर का रहना—एक ही स्कूल में पढ़ना—उस स्कूल में बालचर संस्था का खोला जाना—शिशिर का बालचर संस्था में सम्मिलित होना—शारदा का स्वयं शामिल न होना और इसकेलिए शिशिर की मज़ाक उड़ाना—कुछ महीने में शिशिर का बालचर-शिक्षा में दक्ष होना—एक दिन उनके मुहल्ले में आग लगना—शिशिर का सेवाभाव से प्रेरित होकर आग बुझाने और लोगों की रक्षा करने में लग जाना—एक घर में एक बूढ़ी के जलने की बात सुनकर शिशिर का जान पर खेलकर उसके जलते हुए मकान में घुसना और उसे निकाल लाना—शारदा का स्वयं सेवा-कार्य में दक्ष न होने के कारण खड़ा खड़ा तमाशा देखना और भाग न लेने के कारण पश्चात्ताप करना—सारे मुहल्ले में शिशिर की प्रशंसा होना शारदा पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ना—अन्त में उसका भी बालचर-संस्था में सम्मिलित हो जाना—

उपर्युक्त कथानक को आधार बनाकर एक छोटी कहानी कम से कम दो पृष्ठों में लिखिये— २०

नीचे लिखे वाक्यों का विश्लेषण कीजिये। ६

गोस्वामीजी के समान भक्त सूरदास ने भी ब्रह्म के उसी अनुपम अलौकिक रूप को बालकृष्ण में देखा था।

(५) अधोलिखित वाक्यों में आवश्यकतानुसार चिन्हों का प्रयोग कीजिये। ४

भगवति वसुन्धरे दो टूक हो जाओ ब्राह्मण जड़ तुल्य खड़ा हुआ और क्या देख रहा है संसार तेरी हँसी करता है ऐश्वर्य्य वालों के द्वारों पर भिक्षा मांगते हुए तुझे लज्जा नहीं आती यदि शक्ति हो तो उठ कपिल के तेज की अग्नि वर्षा करके नीच का घमंड चूर कर दे।

(६) नीचे लिखे मुहाविरों का अर्थ लिखिये और वाक्यों में इनका प्रयोग दिखलाइये— १०

जी चुराना, जी लगाना, आँख दिखाना, आँख चुराना, आँख लगना, आँख मींचना, ख़ाक उड़ाना, ख़ाक में मिलना, और ख़ाक छानना।

(७) निम्नलिखित प्रत्येक शब्द-युगल में परस्पर क्या भेद है. अर्थ लिखकर समझाइये—

कुल—कूल, नोड़—नीर, प्रकृत—प्राकृत, प्रिय—प्रिये, कृत—क्रीत, बलि—बली, लक्ष—लक्ष्य, सुर—सूर, शङ्कर—सङ्कर, और अनु—अनु।

(८) नीचे लिखे वाक्य-समूह को एक वाक्य में लिखिये- ५

रामायण हिन्दी-साहित्य का एक महाकाव्य है। गोस्वामी तुलसीदासजी इसके रचयिता हैं। उन्होंने इस काव्य को लिखकर हिन्दी-साहित्य में युगान्तर उपस्थित कर दिया है।

प्रबन्ध-रचना

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में साहित्य विषय के तीन प्रश्न-पत्र होते हैं। उनमें से, संवत् १९७१ वि० संवत् १९८५ वि० तक के, गद्य और पद्य—दो विषयों के सभी प्राप्य प्रश्न-पत्रों के उत्तर हम लिख चुके हैं। शेष तीसरा विषय निबन्ध का है। हम उसके प्रश्न-पत्रों के भी उत्तर लिखते; किन्तु ऐसा करने में इस पुस्तक का आकार इतना बढ़ जाता कि वह पाठकों पर एक बोझ हो जाता। निबन्ध के प्रश्न-पत्र में प्राय: ३-४ विषय दिये जाते हैं। यदि प्रत्येक विषय के निबन्ध पर दस पृष्ठ भी लिखे जाते, तो यह पुस्तक लगभग ७०० पृष्ठों की होती, इसीलिए हमने इस विषय को छोड़ देना ही उचित समझा। प्रश्न-पत्रों के उत्तर देने से परीक्षार्थियों के सामने एक प्रशस्त मार्ग खुल जाय और उत्तर लिखने का एक अच्छा ढँग उनके सामने आजाय, हमने यही सोचकर अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार यह उत्तर-पुस्तक तैयार कर दी है। नीचे हम अपने परीक्षार्थियों के लाभार्थ कुछ ऐसी बातों का भी उल्लेख किये देते हैं, जिनसे उन्हें निबन्ध लिखने में भी कुछ सहायता प्राप्त होगी:—

१. निबन्ध के प्रश्न-पत्रों में बहुधा परीक्षक कई निबन्धों की एक सूची देकर उनमें से किसी एक को लिखने का आदेश देते हैं। अतएव परीक्षार्थियों को अपने इस प्राप्त अधिकार का उपयोग स्वतन्त्रता से करना चाहिये। अर्थात् प्रश्न-पत्र के हाथ में आते ही उन्हें यह विचारना चाहिये कि वे उल्लिखित विषयों में से कौन से विषय पर अच्छे से अच्छे और अधिक से अधिक विचार प्रकट कर सकते हैं।

२. इस प्रकार निबन्ध-निर्वाचन के पश्चात् परीक्षार्थियों का कर्त्तव्य है कि वे यह विचार करें कि जिस विषय का निबन्ध उन्होंने पसन्द किया है, उस विषय में उन्हें कितनी योग्यता है; उस विषय में उनका क्या अनुभव है; और वे कहाँ तक उस पर प्रकाश डाल सकते हैं।

३. इतना विचार लेने के पश्चात् विषय-भेद निश्चित करके परीक्षार्थियों को एक ढाँचा बना लेना चाहिये, जिसमें निबन्ध के सम्बन्ध की प्रायः उन सभी बातों का मोटी तौर पर उल्लेख हो जाय, जिनका समावेश वे प्रस्तुत निबन्ध में करना चाहते हैं।

विषयों के साधारणतया ये चार भेद हैं—

१. कथात्मक निबन्ध वे हैं जिनमें किसी कथा का उल्लेख हो। यह कथायें या तो किसी घटना-विशेष से सम्बन्ध रखती हैं या किसी व्यक्ति के जीवनचरित्र के रूप में होती हैं। यथा—पानीपत

की लड़ाई, शिवाजी का औरंगज़ेब से छुटकारा तथा भोज का सपना, आदि।

२. वर्णनात्मक निबन्ध वह हैं, जिनमें प्राकृतिक पदार्थों का यथातथ्य निरूपण किया जाय। ये पदार्थ आँखों देखे, कानों सुने, अथवा और किसी प्रकार से जाने हुए होते हैं। यथा—आगरे का क़िला, किसी वाटिका की शोभा आदि।

३. व्याख्यात्मक निबन्धों में व्यापक अथवा अमूर्त विषय की व्याख्या होती है। यथा—चिन्ता, दया तथा भूकम्प आदि।

४. तार्किक निबन्ध वे हैं जिनमें किसी सिद्धान्त के सत्यासत्य का निर्णय तर्कद्वारा किया जाय। यथा—क्या ईश्वर सृष्टिकर्त्ता है? क्या माँस मनुष्य का भोजन है? प्रजातंत्र-राज्य के गुण-दोष, आदि।*

(अ) ढाँचा बनाने से पूर्व यह देख लेना चाहिये कि वह निबन्ध उपर्युक्त चारों भेदों में से किस भेद में आता है।

(ब) ढाँचा बनाते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिये।

१. पहले उन सभी बातों को, जो आप निबन्ध के सम्बन्ध में जानते हैं, एक काग़ज़ पर नोट करलें।

२. पुनः उस सामग्री का संगठन इस प्रकार करें कि लेख का प्रत्येक अङ्ग परस्पर इस प्रकार संगठित

---

*उपर्युक्त चारों विषयों में से कभी-कभी दो या अधिक विषय परस्पर मिल भी जाते हैं।

हो जाय कि एक के बिना दूसरे का अस्तित्व ही न रह सके। इन अङ्गों को एक-दूसरे के पश्चात् स्वाभाविक क्रम में रख लेना चाहिए। जिन अङ्गों का निकट का सम्बन्ध हो उन्हें निकट और जिनका दूर का सम्बन्ध हो उन्हें दूर रखना चाहिये।

३. इस प्रकार क्रम निश्चित हो जाने के अनन्तर जो समुदाय बनें उनको परस्पर मिलानेवाला एक खास सिद्धान्त खोजना चाहिए। जब सिद्धान्त निश्चित हो जाय और समुदाय बन जायँ, तब उनमें से प्रत्येक समुदाय को पृथक्-पृथक् एक स्वतन्त्र निबन्ध मानकर लेख बद्ध करने में सरलता होगी।

(स) व्याख्यात्मक और तार्किक निबन्धों का ढाँचा इन तीन बड़े-बड़े भागों में विभाजित हो सकता है— (१) भूमिका या प्रस्तावना, (२) विषय का विकास या विस्तार और (३) परिणाम या समाप्ति।

(द) प्रत्येक वस्तु के सम्बन्ध में मोटे-मोटे तीन शीर्षक दिखावट, गुण और उपयोग के होते हैं। इसी प्रकार यदि जीव पर लिखना हो तो जीव के भेद, उसके आकार, बनावट, स्वभाव, भोजन और उसके रहने का स्थान लिखना चाहिये।

४. जब प्रबन्ध की सूची या ढाँचा बन जाय तब निबन्ध लिखने के लिये जो समय निश्चित हो उस पर तथा निबन्ध के परिणाम पर दृष्टि डालनी चाहिये। अर्थात् यह समझ लेना चाहिये कि हमको कितनी देर में कितना बड़ा निबन्ध लिखना है।

इस प्रकार समय का विभाजन करके प्रत्येक शीर्ष लेख का परिणाम निश्चित कर लेने पर बहुत सुविधा हो जाती है। जिस शीर्ष लेख द्वारा अधिक प्रभाव डाला जा सकता है, उसके लिये अधिक समय और अधिक स्थान देना चाहिये और जिनका प्रभाव कम पड़े और प्रसङ्ग में उनका लाना आवश्यक हो, उनका वर्णन सूक्ष्मतया कम समय में कर देना चाहिये।

५· लेख आरम्भ करने के पश्चात् क्रमशः प्रत्येक उपशीर्षक का विस्तार करना चाहिये। ये उपशीर्षक पैराग्राफ़ों में विभाजित होते हैं। किसी विषय पर तोते की तरह टें-टें करते जाना ठीक नहीं। इससे पाठक का जी ऊब जाता है। इसीलिये पैराग्राफ़ों में विभाजित करके एक-एक बात को स्वाभाविक रीति से दूसरी के साथ सम्बद्ध कर देना उत्तम होता है। ऐसा करने से बीच में कोई कमी नहीं रहती।

६. जब लेख समाप्त करने लगें, तो उसको यों ही मत छोड़ दें, किन्तु उसमें संक्षेप से निबन्ध का सार बता दें। उससे कुछ उपदेश मिलता हो तो उसे दिखा दें और यदि अन्य कोई अप्रत्यक्ष परिणाम झलकता हो तो उसे भी स्पष्ट कर दें।

७. लेख को पूरा करने के पश्चात् एक बार फिर पढ़ जायँ। यदि उसमें कोई शब्द छूट गये हों, मात्रादि में अशुद्धि हुई हो तो उन्हें सुधार दें।

निबन्ध के सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य अन्य बातें।

१. यदि आप चाहते हों कि आपका निबन्ध दोष-रहित हो तो उसमें अशुद्ध-पद और कुप्रयोगों को कदापि न आने दें। जो शब्द प्रयोग में आयें वे अश्लील न हों और उनमें प्रचलित शब्दों का ही व्यवहार किया जाय। अत्यन्त क्लिष्ट शब्दों और भावों को यथावत् प्रकाशित न करनेवाले पदों को लेख में स्थान न देना चाहिये। इसलिये—जो, किन्तु आदि शब्दों का बार-बार प्रयोग न किया जाय। लम्बे-लम्बे समासों के प्रयोग से बचा जाय, एक ही भाव को बार-बार न दुहराया जाय और भाषा को आवश्यकता से अधिक जटिल और आलंकारिक न बनाया जाय।

२. वाक्य-रचना करते समय तीन बातों का ध्यान रखना चाहिये—स्पष्ट सम्बन्ध, निर्दोष संगठन और शुद्ध व्याकरण। अर्थात्, प्रत्येक पैराग्राफ़ का पहला वाक्य ऐसा होना चाहिये कि वह पिछले पैराग्राफ़ के सम्बन्ध को बराबर स्थिर रक्खे। यह सम्बन्ध कहीं तो परन्तु, लेकिन, अतएव तथा सारांश आदि शब्दों के द्वारा स्थिर रहता है और कहीं शब्दों तथा उक्तियों के दोहराने से स्थिर रहता है। इसके अतिरिक्त लिङ्ग, वचनादि व्याकरण-सम्बन्धी बातों और पद-योजना के लालित्य की ओर भी विशेष ध्यान रखना चाहिए।

३. जो शब्द प्रयोग में लाये जायँ वे ऐसे हों कि लेखक के भावों को ज्यों का त्यों प्रकाशित कर सकें। शब्दों का यह गुण सत्यता कहलाता है। दूसरा गुण व्यंजकता है। इसका अभिप्राय है, किसी साधारण बोलचाल के शब्द का व्यवहार नवीन ढङ्ग से इस प्रकार किया जाय कि उससे एक विशेष प्रकार का आनन्द आने लगे। इस गुण को लाने के लिये विशेष भावबोधक शब्दों का प्रयोग किया जाना चाहिये। यथा:—राम आँसू बहा रहे हैं। यहाँ बहाना एक साधारण क्रिया है, किन्तु वियोगी राम को सीता के वियोग से संतप्त देखकर बन के पशु-पक्षी भी आँसू बहा रहे थे। यहाँ उसी क्रिया में व्यंजकता आगई। इन दोनों गुणों के अतिरिक्त एक तीसरा गुण औचित्य का भी है। इसका अर्थ है शब्दों का उचित व्यवहार, अर्थात् समाज के शिक्षितों ने जिस शब्द को जिस अर्थ में लिया है, उसी में उसका प्रयोग करना, न कि उसको बिगाड़कर किसी दूसरे अर्थ में।

४. निबन्ध लिखते समय विराम, अर्द्धविराम, पूर्णविराम, उद्धरण, प्रश्नबोधक एवम् आश्चर्य-बोधक आदि लेख-चिन्हों का उचित प्रयोग करना भी परमोपयोगी है। क्योंकि इनके द्वारा विचारों का पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है और लेखक उनमें स्वेच्छानुकूल बल भर सकता है।

निबन्धभेद पर साधारण सम्मतियाँ

१. कथात्मक निबन्धों को आरम्भ करने से पूर्व लेखक को सोचना चाहिये कि घटनाक्रम किस प्रकार का रहे; कौन सी घटनाओं का समावेश कथा में रहेगा, उनमें पात्रों का समावेश कैसे किया जायगा और कथा की स्थापना का परिचय कैसे देना होगा। घटना-क्रम में ऐसी विशेषता रखनी चाहये जिससे पाठकों का चित्त उसकी ओर तुरन्त आकर्षित हो जाय। अपनी कथा का फल पहले ही से न बतला देना चाहिये वरन् बीच का मार्ग पकड़ना चाहिये। कथाएँ इस प्रकार वर्णन की जायँ कि जब तक पाठक उनको साद्यंत पढ़ न जायँ, उनकी उत्सुकता कम न होने पाये। कथाओं में वर्णित घटनाओं में स्वाभाविकता और चित्ताकर्षकता का गुण होना चाहिये। कथा में जिन पात्रों का वर्णन हो, उनके चरित्राङ्कण आदि में स्वाभाविकता का ध्यान रखना चाहिये। पुनः कथा की रोचकता बढ़ाने के लिये स्थान-वर्णन सम्बन्धी आवश्यक विवरण देना भी आवश्यक है।

२. वर्णात्मक निबन्ध में किसी गोचर पदार्थ का वर्णन होता है। सच्चा वर्णन वह कहलाता है जो केवल वस्तु का चित्र ही न खींचे, प्रत्युत चैतन्य करनेवाले संस्कारों की जागृति भी उत्पन्न कर दे। वर्णन में प्रभाव भरने के लिये इन्द्रियों का संचालन मुख्य-साधन है। शब्दाडम्बर यथार्थ चित्र

नहीं, अतएव इसकी आवश्यकता भी नहीं है। वर्णन करते हुए ध्यान रखना चाहिये कि विशेष संज्ञा-बोधक शब्दों से स्मृति द्वारा मानसिक कल्पना का उत्तेजन हो जाय। अपनी एक निश्चित दृष्टि रक्खी जाय, जब अपना पक्ष बदले तब उसकी सूचना पाठकों को दी जाय, कथा द्वारा वर्णन-शैली की सयहता की जाय। अपने विस्तृत ब्योरे को स्थान के क्रमानुसार रखना चाहिये और जहाँ तक हो सके, वृत्तान्त कहने में संक्षिप्त हों।

(३ क ४.) व्याख्यात्मक तथा तार्किक निबन्धों के विषय में हम पहले लिख चुके हैं कि उनका ढाँचा तीन मुख्य भागों में बँट सकता है। उनको भूमिका, विकास और परिणाम कहते हैं। अब हम इन्हीं तीनों का संक्षिप्त वर्णन करते हैं।

१. भूमिका में निबन्ध-सम्बन्धी सिद्धान्त का स्पष्ट और उदार विज्ञापन होना चाहिये। उसमें लेखन-शैली का ढँग बतला देना भी उचित है। निबन्ध की भूमिका लेख के अनुरूप ही होनी चाहिये। छोटे निबन्ध की विस्तृत भूमिका ठीक नहीं होती। प्रस्तावना के शब्द आकर्षक होने चाहिये और निबन्ध के शीर्षक को वाक्य का रूप देकर लेख आरम्भ करना चाहिये। विषय से दूर हटकर लम्बी चौड़ी भूमिका न देनी चाहिये। भूमिका किसी कथा द्वारा, जो विषय के स्पष्ट करने में सहायता दे, आरम्भ करनी चाहिये। विषय में सीधा प्रवेश करने की शैली सर्वोत्तम है।

२. विषय का विकास—लेखक को सदैव अपने विषय के अन्दर ही रहना चाहिये। लेख में ध्वनि का सादृश्य होना भी आवश्यक है। यदि लेख तार्किक है तो उसमें क्रमानुसार सब बातों को तर्क से सिद्ध करना चाहिये। यदि लेख व्याख्यात्मक है तो उसका ताल वही रहे, व्याख्या का क्रम न टूटने पाये। जैसा विषय हो और जिस योग्यता के पाठकों के लिये वह लिखा जाय, उसी के अनुसार लेख में बराबर ध्वनि रहनी चाहिये। विषय के विकास में उसके भागों के विस्तार पर भी पूर्ण ध्यान रक्खा जाय, कोई अंश घटने-बढ़ने न पाये। विषय का सर्वाङ्गपूर्ण विकास हो तभी उनमें सुन्दरता आ सकती है।

३. लेख के अन्त में योग्यता-पूर्वक उसका उचित परिणाम निकलवाना चाहिये। यदि कोई उपदेश निकलता हो तो उसे उचित शब्दों में अङ्कित कर दिया जाय। कभी-कभी लेखक भूमिका को छूते हुए अन्तिम निचोड़-सम्बन्धी शीर्षक को लिखकर विषय को समाप्त कर देते हैं। यह भी उत्तम ढंग है।

उत्कृष्ट लेखन-शैली के गुण

उत्कृष्ट लेखन-शैली में इन तीन प्रधान गुणों की आवश्यकता है—

१. स्पष्टता—यह गुण लाने के लिये लेखकों को चाहिये कि वे सदैव अपने पाठकों की योग्यता को

विचारकर यह निश्चित करलें कि वे कितना जानते हैं। इसके पश्चात् जो वे नहीं जानते, उसकी ओर उन्हें ले जाने का यत्न करना चाहिए। पाठकों को कथा वार्तादि उचित साधनों द्वारा एक-एक पग आगे बढ़ना चाहिये। लेख को जटिल पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग से बचाकर उनमें निरर्थक और भ्रममूलक वचनों का प्रवेश न होने दें। यदि चाहते हैं कि हमारे लेख में उपर्युक्त गुण रहे तो उसके दो या से अधिक भावों में से किसी एक में व्यवहृत होने वाले शब्दों को न आने दें। दो या दो से अधिक अर्थवाले शब्दों का प्रयोग अनुचित है। इसी प्रकार जिन शब्दों के ठीक-ठीक अर्थों को, काफ़ी स्पष्टता न होने के कारण पाठक न समझ सकें, उनका व्यवहार भी न करना चाहिये। जिनमें उपर्युक्त गुण विद्यमान होते हैं वही लेख प्रौढ़ कहलाते हैं।

२. लेखन-शैली का दूसरा गुण ओज है। यह गुण लाने के लिये लेखकों को निरन्तर अभ्यास करने की टेव डालनी चाहिये। साधारणतया लेख में ओज लाने के लिये गौरव या पराकाष्ठा और अलंकार प्रयोग इन दो गुणों का होना आवश्यक है। गौरव का अर्थ, सामग्री का क्रमानुसार संगठन करना है। इससे लेखन-शैली में काफ़ी ओज आ जाता है। अलंकार—उपमा, रुपकादि जिस प्रकार कविता का उत्कर्ष बढ़ाने में सहायक होते हैं, उसी प्रकार वे गद्य को भी प्रभावशाली बना देते हैं; किन्तु अलंकार-प्रयोग में, इस बात का ध्यान रखना

चाहिये कि वे आवश्यकतानुसार विषय के अनुकूल ही हों।

३. लेखनशैली का तीसरा प्रधान गुण लालित्य है। लालित्य में सबसे पहली चीज़ बाह्य आवरण है। इसका अर्थ है सदैव सावधानी से स्पष्ट, शुद्ध तथा सुन्दर लिखने की टेंव। इसके अतिरिक्त लेखक को लेख के निष्कर्ष का विशेष ध्यान रखकर सदैव उसके अनुकूल लिखने की चेष्टा करनी चाहिये। लेखन-शैली का भद्दापन, उसकी कर्कशता और उसकी वीभत्सता, ये दोष लेखक की विचार-सामग्री का स्वरूप बदल देते हैं, और उसका भाव प्रकट करने में बाधक होते हैं, इनको अभ्यास द्वारा दूर भगाया जाय। हिन्दी के सिद्धहस्त कवि तथा लेखकों की रचनाओं के पढ़ने से यह गुण आना बहुत सहज है। अतएव उत्कृष्ट लेखक बननेवालों के गद्य तथा पद्य सम्बन्धी सुन्दर रचनाओं का अनुशीलन अवश्य करना चाहिये। इससे उन्हें शब्दों की ध्वनि, उनकी ताल और उनकी तुल्यता की महत्ता का परिज्ञान हो जायगा और लेखन-शैली के उत्कृष्ट गुण धारा-प्रवाह की प्राप्ति में कुछ भी संशय न रहेगा।

ऊपर हमने जो बातें प्रबन्ध-रचना के सम्बन्ध में, लिखी हैं वह स्थानाभाव के कारण बहुत ही संक्षेप में हैं। उनसे चतुर पाठक थोड़ा बहुत लाभ अवश्य उठा सकते हैं। इस विषय को अच्छी प्रकार मनन करनेवाले सज्जनों को चाहिये कि वे स्वामी

सत्यदेवजी के 'लेखन कला' अथवा पं० रामरत्नजी अध्यापक के 'रचना-प्रबोध'' नामक ग्रंथों से सहायता लें। उक्त ग्रंथों में इस विषय का अच्छा विवेचन किया गया है।

—सम्पादक

उपन्यास-रत्न-माला

सुन्दर मौलिक औपन्यासिक साहित्य प्रकाशित करके हिन्दी साहित्य के एक अभाव की पूर्ति करने के उद्देश्य से इसका जन्म हुआ है।

प्रथम रत्न

मीठी चुटकी

[लेखक– "त्रिमूर्ति" अर्थात् पंडित भगवतीप्रसाद वाजपेयी श्री "वर्म्मा" तथा बाबू शम्भूदयाल सकसेना, साहित्यरत्न]

अब तक ऐसा सुन्दर और सरस उपन्यास आपने शायद ही पढ़ा हो। देखिये, इसके विषय में पत्र-पत्रिकाओं तथा विद्वानों की सम्मतियाँ कैसी अच्छी हैं! हिन्दी में अभी तक ऐसी प्रशंसा किसी उपन्यास की नहीं हुई है। देखिये—

माधुरी—यह उपन्यास सुःखान्त है। लिखने का ढँग बड़ा अच्छा है। कहानी का विकास सरल और स्वाभाविक है। पुस्तक प्रारम्भ करके यही जी चाहता है कि समाप्त करके ही बन्द करें।

महारथी—तीन-तीन साहित्य-वीरों का मिलकर इस प्रकार के सरस और सामाजिक क्रान्तिकारी उपन्यास लिखने का प्रयत्न हिन्दी-साहित्य के लिए गौरव का विषय है।

प्रताप—अच्छा लिखा गया है। मुझे बहुत पसन्द आया।

मैं ललित साहित्य-प्रेमियों से अनुरोध करता हूँ कि वे इसे पढ़ें और आनन्दान्वित हों।

आर्यमित्र—मीठीचुटकी में मौलिकता है, नवीनता है और साथ ही इसमें विशेषता इस बात की है कि यह तीन लेखकों के सम्मिलित प्रयत्न का सुफल है। कथानक अपने ढँग का अनूठा है। भाषा सरस और सजीव है। प्रेमचर्चा सुरुचिपूर्ण है। इस प्रकार की सुन्दर और मौलिक कृति से हिन्दी-साहित्य-मन्दिर की शोभा बढ़ाने के लिए उनका प्रयत्न स्तुत्य है।

विश्वमित्र—चरित्र-चित्रण निर्दोष एवं उपदेशमय है। ऐसे उपन्यासों से हिन्दी-साहित्य का गौरव बढ़ता एवं पाठकों में सुरुचि का संचार होता है।

कर्मवीर—पुस्तक का कथानक सामयिक है। यह उपन्यास नवीन और प्राचीन का अच्छा संयोग दिखाता है। पुस्तक की भाषा और वर्णनशैली मार्जित और शृंखलाबद्ध है। पात्रों का चरित्र-चित्रण स्वाभाविक और धारावाहिक रूप में किया गया है।

स्वदेश—स्त्री-स्वातंत्र्य तथा स्त्री-कर्तव्य के प्राचीन और नवीन आदर्शों का निरूपण करते हुए लेखकों ने आधुनिक समाज की मनोवृत्ति का खूब विश्लेषण किया है। मनोरंजक, शिक्षाप्रद और सुरुचिपूर्ण है।

साहित्याचार्य्य पण्डित पद्मसिंहजी शर्म्मा—कहानी मनोरंजक और शिक्षाप्रद है। वर्णन में धाराबाहिता है। भाषा सुन्दर और भाव भव्य हैं। पुरुष-निरपेक्ष पूर्ण स्त्री-स्वातन्त्र्य के के प्रबल पक्षपाती महापुरुष इसे पढ़कर खासी 'इबरत' हासिल कर सकते हैं। देवियाँ भी अपने विचारों को दिव्य बना सकती हैं।

स्त्री-सुधार और स्वातन्त्र्य-प्रसार के परदे में अनीति और अनाचार का प्रचार करनेवाले पाखंडियों की पोल "मीठी चुटकी" में जी खोलकर खोली गयी है। ऐसे प्रसंग में "मीठी चुटकी" बगलीघूँसा या बघनखा बन गई है। स्त्री-स्वातन्त्र्य का समर्थन वहाँ तक किया गया है जहाँ तक—

"'उनसे बीबी ने फ़कत स्कूल ही की बात की,
यह न बतलाया कहाँ रक्खी है रोटी रात की॥

की नौबत न पहुँचने पावे। जोश में होश को हाथ से नहीं जाने दिया गया है। अर्थात् नये और पुराने विचारों के समन्वय की यथाशक्ति चेष्टा की गई है।

पात्रों के चरित्र-चित्रणमें एकरूपता नहीं आने पायी। यद्यपि भाषा, सब की एक है, पर भाव भिन्न हैं। सौदामिनी के प्रचण्ड चरित्र की चञ्चलता चकाचौंध पैदा कर देती है। पुस्तक सामयिक है। बहुत अच्छी है, पठनीय है।

सुप्रसिद्ध कहानीलेखक श्रीसुदर्शन—बहुत बढ़िया उपन्यास है। लिखने की शैली अत्युत्तम है और पूर्णरूप से स्वाभाविक है। हिन्दी-संसार को इस समय ऐसे ही साहित्य की आवश्यकता है।

प्रसिद्ध गाल्पिक श्री पं० विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक—उपन्यास का विषय अच्छा है। इससे उन स्त्रियों को अच्छा पाठ मिलता है जो बिना समझे-बूझे और परिणाम पर विचार किये स्वतंत्रता प्राप्त करने की इच्छुक रहती हैं। इस युग में, जब कि प्रत्येक अर्द्ध शिक्षित स्त्री स्वतंत्र होने के लिए अधीर रहती है, यह उपन्यास अच्छा पथ-प्रदर्शक हो सकता है।

कागज़, छपाई, जिल्द बहुत सुन्दर, मूल्य १॥)

मैनेजर, साहित्य-मन्दिर, दारागंज, प्रयाग।

दूसरा रत्न

मुसकान

[ले०—पं० भगवतीप्रसाद वाजपेयी]

यह उपन्यास कैसा है, इस विषय में देखिये विद्वानों की सम्मतियाँ

साहित्याचार्य्य पं० चन्द्रशेखरजी शास्त्री

"इस पुस्तक में एक मधुर कल्पना के सहारे जो चित्र हमारे सामने खड़ा होता है, वह है सूत्र; उसे जीवन-सूत्र भी कहा जा सकता है। विजय ललिता के प्राण बचाते हैं; एलिस विजय को बचाने के लिए कालापानी जाती है और ललिता फाँसी पर चढ़कर एलिस को छुड़ाती है। कितना ऊँचा यह प्रतिदान है। यही तो हम इस समय अपने समाज में देखना चाहते हैं।

मैं अपने मित्र वाजपेयीजी की, इस सुन्दर कल्पना के लिए और उसको साङ्गोपाङ्ग ठीक उतार देने के लिए, प्रशंसा करता हूँ।"

यशस्वी कहानी-लेखक श्री सुदर्शन

मुसकान नामी उपन्यास देखा; बहुत अच्छा है। भाषा, भाव और चित्रण तीनों प्रशंसनीय हैं। अच्छी कहानी का यह सब से बड़ा गुण है कि वह कहानी मालूम न हो। ऐसा मालूम हो, जैसे कोई सच्ची घटना है,—बनावट की गन्ध भी न हो। इस पुस्तक में यह बात पूर्ण रूप से विद्यमान है।

सुप्रसिद्ध लेखक पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी

"मुसकान" उपन्यास मैंने पढ़ा। ऐसा मनोहर और प्रभावशाली, हृदय पर सदा के लिए एक चोट छोड़ जाने वाला उपन्यास हमने अब तक नहीं पढ़ा था।

इलाहाबाद-यूनिवर्सिटी के हिन्दी-लेक्चरर पं० लालताप्रसादजी सुकुल, एम्० ए०

"मुसकान" कुछ इतनी मीठी लगी कि पढ़ता ही चला गया। इसने अपने ढँग के सभी मज़े दिखाये! समाज के एक पार्श्व को लेकर आपने मानव-चरित्र का बड़ा अच्छा अध्ययन किया है। सच बात तो यह है कि मनुष्य न सर्वथा बुरा है, और न पूर्णतया अच्छा। और सौभाग्यवश आपने भी उसे केवल अच्छाई या बुराई का ही पुतला नहीं बनाया है। मनुष्य की कमज़ोरी कितनी ज़ोरदार तथा कितनी (argumentative) हो सकती है, इसका चित्रण "हृदय के मचलने" में आपने ख़ूब ही किया है। यदि एक ओर आपने मानव प्रकृति की निम्न-गामिनी गति का तमाशा दिखाया है तो दूसरी ओर ललिता के आत्मोत्सर्ग में उसकी ऊर्ध्वगामिनी प्रकृति का चित्रण भी सराहनीय है।